पुराणों में
ऐतिहासिक परिवर्तयुग

[प्राग्महाभारतकालीन गणना का मूलाधार]

New Discovery of Historical Parivart Age

इतिहासविद्याप्रकाशन दिल्ली

पुराणों में ऐतिहासिक परिवर्तयुग

भारतीय इतिहास में मौलिक,
अद्भुत एवं क्रान्तिकारी खोज

पुराणों में ऐतिहासिक परिवर्तयुग

[प्राग्महाभारतकालीन गणना का मूलाधार]

New Discovery of Historical Parivart Age

लेखक
डॉ० कुंवरलाल जैन व्यासशिष्य

❀

इतिहासविद्याप्रकाशन, दिल्ली

© इतिहासविद्याप्रकाशन
बी-२६, धर्मकालोनी
नांगलोई, दिल्ली

मूल्य—७५ रुपयेमात्र
प्रकाशनवर्ष— १९९२

मुद्रक—आचार्य प्रिंटिंग प्रेस
दयानन्दमठ, गोहानामार्ग
रोहतक-१२४००१
दूरभाष—२८७४

क्रांतिकारी मौलिक इतिहासकार व साहित्यकार
डा० कुँवर लाल जैन व्यास शिष्य (डी० लिट०)
को प्राप्त पुरस्कार

	पुरस्कृत कृति	पुरस्कार प्रदाता संस्था	वर्ष	राशि
१.	भारतीय इतिहास पुनलेखन क्यों ?	श्री हनुमान मंदिर कलकत्ता	१९८६	५,०००रू.
२.	पुराणों में वंशानुक्रमिक कालक्रम	उ० प्र० हिन्दी संस्थान	१९८९	३,०००रू.
३.	आर्ष यज्ञ विद्या	उ० प्र० संस्कृत अकादमी	१९८७	२,०००रू.
४.	पुराणों में इतिहास	दिल्ली हिन्दी अकादमी	१९९०	११,०००रू.
५.	आर्ष यज्ञ विद्या	राजभाषा विभाग बिहार सरकार	१९९०	११,०००रू.
६.	वैदिकी यज्ञ विद्या	राजस्थान संस्कृत अकादमी		६,०००रू.

दूरभाष : का० 733950
730274

हिन्दी अकादमी, दिल्ली

ए-२६/२७, सनलाइट इंश्योरेंस बिल्डिंग, आसफ अली रोड,
नई दिल्ली-११०००२

महत्वपूर्ण/रजिस्टर्ड

संख्या सं०फा० 4(12)/87-88/90/हि०अका०

दिनांक 29 मार्च 1990.

आदरणीय/आदरणीया डॉ० कुंवर लाल व्यासशिष्य जी,

आपको यह सूचित करते हुए अति हर्ष और प्रसन्नता है कि हिन्दी अकादमी की वर्ष 1987-88 की 'साहित्यिक कृति पुरस्कार' योजना के अन्तर्गत आपकी ..पुराणों में इतिहास.................................. नामक पुस्तक का चयन हुआ है । इस सम्मान और गौरव के लिए कृपया हमारी हार्दिक बधाई स्वीकार करें । पुरस्कार समारोह निकट भविष्य में शीघ्र किये जाने की आशा है । कार्यक्रम निर्धारित होने पर यथासमय आपको सूचित किया जा सकेगा ।

सूचनार्थ निवेदन है कि पुरस्कार स्वरूप अकादमी की ओर से 11,101/= रू० की राशि का चैक और एक प्रतीक - भेंट किया जाता है । वस्तुतः यह भेंट आपके उत्कृष्ट सृजन और लेखन के लिए हम सभी के आदर और सम्मान की भावनाओं की प्रतीक ही है । कृपया इस पत्र की प्राप्ति के बारे में अवश्य सूचित करने की कृपा करें ।

एक बार पुनः बधाई ।

आदर पूर्वक.

भवदीय,

(डॉ० नारायणदत्त पालीवाल)
सचिव.

डॉ० कुंवर लाल व्यासशिष्य
आरा मशीन गली, धर्म कॉलोनी,
नांगलोई, दिल्ली- 110 041.

बिहार सरकार : राजभाषा विभाग

अखिल भारतीय ग्रन्थ पुरस्कार योजना 1988-89 के अन्तर्गत
.... भारतीय संस्कृति .... विषय पर
.... डॉ॰ कुँवर लाल व्यासशिष्य .... के ग्रन्थ
.... आर्य यक्ष विद्या .... को दस हजार
रुपये की राशि से पुरस्कृत किया जाता है ।

निदेशक सचिव मंत्री मुख्य मंत्री

(5)

5

राजस्थान-संस्कृत-अकादमी, जयपुरम्

आचार्य-नवलकिशोरकाङ्कर-वेदवेदाङ्ग-पुरस्कारः

(अखिलभारतवर्षस्तरीयः)

अस्मिन् 1991 ईसवीय-संवत्सरे आचार्यप्रवर- [डा.] कुंवरलालजैन 'व्यासशिष्यै' प्रणीतः "वैदिकीय-यज्ञविद्या" नामको वेदग्रन्थो विशेषज्ञैर्वेदवेदाङ्गविषयाकः सर्वोत्कृष्टः प्रमाणितः ।

अतो राजस्थान - संस्कृत - अकादमी षट्सहस्ररूप्यकात्मकेन "आचार्य-नवलकिशोरकाङ्कर - वेदवेदाङ्ग - पुरस्कार - समर्पणेन नवदिल्ली - वास्तव्यान् विश्रुतनामधेयान् [डा.] कुंवरलालजैन 'व्यासशिष्यान्' सबहुमानं सभाजयति ।

चैत्र कृष्णा एकादशी, रविवासरः 2048
दि. 29 मार्च, 1992

डा० प्रभाकरः शास्त्री
निदेशकः

राधाकृष्ण दीक्षितः
अध्यक्ष

उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान
लखनऊ

अनुशंसा पुरस्कार

कीरति भनिति भूति भलि सोई।
सुरसरि सम सब कहँ हित होई॥

डा० कुँवर लाल जैन .... को उनकी कृति पुराणों में वंशानुक्रमिक कालक्रम पर इतिहास .... विधा/विषय के अन्तर्गत वर्ष 1989 का आचार्य नरेन्द्र देव "अनुशंसा पुरस्कार" प्रदान करते हुए तीन सहस्र रूपये की धनराशि सहर्ष भेंट की गयी।

निदेशक | कार्यकारी उपाध्यक्ष

उत्तरप्रदेश-संस्कृत-अकादमी लखनऊ

संस्कृतसाहित्यपुरस्कारः

.... १९८४ ईसवीये वर्षे प्रकाशिता

.... "आपस्तम्बकल्प में यज्ञविद्या" कृतिः

अधिकारिविद्वद्भिः पुरस्कारयोग्या

घोषिता इति तल्लेखकं

श्री कुँवरलाल-व्यास- विद्वांसं

.... द्वि सहस्ररुप्यकाणां पुरस्कारेण

सहर्ष सभाजयति ।

निदेशकः अध्यक्षः

विषयानुक्रमणी

प्राक्कथन

यह बात मैंने पुस्तक के प्रारम्भ में ही कही है कि अभी तक विद्वानों को 'परिवर्तयुग' का कालमान या रहस्य अज्ञात था। सर्वप्रथम मैंने ही इसका रहस्य खोला है कि 'परिवर्तयुग' का कालमान ३६० मानुषवर्ष था, यह विविध प्रमाणों से सिद्ध किया गया है स्वायम्भुव मनु से महाभारतकाल (व्यास) पर्यन्त ७१ 'परिवर्तयुग' व्यतीत हुये थे, यह अंक निम्न श्लोक में सुरक्षित है—

स वै स्वायम्भुवः पूर्वपुरुषो मनुरुच्यते।
तस्यैकसप्ततियुगं मन्वन्तरमिहोच्यते ॥ ब्रह्माण्ड० १।२।९

'युग' के इस उल्लेख को भ्रान्ति से 'चतुर्युग समझा गया और समस्त ऐतिहासिक गणना एक काल्पनिक वस्तु बनकर रह गई। पोंगापन्थी अभी भी भ्रान्ति में रहेंगे और कहेंगे कि ७१ चतुर्युगों का एक मन्वन्तर होता है और पृथिवी के अग्निपिण्ड के साथ २ अरब वर्ष पूर्व स्वायम्भुव मनु उत्पन्न हुये। अरबों, करोड़ों वर्षों को पोंगापन्थी चुटकियों में बीता हुआ समझते हैं। स्वायम्भुव मनु को बीते हुए केवल ३२००० वर्ष व्यतीत हुए हैं और वैवस्वतमनु २८ परिवर्तयुगपूर्व (भारतयुद्ध से) हुये। दत्तात्रेय, मान्धाता, परशुराम और दाशरथिराम का समय पुराणों में परिवर्तयुग में निर्दिष्ट है। 'परिवर्त युग' का एक पर्याय 'दिव्यसंवत्सर' भी था, इस नाम से भी महती भ्रान्ति हुई। यह सब इस पुस्तक में स्पष्ट किया गया है। आशा है कि इतिहासकार सच्चाई को स्वीकार करेंगे।

२९-१०-१९८९ ई०
(दीपावली) २०४६ वि०

लेखक
डॉ० कुँवरलाल जैन व्यासशिष्य

प्रथम अध्याय

ऐतिहासिक परिवर्तयुग

युग-सम्बन्धी भ्रान्ति निराकरण

सन्तः परीक्ष्यान्यतरद् भजन्ते ।
मूढ़ः परप्रत्ययनेयबुद्धिः ॥ (कालिदास)

"सन्त (या सत्यशोधक) परीक्षण के अनन्तर ही तथ्य स्वीकार करते हैं, परन्तु मूढ़ (मूर्ख) केवल दूसरों की बात पर ही विश्वास कर लेते हैं।"

पुराणों में यद्यपि अनेक तथ्यात्मक ऐतिहासिक घटनाओं का प्रामाणिक वर्णन है, तथापि अनेक भ्रष्टपाठों के कारण तथा उनमें निरन्तर पाठ-परिवर्तन होते रहने के कारण, उनके वचन प्रायः श्रद्धेय (विश्वसनीय) नहीं समझे जाते। पुराणों में सर्वाधिक परिवर्तन विक्रमी संवत् प्रारम्भ से एक दो शती पूर्व, युगगणना या कालगणना सम्बन्धी पाठों में कर दिया गया, जिससे पुराणोल्लिखित सत्य इतिहास भी इतिहास न रहकर कल्पनालोक की वस्तु रह गया। पाश्चात्य षड्यन्त्रकारी लेखकों ने पुराणों के प्रति अश्रद्धा को और बढ़ाया और गौतम बुद्ध और बिम्बसार से पूर्व के किसी भी ऐतिहासिक पुरुष, जिसका इतिहासपुराणों में उल्लेख था, उसे ऐतिहासिक नहीं माना। मैगस्थनीज के आधार पर उन्होंने चन्द्रगुप्त मौर्य की एक काल्पनिक तिथि घड़ ली और इसी काल्पनिक तिथि के आधार पर गौतम बुद्ध से गुप्तकाल तक की तिथियां निश्चित कीं।

ऐसे अज्ञानावृत वातावरण में एक प्रकाशस्तम्भ का उदय हुआ—पं० भगवद्दत्त के रूप में – जिन्होंने पाश्चात्य कुचेष्टाओं पर प्रहार करते हुए इतिहासपुराणों के आधार पर स्वायम्भुव मनु से गुप्तकाल तक के इतिहास का पुनरुद्धार किया। पण्डितजी का प्रयत्न, बहुत प्रारम्भिक, परन्तु साहसिक था। इतिहासपुराणों के आधार पर, उन्होंने भारतयुद्ध एवं उससे पूर्व की तिथियां निश्चित करने का विद्वत्तापूर्ण प्रयत्न किया और भारतीय इतिहास का आरम्भ विक्रमी से १४००० वि० पू० माना अर्थात् सिद्ध किया। युगसमस्या का स्पर्श करने से पूर्व हम पण्डितजी के कुछ मूल वचन, उनकी पुस्तकों से उद्धृत करते हैं। क्योंकि मुझे सत्य इतिहास में अनुसन्धान करने एवं लिखने की प्रेरणा पं० भगवद्दत्त के ग्रन्थों

से ही मिली और वे ही पुराणों से सच्चा इतिहास निकालने वाले, वर्तमान युग में प्रथम अनुसंधाता थे, जो मेरी प्रेरणा के स्रोत थे, अतः सर्वाधिक मत उन्हीं के उद्धृत किये जायेंगे। पण्डितजी ने पुराणोल्लिखित युगगणना एवं तिथि सम्बन्धी कुछ समस्याओं को आंशिक रूप से सुलझा लिया था और कुछ समस्याओं को नहीं सुलझा पाये। अब उनके कुछ मूल कथन द्रष्टव्य हैं—

१. "ब्रह्माजी का काल बहुत पुराना है। जर्मनभाषा के आधार पर भारतीय इतिहास की जो रूपरेखा उपस्थित की गई है, वह अविश्वसनीय सिद्ध हो चुकी है। महाभारत ग्रन्थ का काल (विक्रम से ३००० वर्ष पूर्व) निर्धारित हो चुका है। तदनुसार जलप्लावन के लिये हमने कलि से पूर्व लगभग ११००० वर्ष का काल माना है। ४८०० वर्ष कृतयुग, ३६०० वर्ष त्रेतायुग, २४०० वर्ष द्वापरयुग। पूरा योग बना १०८०० वर्ष। इसके साथ कलि और प्रवृद्ध कलि के ५००० से कुछ अधिक वर्ष जोड़ने पर लगभग १६००० वर्ष बनते हैं। यह न्यूनातिन्यून काल है। पूर्ण सम्भव है, यह काल इससे अधिक हो। आने वाले विद्वान् इस विषय पर अधिक प्रकाश डाल सकेंगे।"

निश्चय ही पण्डितजी ने एक सत्य, आंशिक सत्य का आधुनिक उद्घाटन किया है। परन्तु ब्रह्मा एक नहीं, अनेक हुए हैं, यथा कश्यप, वरुण आदि भी ब्रह्मा या प्रजापति कहे जाते थे। आगे हम सिद्ध करेंगे कि विक्रम से १४००० वर्ष पूर्व कश्यप प्रजापति (ब्रह्मा) हुए थे, न कि स्वयम्भू ब्रह्मा और उनका पुत्र स्वायम्भुव मनु। यास्क के निरुक्त (३।४) में जिस विसर्गादि[2] (आदिकाल = आदियुग) का उल्लेख आद्य त्रेता स्वायम्भुव अन्तर में था उस सम्बन्ध में निम्नलिखित श्लोक देखने योग्य हैं—

(क) तस्मादादौ तु कल्पस्य त्रेतायुगमुखे तदा। वायु० ९।४६

(ख) त्रेतायुगमुखे पूर्वमासन् स्वायम्भुवेऽन्तरे। वायु० ३१।३

(ग) स्वायम्भुवेऽन्तरे पूर्वमाद्ये त्रेतायुगे तदा। वायु० ६३।५

× × ×

"वायु का युगविभाग महाभारत से कुछ भिन्न प्रकार का है। वायु का वैवस्वत मनु का आरम्भ त्रेता से होता है। वायु का वर्तमानरूप भारतयुद्ध के पश्चात् महाराज अधिसीमकृष्ण के काल का है। परन्तु वायु की बहुत सी सामग्री अतिपुरातनकाल की है। उसका कालविभाग अन्य प्रकार का था, अतः निम्न-

---

१. भारतवर्ष का बृहद् इतिहास, भाग १, पृ० २५४

२. "मिथुनानां विसर्गादौ मनुः स्वायम्भुवोऽब्रवीत्।"

लिखित श्लोक भी दृष्टि में रखने होंगे। भावी विद्वानों को इस समस्या की पूर्ति करनी चाहिए।"

इस सम्बन्ध में, यहां[1] संक्षेप में निम्न बातें ध्यातव्य हैं—(१) वायु के वर्तमानपाठों में भी अनेक भ्रष्टपाठ हैं, इसका प्रमाण है कि इसी पुराण का पाठान्तर है ब्रह्माण्डपुराण, जिसमें अवान्तर विभागों के लिये त्रेता के स्थान पर 'द्वापर' शब्द का प्रयोग किया गया है। दोनों ही भ्रान्तिजनक हैं।

प्रथमे द्वापरे व्यस्ताः स्वयं वेदाः स्वयम्भुवा।
द्वितीये द्वापरे चैव वेदव्यासः प्रजापतिः॥[2]

वायु के ही अन्यत्र पाठ में 'त्रेता' या द्वापर के स्थान पर युग, पर्याय और परिवर्त शब्दों का प्रयोग है—

परिवर्ते पुनः षष्ठे मृत्युर्व्यासो यदा विभुः।
यदा व्यासः सुरक्षस्तु पर्यायश्च चतुर्दश॥[3]

अतः सत्य या यथार्थ पाठ पर्याय या परिवर्त या युग था, इसका व्याख्यान (स्पष्टीकरण) विस्तार से आगे होगा।

उपर्युक्त युगसमस्या की कुंजी 'व्यासपरम्परा' में ही निहित है। कल्प, मन्वन्तर और दिव्यवर्ष या दिव्ययुग पुराणों या वैदिकग्रन्थों में यत्र तत्र प्रयुक्त हुए, जिससे भी महती भ्रान्तियां उत्पन्न हुईं।

वर्तमान पुराणपाठ से पं० भगवद्दत्त को यह भ्रान्ति हुई कि विभिन्न अवान्तर त्रेता एक ही त्रेतायुग के विभाग हैं। परन्तु पुराणों, विशेषतः वायुपुराण और ब्रह्माण्डपुराण के सूक्ष्म अनुशीलन से सुस्पष्ट प्रतिभान होता है कि उपर्युक्त तथाकथित त्रेता न तो अवान्तर त्रेता थे और न ही महात्रेता के विभाग थे। मूल में वे स्वतन्त्र एवं पृथक् ऐतिहासिक युग थे, जिन्हें उत्तरकालीन पुराणप्रक्षेपकारों या प्रतिलिपिकारों ने कहीं 'त्रेता' कहीं 'द्वापर' और कहीं 'कलियुग' कह दिया है। स्पष्ट ही यह महती भ्रान्ति है जो प्राचीन यथार्थ 'युग' या परिवर्त का यथार्थ बोध न होने से, उसकी विस्मृति से उत्पन्न हुई। यह वर्तमान भ्रान्तपाठों के कारण ही उत्पन्न हुई। अतः हम पूर्वपक्ष के रूप में प्रथम वर्तमान पुराणपाठों के आधार पर प्रचलित युगगणना का सिंहावलोकन करेंगे।

---

१. युगों पर विस्तृत अनुसन्धान ही आगे के अध्यायों में होगा।

२. ब्रह्माण्ड० (१।२।३५)

३. परिवर्ते चतुर्विंशे ऋक्षो व्यासो भविष्यति।
तत्राहं भविता ब्रह्मन् कलौ तस्मिन्युगान्तिके॥ वायु २३

युगगणनासम्बन्धी वर्तमान पुराणपाठ

वर्तमान पुराणपाठों में ऐतिहासिक युगगणना में किस प्रकार महती भ्रान्तियां उत्पन्न हुईं, इन कारणों को खोजने से पूर्व इस द्विविध युगगणना का निदर्शन यहां प्रस्तुत करते हैं—

तेषां द्वादशसाहस्री युगसंख्या प्रकीर्तिता ।
कृतं त्रेता द्वापरं च कलिश्चैव चतुष्टयम् ।
अत्र संवत्सराः सृष्टा मानुषेण प्रमाणतः ।
कृतस्य तावद् वक्ष्यामि···च निबोधत ।
सहस्राणां शताब्दाहुश्चतुर्दश हि संख्यया ।
चत्वारिंशत्सहस्राणि तथा हि कृतं युगम् ।
तथा शतसहस्राणि वर्षाणि दशसंख्यया ।
अशीतिश्च सहस्राणि कालस्त्रेतायुगस्य सः ॥
सप्तेव नियुतान्याहुर्वर्षाणां मानुषेण तु ।
विंशतिश्च सहस्राणि कालः स द्वापरस्य च ।
तथा शतसहस्राणि वर्षाणां त्रीणि संख्यया ।
षष्टिश्चैव सहस्राणि कालः कलियुगस्य च ।
एवं चतुर्युगे कालः कृतैः संध्यांशके स्मृतः ।
नियुतान्येव षड्विंशान्निरसानि युगानि वै ।
चत्वारिंशत्तथा त्रीणि नियुतानीह संख्यया ।
विंशतिश्च सहस्राणि संसन्ध्यश्च चतुर्युगः ।

(ब्रह्माण्ड० १।२।२६।२९-३६)

"चारों युग (कृत, त्रेता, द्वापर और कलियुग) कुल १२००० वर्ष के होते हैं। यह गणना स्पष्ट ही मानुष वर्षमान के आधार पर है। कृतयुग के वर्ष (बिना संध्या के) १४ लाख ४० सहस्र होते हैं। त्रेतायुग १० लाख ८० सहस्र वर्ष का होता है। द्वापर युग सात लाख २० सहस्र वर्ष का होता है और कलियुग ३ लाख ६० हजार वर्ष का होता है। यह बिना संध्यांश के कालगणना है। संध्यांशों को मिलाकर चारों युग (चतुर्युग) ४३ लाख २० हजार वर्ष के होते हैं।

इस प्रकार के ७१ चतुर्युग मिलकर एक मन्वन्तर होता है, मन्वन्तर की अवधि ३० करोड़ ६७ लाख और बीस सहस्र वर्ष मानी गई। और १४ मन्वन्तरों का एक कल्प=(ब्रह्मा=सृष्टि का एक दिन)=४ अरब ३२ करोड़ वर्षों का माना गया। यह अर्धकल्प है। कल्प के दिनरात्रि मिलकर ८ अरब ६४ करोड़ वर्षों के हैं।

यह है संक्षेप में कल्प, मन्वन्तर और चतुर्युग का वर्षमान, जो वर्तमान पुराणपाठों से उद्घाटित होता है। निश्चय ही यह कालगणना ऐतिहासिक नहीं है और न ही इसका इतिहास में कोई उपयोग है। **पुराणों में भी इसका ऐतिहासिक उपयोग कहीं नहीं है। केवल सिद्धान्तरूप में अथवा यों कहिये भ्रान्तिरूप में ही पुराणों में इसका वर्णन है। हमने भ्रान्ति के निराकरणार्थ ही इसको यहां उद्धृत किया है।**

'कल्प' शब्द का व्याख्यान—भ्रान्तिनिराकरण

मूलपुराणों में—महाभारतकाल एवं उससे पूर्व—द्विविध ऐतिहासिक युगगणना प्रचलित थी। पूर्वकाल में 'पर्याय' या 'परिवर्तयुग' गणनापद्धति प्रचलित थी, उत्तरकाल में—महाभारतयुद्ध से लगभग १००० वर्ष पूर्व (४००० वि० पू०) चतुर्युगीय गणना पद्धति का प्राबल्य हो गया। 'पर्याय' या परिवर्त (युग) का मान ३६० मानुषवर्ष था और चतुर्युग का मान था— 'द्वादशसहस्रवर्ष'[1] (१२०००)। मनुस्मृति में इसीको एक 'देवयुग'[2] कहा गया है। यह 'देवयुग' पद महती भ्रान्ति का कारण बन गया, इसका विशेष व्याख्यान एवं स्पष्टीकरण आगे विस्तार से करेंगे। परन्तु मूल में 'कल्प' शब्द कालवाची नहीं था। यह मूल में सृष्टि (ब्रह्माण्डरचना या पृथ्वीरचना) आदि का पर्याय था—

कल्पस्यादौ सुबहुला यस्मात्संस्थाश्चतुर्दश।
कल्पयामास वै ब्रह्मा तस्मात्कल्पो निरुच्यते ॥[3]

प्राचीन संस्कृत वाङ्मय में 'कल्प' शब्द अनेक अर्थों में प्रयुक्त हुआ है। यथा वेद का एक वेदांग है—'कल्प' (सूत्र)। अर्थवाद और ऐतिह्यविधि को भी कल्प कहा जाता था—

पुराकल्प इत्यर्थवादः (न्यायसूत्र २।१।६४)
ऐतिह्यसमाचरितो विधिः पुराकल्पः (वात्स्यायनन्यायभाष्य)

पुराकल्प एक ऐतिहासिक शास्त्र भी था—

श्रूयते हि पुराकल्पे नृणां व्रीहिमयः पशुः[4]।
पुराकलेप कुमारीणां मौञ्जीबन्धनमिष्यते। (यमस्मृति)

---

१. तेषां द्वादशसाहस्री युगसंख्या प्रकीर्तिता।
कृतं त्रेता द्वापरं च कलिश्चैव चतुष्टयम् ॥
(ब्रह्माण्ड० १।२९-३०)

२. एतद् द्वादशसाहस्रं देवानां युगमुच्यते। (मनु १।६)

३. ब्रह्माण्ड० (१।२।६।७४)

४. अनुशासनपर्व

वायुपुराण के अनुषंगपाद में ब्रह्मकल्प, भुवकल्प, तपकल्प, गन्धर्वकल्प, षड्जकल्प, मनुकल्प, रक्तकल्प संज्ञक ३१ प्रकार के कल्प (रचना या सृष्टियों) का उल्लेख है। अतः पुराणों में ही कल्प शब्द केवल 'कालमान' के रूप में ही प्रयुक्त नहीं हुआ, अन्य बहुत से अर्थों में प्रयुक्त है, तथापि पुराणों में इसका 'कालवाची' अर्थ भी माना जा सकता है।

हम पूर्वपृष्ठ पर संकेत कर चुके हैं कि पुराणों में द्विविध ऐतिहासिक युगगणनापद्धतियां प्रचलित थीं। उनमें दोनों के संमिश्रण से ही वर्तमान 'अनैतिहासिक युगपद्धति' का आविष्कार हो गया, जिसका इतिहास में कोई उपयोग नहीं। व्यासपरम्परा के आधार पर एवं अन्य संकेतों के आधार पर हमने परिवर्त या (तथाकथित अवान्तर त्रेताओं) का कालमान ज्ञात कर लिया, जिसको परम श्रद्धेय पं० भगवद्दत्त ज्ञात नहीं कर सके।

ब्रह्माण्डपुराण (१।२।६।७४) के पूर्वोक्त श्लोक में कहा गया है कि स्वयम्भू ने १४ प्रकार की संस्थाओं (देव, गन्धर्व, मानुष, पिशाचादि) की सृष्टि की (कल्पयामास) अतः इस सृष्टि को 'कल्प' कहा गया। वर्तमानकल्प को 'वाराह'कल्प[1] कहा जाता है। इससे पूर्व पृथिवी पर सहस्रों कल्प व्यतीत हो चुके थे—

एतेन क्रमयोगेन कल्पा मन्वन्तराणि च।
सप्रजानि व्यतीतानि शतशोऽथ सहस्रशः।
मन्वन्तरान्ते संहारः संहारान्ते च संभवः।[2]

वाराहकल्प का प्रारम्भ अब से लगभग ३२ सहस्रवर्षपूर्व हुआ था, जब वाराहसंज्ञक मेघ ने पृथिवी का समुद्र से पुनरुद्धार किया—(१) स (प्रजापतिः) वाराहं[3] रूपं कृत्वोपन्यमज्जत्। स पृथिवीमध आर्च्छत्। तस्या उपहत्योपन्यमज्जत्। तत् पुष्करपर्णेऽप्रथयत्। तत् पृथिव्याः पृथिवीत्वम्[4]। "वह प्रजापति निश्चय ही वाराह का रूप धारण करके समुद्र में चला गया। वह उसके नीचे गया और बाहर निकला। उसे पुष्करपर्ण पर फैलाया। यही पृथिवी का पृथिवीत्व है।"

---

१. यश्चायं वर्तते कल्पो वाराहः साम्प्रतः शुभः।
(ब्र० १।२।६।६)

२. ब्रह्माण्डपु० (१।२।६।२)

३. वाराहं रूपमास्थाय मयेयं जगती पुरा।
मज्जमाना जले विप्र वीर्येणासीत् समुद्धृता।
(वनपर्व १६२।११)

४. तै० ब्रा० (१।१।३।६,७)

निरुक्त (५।४) में यास्क ने व्याख्यान किया है कि 'वराहो मेघो भवति'।

वायुपुराण में स्पष्ट लिखा है कि ब्रह्मा ने वायु (मेघ=वराह) का रूप धारण करके सलिल (समुद्र) में विचरण किया और जल से संछादित भूमि को जल से बाहर निकाला[1]

यह वर्तमान 'वाराहकल्प' सहस्रों कल्प से एक है जो पृथिवी पर व्यतीत हुए तथा यह 'वाराह कल्प' पूर्वकल्प का अवान्तरकल्प (विभाग) ही है—

यश्चायं वर्तते कल्पो वाराहः साम्प्रतः शुभः।
अस्मात्कल्पात्तु यः पूर्वः कल्पोऽतीतः सनातनः।
तस्य चास्य च कल्पस्य मध्यावस्थां निबोधत ॥
प्रत्यागते पूर्वकल्पे प्रतिसंधिं विनाऽनघाः।
अन्यः प्रवर्तते कल्पो जनलोकादयं पुनः ॥[2]

अतः पुराणप्रामाण्य से ज्ञात होता है कि यह कल्प (जीवसृष्टि) बिना प्रतिसन्धि के ही पूर्व सनातन (चिरकालीन) कल्प का एक अवान्तर विभाग है। इस अवान्तर वाराह कल्प को प्रारम्भ हुए अभी लगभग ३२ सहस्र वर्ष व्यतीत हुए हैं, यह स्वायम्भुव मनु की तिथि निश्चित करते समय, सिद्ध किया जायेगा।

अनेक बार जीवसृष्टि एवं प्रलय (कल्प=सर्ग और प्रतिसर्ग)

पृथिवी पर अनेक बार उष्णयुग या हिमयुग व्यतीत हो चुके हैं, जिनमें अनेक बार आंशिक या पूर्ण जीवसृष्टि नष्ट हुई और पुनरुत्पन्न हुई। प्राचीन साहित्य से ज्ञात होता है कि मनुष्य को केवल दो प्रलयों की स्मृति शेष है। इसमें, प्रथम महाप्रलय में अतिदाह[3] के पश्चात् वराह (मेघ=ब्रह्मा) की कृपा से सलिलमय पृथिवी का उद्धार हुआ और स्वायम्भुव मनु ने नवीन मानव सृष्टि

---

१. ब्रह्मा तु सलिले तस्मिन् वायुर्भूत्वा तदाचरन्।
स तु रूपं वराहस्य कृत्वाऽपः प्राविशत् प्रभुः।
अद्भिः संछादितामुर्वीं समीक्ष्याथ प्रजापतिः।
उद्धृत्योर्वीमथाद्भ्यस्तु अपस्तासु स विन्यसन्। (वायु० ८।२,७,८)

२. ब्रह्माण्ड० (१।२।६।६-८) तथा
रामायण ११०।३-४ सर्वं सलिलमेवासीत् पृथिवी यत्र निर्मिता
ततः समभवद् ब्रह्मा स्वयंभूर्दैवतैः सह।
स वराहस्ततो भूत्वा प्रोज्जहार वसुन्धराम्।

३. युगान्ते सर्वभूतानि दग्धानि। (द्रोणपर्व १५७।१७२)

उत्पन्न की। पूर्व कल्पान्त या युगान्त में पृथिवी के दग्ध होने पर पृथिवीवासी वैमानिक देवगण (पूर्वप्रजा) विमानों में बैठकर दूसरे लोकों में चले गये—

> चतुर्युगसहस्रान्ते सह मन्वन्तरैः पुरा
> क्षीणे कल्पे ततस्तस्मिन् दाहकाल उपस्थिते।
> तस्मिन् काले तदा देवास्तस्मिन् प्राप्ते ह्युपप्लवे।
> तदोत्सुका विषादेन त्यक्तस्थानानि भागशः।
> महर्लोकाय संविग्नास्ततस्ते दधिरे मनः। (ब्रह्माण्ड अ० ६)

"चतुर्युगसहस्र के अन्त में मन्वन्तरों का अन्त होने पर कल्पनाश के समय दाहकाल उपस्थित होने पर पृथिवीवासी देवगण संताप से संविग्न होकर पृथिवी लोक छोड़कर महर्लोक में बसने चले गये।"

उपर्युक्त पृथिवीवासी वैमानिक देवगण स्वायम्भुवमनु से पूर्व पृथिवी की प्रजा (निवासी) थे। वे दाहकाल का आगमन देखकर किसी अन्य ऊर्ध्वलोक में चले गये, पुराण के उक्त संकेत का अतिरिक्त प्राक्स्वायम्भुव इन देवों का इतिहास पूर्णतः अज्ञात है। वर्तमान पुराणों में मुख्यतः इतिहास स्वायम्भुव मनु से ही प्रारम्भ होता है, इससे पूर्व का इतिहास आज अज्ञात है।

उपर्युक्त पुराणप्रमाण से हमारे इस मत की पुष्टि होती है कि पृथिवी पर अनेक बार मानवसृष्टि और सभ्यता का उदय और अस्त हुआ था। और कुछ आधुनिक वैज्ञानिकों के इस मत को बल मिलता है कि प्राणिवर्ग एवं मनुष्य दूसरे ग्रह से आकर पृथिवी पर बसे और उड़नतश्तरियों में बैठकर आज भी तथाकथित अन्तरिक्ष मानव या देवगण पृथिवी पर आते रहते हैं। इस सम्बन्ध में हम प्रसिद्ध अन्तरिक्ष वैज्ञानिक सर फ्राइड हायल का मत अपनी पूर्वपुस्तक 'भारतीय इतिहास का पुनर्लेखन क्यों?' पृष्ठ २१ पर लिख चुके हैं। आधुनिक युग में, इस विषय पर सर्वाधिक अनुसन्धाता प्रसिद्ध जर्मन इतिहासकार एरिचवान डेनीकेन ने अनेक पुस्तकें लिखी हैं, जिनमें प्रमुख हैं (१) देवताओं के रथ (Chariots of Gods) और (२) प्राचीन देवों की खोज (Search of Ancient Gods) इत्यादि।

कल्प की यथार्थ अवधि का कालमान

कल्प, मन्वन्तर और चतुर्युग के वर्तमानपाठों में अविश्वसनीय काल क्यों प्रचलित हुए, इस भ्रान्त धारणा का यहां विस्तृत विवेचन करेंगे। परन्तु इससे पूर्वकल्प का यथार्थ वर्षमान ज्ञातव्य है।

मनुस्मृति में स्पष्ट लिखा है कि १२००० वर्षों (चतुर्युग) का एक 'देवयुग' या 'महायुग' या 'युग' होता है—

एतद्द्वादशसाहस्रं देवानां युगमुच्यते। (मनु० १।१६)

यह द्वादशसहस्रवर्ष मानुषवर्षगणना के आधार पर थे, ऐसा पुराण में स्पष्ट लिखा है—

तेषां द्वादशसाहस्री युगसंख्या प्रकीर्तिता।
कृतं त्रेता द्वापरं च कलिश्चैव चतुष्टयम्।
अत्र संवत्सराः सृष्टा मानुषेण प्रमाणतः।
(ब्रह्माण्ड० १।२६-३०)

पाश्चात्य लेखक ह्विटने आदि का मत पूर्णतः ठीक है कि इन १२००० वर्षों को देववर्ष मानने की कल्पना मनु की नहीं है[1]। यही मत श्री लोकमान्य तिलक का था[2]। अतः प्राचीनशास्त्रों के मूल वचन द्रष्टव्य हैं—

सहस्रयुगपर्यन्तम् अहर्यद् ब्रह्मणो विदुः।
(गीता ८।१७)

सहस्रयुगपर्यन्तम् अहर्ब्राह्मं स राध्यते।
(बृहद्दे० ८.९८)

युगसहस्रपर्यन्तमहर्यद् ब्रह्मणो विदुः।
रात्रिं युगसहस्रान्तां तेऽहोरात्रविदो जनाः।
(निरुक्त १४।४।१७)

दैविकानां युगानां तु सहस्रं परिसंख्यया।
ब्राह्ममकेमहर्ज्ञेयं तावतीं रात्रिमेव च॥
(मनु० १।७२)

उपर्युक्त ग्रन्थों में यह रञ्चमात्र भी संकेत नहीं है कि ब्रह्मा का एक दिन जो 'सहस्रयुगपर्यन्त' होता है, वह दिव्य वर्षों में है, जब मनुस्मृति के अनुसार देवयुग सामान्य मानुष—१२००० वर्षों का था, तब सहस्र देवयुगों को भी मानुष वर्षों का समझना चाहिए। अतः यदि 'सहस्र' शब्द यथार्थ संख्या का ही बोधक है तो 'कल्प' कुल १२०००००० (एक करोड़ बीस लाख) मानुषवर्षों का था, न कि चार अरब बत्तीस करोड़ (वर्षों) का। यदि इस कल्प (मानवसृष्टि) का आरम्भ स्वायम्भुव मनु से हुआ था तो इसको केवल ३२ सहस्र वर्ष व्यतीत हुए हैं, न कि दो अरब वर्ष। यही तथ्य वक्ष्यमाण 'मन्वन्तरों' की अवधि से पुष्ट होगा।

---

१. भारतीय ज्योतिष—श्री बालकृष्ण दीक्षित, पृ० १४८

२. आर्कटिक होम इन वेदाज, पृ० ३५०

तीनसौसाठ मानुषवर्षों का

ऐतिहासिक परिवर्तयुग—दिव्यसंवत्सरयुग और चौदह मनुओं का कालक्रम

इतिहासपुराणों के पुरातनपाठों में स्वायम्भुवमनु से महाभारत युद्धकाल-पर्यन्त की महत्त्वपूर्ण घटनाओं का उल्लेख 'परिवर्तयुग' या 'पर्याययुग' संज्ञक अतिविख्यात कालमान में किया जाता था। परन्तु उत्तरकाल में इस कालमान किंवा युगमान का पुराणपाठों में प्रायः लोप-सा हो गया तथा 'दिव्यमानुष' गणना के सम्बन्ध में एक महती भ्रान्ति उत्पन्न हो गई, जिससे पुराणों में 'मन्वन्तर' सम्बन्धी ऐतिहासिक गणना पूर्णतः गड़बड़ा गई। ऐसी स्थिति में पाश्चात्य षड्यन्त्र से अभिभूत भारत में पाश्चात्य मिथ्याभिमानी और सच्चे इतिहासकार भी पुराणों के आधार पर प्राचीन प्राग्महाभारतकालीन कालक्रम पर यथार्थ प्रकाश नहीं डाल सके और अनेक विद्वान् युगों की मनमानी व्याख्या करते रहे, यथा डा० त्रिवेद ने २८ परिवर्त युगों को ६० वर्ष का मानकर मनमानी व्याख्या की। श्री डी० आर० मनकड़ ने चतुर्युग में प्रत्येक (कृत, त्रेतादि) को एक सहस्र वर्ष का माना। परन्तु इन व्याख्याओं से कोई गुत्थी सुलझी नहीं। सत्य यह है कि इतिहास में कल्पना या मिथ्याकल्पना से कोई समस्या हल नहीं होती। 'इतिहास' सम्पूर्ण पद की व्याख्या है - "इति हैवमासीदिति कथ्यते स इतिहासः"— 'जो सत्य घटनाक्रम वास्तव में हुआ था,' वही इतिहास है, शेष कल्पना— अनितिहास— मिथ्या होती है।

इन पंक्तियों के लेखक ने, किसी दिव्यशक्ति की कृपा से सत्य का वरण किया और प्राचीन पुराणपाठों के घोर अन्धकार में से 'परिवर्तयुग' का कालमान प्रकाशित किया है, जिसमें स्वायम्भुवमनु से वासुदेवकृष्णपर्यन्त महापुरुषों की तिथियां यथार्थरूप से निश्चित की जा सकती हैं। 'परिवर्तयुग' की कालगणना के रहस्योद्‌घाटन से पूर्व इस सम्बन्ध में देशी-विदेशी कुछ अन्वेषकों की विवशता द्रष्टव्य है—

सर्वप्रथम, इस सम्बन्ध में, विख्यात पाश्चात्य पुराण अनुसंधाता पार्जीटर का मत आलोच्य है। क्योंकि पार्जीटर के कोई पूर्वाग्रह नहीं थे, वह स्वबुद्धि से सत्य की खोज करना चाहता था, संभवतः इसीलिये वह कीथादि की भांति मैकालेषड्यन्त्र में सम्मिलित नहीं था अतः वह प्राचीनभारतीय इतिहास के सम्बन्ध में पुराणों के आधार पर कुछ सच्ची खोजें कर सका, तथापि विदेशी होने के कारण तथा युगप्रभाव के कारण, वह पुराणोल्लिखित यथार्थ ऐतिहासिक

कालगणना को नहीं समझ सका। २८ परिवर्तयुगों के सम्बन्ध में निम्न उद्धरण से पार्जीटर की अशक्ति और अज्ञान प्रकट होता है—

"It is unnecessary here to pursue this matter into the later fully developed theory of the Yugas and Manvantaras, wherein 71 four age periods (chaturyuga) made up a Manvantara. It was a fenciful Brahmanical elloboration and one feature in it is that the present time is the Kaliage in 28th fourage period of the Vaivasvata Manvantara, so the events of traditional history were sometimes distributed among those 28 periods. Thus a pretentious passage declars—Datta Atreya as Visnu's fourth incarnation and Markandeya lived in the tenth Tretayuga (i.e. in the Treta as of the 10th four age period). Mandhata as his fifth incarnation and Utathya lived in the 15th Treta, Rama Jamadagnya as his sixth and Visvamitra lived in the 19th Treta. Dasaratha's son Rama, as his seventh and Vasudeva lived in the 28th age, Vyasa as his eighth with Jatukainya and Krisna as his ninth with Brahma—Gargya lived in the 28th Dwapara. Such assignments sometimes observe some chronological consistency, often, they are erratic and in any case, being Brahmanical notions lacking the historical sense as they are unreliable." (Ancient Indian Historical Tratition, p. 179).

पार्जीटर, इस सम्बन्ध में न तो सत्य को समझना चाहता था और न ही उसमें यह समझने की शक्ति थी, अतः उसका आलोचना करना निरर्थक ही होगा। जबकि महान् वैदिक अनुसंधाता और सच्चे भारतीय इतिहासज्ञ पं० भगवद्दत्त तथाकथित त्रेता (=परिवर्त) युगसम्बन्धी अंश को नहीं समझ सके, जैसाकि उन्होंने स्वयं ही लिखा है—वायुपुराण के बहुत से त्रेता एक ही त्रेता के अवान्तर विभाग हैं। वायु के अनुसार आद्यत्रेता से लेकर चौबीसवें त्रेता तक निम्नलिखित व्यक्ति हुए—

दक्ष प्रजापति	—	आद्य त्रेता युग में
बारह देव (आदित्य)	—	आद्य त्रेता युग में
करन्धम	—	त्रेता युग मुख में

आवीक्षित मरुत्त	—	त्रेता युग मुख में
तृणबिन्दु	—	तृतीय त्रेता युग में
दत्तात्रेय	—	दशम त्रेता युग में
मान्धाता	—	पन्द्रहवें त्रेता युग में
जामदग्न्य राम	—	उन्नीसवें त्रेता युग में
दाशरथि राम	—	चौबीसवें त्रेता युग में

"कालक्रम की दृष्टि से ये लोग थोड़े-थोड़े अन्तर पर एक-दूसरे के पश्चात् हुए। यदि ये पृथक्-पृथक् चतुर्युगों के पृथक्-पृथक् त्रेता में होते तो इनके मध्य में द्वापर, कलि और सत्ययुग के अन्य महापुरुष अवश्य गिने जाते। पर ऐसा किया नहीं गया। अतः वायु के अनेक एक त्रेता के अवान्तर विभाग हैं...। यदि इन अवान्तर त्रेताओं की अवधि तथा आदियुग, देवयुग और त्रेतायुग आदि की अवधि जान ली जाये, तो भारतीय इतिहास का सारा कालक्रम शीघ्र निश्चित हो सकता है। हम अभी तक इस बात को पूर्णतया जान नहीं पाये (भारतवर्ष का बृहद् इतिहास, भा० १, पृ० १५९)।

पं० भगवद्दत्त ने अन्यत्र सहस्रबाहु अर्जुन के सम्बन्ध में लिखा—"सहस्रबाहु अर्जुन की मृत्यु जामदग्न्य राम के हाथों हुई। पुराणों के अनुसार जामदग्न्य राम त्रेता-द्वापर की सन्धि और उन्नीसवें त्रेता में हुआ। इन कथनों से प्रतीत होता है कि पुराणों में एक ही त्रेता के अनेक अवान्तर विभाग किये गये हैं। बहुत संभव है त्रेता तीन सहस्रवर्ष का हो और पुराणों ने उसका १२५ वर्ष का एक अवान्तर त्रेता माना हो" (भा० इ० भा० २, पृ० १०४)

पं० भगवद्दत्त की यह पूर्णतः भ्रान्ति है कि किसी त्रेतायुग के अनेक अवान्तर विभाग थे मूलतः यह भ्रान्ति पं० भगवद्दत्त की नहीं, यह पुराणों के उत्तरकालीन भ्रष्टपाठों से ही उत्पन्न हुई।

पुराणों में युगगणनासम्बन्धी महती भ्रान्ति-भ्रष्टपाठ

यद्यपि, पार्जीटर २८ युगसम्बन्धी अंश की सही व्याख्या नहीं समझ पाया, परन्तु युग और मन्वन्तरसम्बन्धीगणना के सम्बन्ध में उसका यह कथन पूर्ण सत्य है—

"It is unnecessary here to pursue this matter into later fully developed theory of fourteen Yugas and Manvantaras, wherein 71 four age periods (Chaturyuga) made up a Manvantara. (p. 178)

युगगणनासम्बन्धी भ्रान्ति के दो मूल कारण

प्राचीनमूलपुराणपाठों में स्वायम्भुवमनु के ७१ परिवर्तयुगों और वैवस्वतमनु के २८ परिवर्तयुगों का उल्लेख पूर्ण सत्य ज्ञान था। ये दोनों अंक इस प्रकार के हैं कि वे मिथ्याकल्पना नहीं हो सकते, परन्तु **उत्तरकालीन पुराण प्रक्षेपकार और लिपिकर्ता 'परिवर्तयुग' के अर्थ और कालमान को भूल गये, अतः उन्होंने इस 'परिवर्तयुग' को मुख्यतः चतुर्युग समझ लिया, कहीं कहीं वर्तमान पुराणपाठों में इसी 'परिवर्तयुग' को त्रेता, द्वापर और कलियुग भी लिख मारा है। यही पुराणपाठत्रुटि पं० भगवद्दत्त की भ्रान्ति का कारण है तथा इसी त्रुटि से वर्तमान पुराणपाठों में 'मन्वन्तर' आदि का 'अयथार्थ कालमान' घढ़ा गया, जिसका इतिहास या सत्य से कोई सम्बन्ध नहीं।**

परिवर्तयुग के भ्रामकपाठों के उदाहरण

परिवर्तयुग का भ्रान्त नाम द्वापर

व्यासपरम्परा के सम्बन्ध में पुराणों में यह नाम बहुधा दुहराया गया है, क्योंकि अन्तिम व्यास-कृष्णद्वैपायन ऐतिहासिक द्वापर के अन्त में हुए, अतः पूर्वव्यासों को भी द्वापरयुग में रख दिया गया—

अष्टाविंशतिकृत्वो वै वेदा व्यस्ता महर्षिभिः।
वैवस्वतेऽन्तरे तस्मिन् द्वापरेषु पुनः पुनः।
द्वापरे प्रथमे व्यस्तास्त्रयं वेदाः स्वयम्भुवा।
द्वितीये द्वापरे चैव वेदव्यासः प्रजापतिः॥
(विष्णु० ३।३।९-१२)

इस पाठ की निरर्थकता इसी तथ्य से स्पष्ट है कि स्वयंभू ब्रह्मा और प्रजापति कश्यप किसी द्वापर युग में हुए ही नहीं, पुराणज्ञ इस बात को भली भांति समझते हैं।

परिवर्त का त्रेता नाम (भ्रामक)

बलिसंस्थेषु लोकेषु त्रेतायां सप्तमे युगे।
दैत्यैस्त्रैलोक्याक्रान्ते तृतीयो वामनोऽभवत्॥
त्रेतायुगे तु दशमे दत्तात्रेयो बभूव ह॥
एकोनविंशे त्रेतायां सर्वक्षत्रान्तकोऽभवत्।
जामदग्न्यस्तथा षष्ठो विश्वामित्रपुरस्सरः॥
चतुर्विंशे युगे रामो वसिष्ठेन पुरोधसा॥
अष्टमे द्वापरे विष्णुरष्टाविंशे पराशरात्॥ (वायुपुराण)

अन्तिम श्लोक में अट्ठाइसवें परिवर्तयुग को पुनः भ्रमवश 'द्वापर' कहा गया है।

युगनाम भ्रान्ति के द्वितीय कारण के कथन से पूर्व परिवर्त युग सम्बन्धी भ्रान्ति के एक तृतीय कारण का भी संकेत करेंगे। यह तृतीय कारण था कि महाभारत काल से लगभग एक सहस्र वर्ष पूर्व चतुर्युगगणना प्रचलित हो गई थी। उत्तरकाल में 'परिवर्त युग' के ३६० मानुष वर्षों को देवताओं का एक वर्ष मानकर तथा उसकी संज्ञा 'दिव्यसंवत्सर'=(सौरसंवत्सर) होने से एक महती भ्रान्ति को जन्म दिया और 'परिवर्त युग' का ऐतिहासिक मान प्रायः विस्मृत हो गया तथा चतुर्युग में ३६० का गुणा किया जाने लगा, जिससे चतुर्युग और परिवर्त युग दोनों की ऐतिहासिकता नष्ट हो गई। और ७१ परिवर्त युग के अंक को किस प्रकार चतुर्युग और स्वायम्भुव मनु के साथ जोड़ दिया गया, यह आगे स्पष्ट करेंगे।

परिवर्तयुग का भ्रामक नाम चतुर्युग

निम्न श्लोक में परिवर्त युग का अधूरा नाम प्रयुक्त हुआ है—

चतुर्विंशे युगे रामो वसिष्ठेन पुरोधसा।

शनैः-शनैः विस्मृति के कारण युग (=परिवर्त युग) को चतुर्युग समझ लिया गया। उदाहरणार्थ मरुत्त आवीक्षित्, वैवस्वत मनु से एकादश परिवर्तयुग (३६०×११=३९६० वर्ष) पश्चात् हुए, परन्तु वर्तमान पुराणपाठ में उसे एकादश चतुर्युग का एकादश द्वापर बना दिया गया—

चतुर्युगे त्वतिक्रान्ते मनोर्ह्येकादशे प्रभो।
अथावशिष्टे तस्मिंस्तु द्वापरे संप्रवर्तिते।
मरुत्तस्य नरिष्यन्तस्तस्य पुत्रो दमः किल॥

(ब्रह्माण्ड०)

जब यह भ्रान्ति दृढ़ हो गई तब चतुर्युग के १२००० वर्षों में परिवर्त युग के ३६० वर्षों को दिव्य वर्ष मानकर उसमें परस्पर गुणा किया जाने लगा। मानुष (सौर) वर्ष को मूलपुराण पाठों में 'दिव्य वर्ष' और परिवर्त युग को 'दिव्यसंवत्सर-युग' कहा गया था। परन्तु 'परिवर्त युग' पाठ का उत्तरकाल में प्रायः लोप हो गया और 'दिव्यसंवत्सरयुग' (जो ३६० मानुष वर्षों का था) उसे 'दिव्यवर्ष' मान लिया गया। पुराण के निम्न पाठ में मूलतः दिव्यसंवत्सरयुग (=परिवर्तयुग=३६० मानुष वर्ष) का उल्लेख था—

त्रीणि वर्षशतान्येव षष्टिवर्षाणि यानि च।
दिव्यः संवत्सरो ह्येष मानुषेण प्रकीर्तितः॥
(ब्रह्माण्ड० १।७।१६)

यहां निश्चय ही 'दिव्यसंवत्सरयुग' का उल्लेख है, जैसा कि सप्तर्षियुग को 'सप्तर्षिवत्सर' और उसके 'मानुष'वर्षों को 'दिव्यवर्ष' भी कहा गया है—

सप्तर्षीणां युगं ह्येतद्दिव्यया संख्यया स्मृतम्॥
(वायु० ६६।४।६)

त्रीणि वर्षसहस्राणि मानुषेण प्रमाणतः।
त्रिंशदधिकानि तु मे मतः सप्तर्षिवत्सरः॥
(ब्रह्माण्ड०)

अतः इस प्रसंग—ऐतिहासिकगणनासन्दर्भ में युग और संवत्सर तथा 'मानुष' और 'दिव्य' शब्द समानार्थक है, परन्तु उनको भिन्नार्थक समझने से ही भ्रान्ति उत्पन्न हुई।

प्राचीन पुराण पाठों में छः प्रकार के प्रकाश (दिव्य) युगों का वर्णन था—

१. पंचसंवत्सरात्मक युग=पंचवत्सर=५ वर्ष।
२. षष्टिवत्सर=बार्हस्पत्ययुग=६० वर्ष।
३. परिवर्तयुग=दिव्यसंवत्सर=३६० वर्ष।
४. सप्तर्षियुग=सप्तर्षिवत्सर=२७०० या ३०३० वर्ष।
५. ध्रुवयुग=ध्रुवसंवत्सर=६०६० वर्ष।
६. चतुर्युग संवत्सर=देवयुग=१२००० मानुष वर्ष।

स्पष्ट है 'युग' और 'संवत्सर' शब्द समानार्थक थे, अतः इसी भ्रान्ति से चतुर्युग के १२००० मानुषवर्ष दिव्यवर्ष माने जाने लगे और उनमें ३६० (वर्ष) का गुणा किया जाने लगा, तब १२००० मानुषवर्षों के चतुर्युग को ४३ लाख २० सहस्र वर्षों का 'काल्पनिक युग' बना दिया गया। पुनः मन्वन्तर को ७१ 'चतुर्युग' का क्यों माना जाने लगा, यह आगे स्पष्ट करेंगे।

'परिवर्तयुग' का भ्रामक नाम 'कलियुग'

वाक्य में अधूरे प्रयुक्त नाम से किस प्रकार भ्रान्तियां उत्पन्न होती हैं, इसका सर्वोत्तम उदाहरण 'परिवर्त युग' शब्द है। पुराणों के ही उत्तरकालीन प्रतिलिपिकर्ताओं ने उसे 'कलियुग' भी बना दिया—

तदाऽप्यहं भविष्यामि गंगाद्वारे कलेर्धुरि।
ततोऽप्यहं भविष्यामि अत्रिर्नाम युगान्तिके।
(वायु० २३।१४४)

वायुपुराण के माहेश्वरावतारयोगसंज्ञक २३वें अध्याय में प्रमुखरूप से २८ वेदव्यासों और उनके शिष्यों का उल्लेख है। वहां पर 'मूलपरिवर्तयुग' शब्द को उत्तरकालीन वर्तमानपाठों में भ्रान्तिवश 'कलि' 'द्वापर' 'त्रेता' और 'चतुर्युग' बना दिया गया है, तथापि मूलपाठ 'परिवर्तयुग' या 'पर्यायपुग' ही अधिक सुरक्षित रह गया है—

ततस्तस्मिंस्तदा कल्पे वाराहे सप्तमे प्रभोः।
मनुर्वैवस्वतो नाम तव पुत्रो भविष्यति ॥
तृतीये द्वापरे चैव यदा व्यासस्तु भार्गवः।
चतुर्थे द्वापरे चैव यदा व्यासोऽगिराः स्मृतः।
पंचमे द्वापरे चैव व्यासस्तु सविता यदा।
परिवर्त्ते पुनः षष्ठे मृत्युर्व्यासो यदा प्रभुः।
सप्तमे परिवर्ते तु यदा व्यासः शतक्रतुः।
तदाऽप्यहं भविष्यामि कलौ तस्मिन् युगान्तिके।
जैगीषव्येति विख्यातः सर्वेषां योगिनां वरः।
वसिष्ठश्चाष्टमे व्यासः परिवर्ते भविष्यति।
परिवर्तेऽथ नवमे व्यासः सारस्वतो यदा।
दशमे द्वापरे व्यासस्त्रिधामा नाम नामतः।
ततोऽप्यहं भविष्यामि, अत्रिर्नाम युगान्तिके।
त्रयोदशे पुनः प्राप्ते परिवर्ते क्रमेण तु।
धर्मो नारायणो नाम व्यासस्तु भविता यदा।
सुरक्षणो यदा व्यासः पर्याये तु चतुर्दशे ॥
तत्रापि मम ते पुत्रा भविष्यन्ति कलौ युगे।
ततः सप्तदशे चैव परिवर्ते क्रमागते।
तदा भविष्यति व्यासो नाम्ना देवकृतंजयः।
ततस्त्वेकोनविंशे तु परिवर्ते क्रमागते।
व्यासस्तु भविता नाम्ना भरद्वाजो महामुनिः।
परिवर्ते त्रयोविंशे तृणबिन्दुर्यदा मुनिः।
व्यासो भविष्यति ब्रह्मा तदाऽहं भविता पुनः।
परिवर्ते चतुर्विंशे ऋक्षो व्यासो भविष्यति।
तदाऽहं भविता ब्रह्मन् कलौ तस्मिन् युगान्तिके।
पंचविंशे पुनः प्राप्ते परिवर्ते यथाक्रमम्।
वासिष्ठस्तु यदा व्यासः शक्तिर्नाम भविष्यति।

षड्विंशे परिवर्ते तु यदा व्यासः पराशरः।
सप्तविंशतितमे प्राप्ते परिवर्ते क्रमागते।
जातूकर्ण्यो यदा व्यासो भविष्यति तपोधनः।
अष्टाविंशे पुनः प्राप्ते परिवर्ते क्रमागते।
यदा भविष्यति व्यासो नाम्ना द्वैपायनः प्रभुः॥

उपर्युक्त वायुपुराणपाठ में मूलपाठ पर्याप्त सुरक्षित है। ऐतिहासिक तथ्य प्रकट है कि क्रमशः प्रत्येक 'परिवर्तयुग' में एक 'व्यास' का प्रादुर्भाव हुआ, वही व्यास अपने युग का 'राष्ट्रकवि' या महर्षि था। मूलयुग का नाम 'परिवर्तयुग' ही था। शनैः-शनैः पाठभ्रंशता उत्पन्न होने लगी और 'परिवर्तयुग' की संज्ञा कहीं 'द्वापर' कहीं 'कलि' और कहीं 'त्रेता' तथा 'चतुर्युग' बना दी गई। **जब 'परिवर्तयुग' को 'चतुर्युग' बना दिया गया तो समस्त ऐतिहासिक गणना काल्पनिक बन गई।**

उपर्युक्त वायुपुराण सन्दर्भ से स्पष्ट है कि परस्पर व्यासों में लाखों या करोड़ों वर्षों का अन्तर नहीं था, न ही उनके मध्य में कोई कृतयुग, त्रेता या द्वापर या कलियुग थे। प्रत्येक 'व्यास' अपने 'पूर्वव्यास' का शिष्य था। निश्चय ही उनकी आयु दीर्घ थी—अनेक शताब्दियां, वह आयु लाखों या करोड़ों वर्षों की नहीं थी। उदाहरणार्थ चतुर्थव्यास बृहस्पति आंगिरस, तृतीय व्यास उशना भार्गव (शुक्राचार्य) के शिष्य थे। पंचम व्यास—विवस्वान्, चतुर्थ व्यास बृहस्पति के शिष्य थे। षष्ठ व्यास वैवस्वत यम— अपने पिता विवस्वान्—पंचमव्यास के शिष्य थे। सप्तम व्यास शतक्रतु इन्द्र, षष्ठव्यास वैवस्वतयम के शिष्य थे। यही परम्परा २८ युग (परिवर्तयुग) पर्यन्त कृष्णद्वैपायनव्यास तक चलती रही और व्यास पीढ़ी-दर-पीढ़ी होते रहे। अतः गुरु-शिष्य या पिता-पुत्र में चतुर्युग (१२००० वर्ष या ४३२०००० वर्षों) का अन्तर मानना कितनी भ्रष्ट, धृष्ट एवं असत्य कल्पना है, इसको कोई भी बुद्धिमान् व्यक्ति सोच सकता है।

अतः प्रत्येक व्यास एक परिवर्तयुग (३६० मानुषवर्ष) में हुआ न कि चतुर्युग में, जैसी कि वर्तमानपुराणपाठों से मिथ्याधारणा बनती है। प्रजापति कश्यप या उनके पौत्र वैवस्वत मनु से पाराशर्य व्यास तक २८ परिवर्तयुग (३६० × २८ = १००८० वर्ष) व्यतीत हुए।

एकसप्ततिपरिवर्तयुग और स्वायम्भुवमनु का समय

परिवर्त या परिवृत्त ? (पाठत्रुटि)

यह परिवर्त युगगणना स्वायम्भुवमनु से आरम्भ हुई थी, न कि वैवस्तमनु

से। यह ध्यातव्य है कि मूलपाठ 'परिवर्त' था, उसको उत्तरकाल में 'परिवृत्त' बना दिया गया, यथा पुराणपाठ द्रष्टव्य है—

स वै स्वायम्भुवः पूर्वपुरुषो मनुरुच्यते।
तस्यैकसप्ततियुगं मन्वन्तरमिहोच्यते ॥ (ब्रह्माण्ड० १।२।९)

यह मूलपाठ सही माना जा सकता है, परन्तु 'परिवर्तयुग' को केवल 'युग' कह देने से अन्य पाठों में उसे चतुर्युग बना दिया गया—

एषां चतुर्युगानां तु गणना ह्येकसप्ततिः। (वायु० ५८।११५)

इस श्लोक के साथ (वर्तमान पाठों में) 'परिवर्त' का अशुद्ध पाठ 'परिवृत्त' भी मिलता है—

क्रमेण परिवृत्तास्तु मनोरन्तरमुच्यते ॥ (वायु० ५८।११५)
परिवृत्ते युगे तस्मिस्ततस्ताभिः प्रणश्यति ॥
एषां चतुर्युगानां च गणिता ह्येकसप्ततिः।
क्रमेण परिवृत्तास्तु मनोरन्तरमुच्यते ॥
(ब्रह्माण्ड० १।२।३२।११६)

लेकिन मूलपाठ 'परिवर्त' ही था, इनके साथ (आगे के) श्लोकों से भी यह सिद्ध है कि—

यथा युगानां परिवर्तनानि, चिरप्रवृत्तानि युगस्वभावात्।
तथा न संतिष्ठति जीवलोकः, क्षयोदयाभ्यां परिवर्तमानः ॥
(ब्रह्माण्ड० १।२।३२।१२०)

सभी प्रकार विचार करने से स्पष्ट और सिद्ध होता है कि **मूलपाठ 'एकसप्ततिपरिवर्तयुग'** ही था, उसको पूर्वोक्त कारणों भ्रमों से 'एकसप्ततिचतुर्युग' कल्पित किया गया। निश्चय ही स्वायम्भुवमनु से पाराशर्य व्यासपर्यन्त ७१ परिवर्तयुग (३६० × ७१ = २५५६०) या छब्बीस सहस्र मानुषवर्ष व्यतीत हुए थे, यह ब्रह्माण्डपुराण (१।२।२९।१९) के निम्नपाठ में सुरक्षित रह गया है—

"षड्विंशतिसहस्राणि वर्षाणि मानुषाणि तु ॥"

प्राचीनमूलपुराण पाठों में ऐतिहासिक गणना मानुषवर्षों में ही थी, जैसाकि वायुपुराण और ब्रह्माण्डपुराण में 'मानुषवर्ष' शब्द को बारम्बार दुहराया गया है।

ब्रह्माण्डपुराण (१।२।३५।७३) के अनुसार स्वायम्भुवमनु से भगवान् प्रभु कृष्णद्वैपायन व्यास पर्यन्त ७१ परिवर्तयुग व्यतीत हुए थे। वैवस्वतमनु से पाराशर्य-व्यास तक २८ परिवर्तयुग व्यतीत हुए थे। वैवस्वत और स्वायम्भुवमनु तथा

वैवस्वत मनु में ४३ परिवर्तयुगों का अन्तर था अर्थात् लगभग सोलहसहस्रवर्ष। अतः स्वायम्भुवमनु अब से लगभग ३१ या ३२ सहस्र वर्ष पूर्व हुए। पुरानी बाइबिल में उल्लिखित स्वायम्भुवमनु (आत्मभू=आदम) और मनु वैवस्वत (नूह) की आयु सत्य प्रतीत होती है, तदनुसार आदम ९३० वर्ष जीवित रहा—And all the days that Adam lived were nine hundred and thirty years (Holy Bible, p. 9)

नूह (मनु वैवस्वत) की आयु ९५० वर्ष थी—"And all the days of Nooh were nine hundred and fifty years. And he died·" (Holly Bible, p. 13)

बाइबिल के प्रमाण से भी सिद्ध है कि चौदह मनुओं में परस्पर तीस-तीस करोड़ वर्षों का अन्तर नहीं था, जैसा कि वर्तमान अनेक पुराणपाठों में यह भ्रान्ति विद्यमान है और इसको पोंगापन्थी एवं सब कुछ तथाकथित वैज्ञानिक मानते हैं और उक्त पुराणप्रमाण से पृथिवी की आयु दो अरब वर्ष बताते हैं। यह सब उक्त भ्रान्तिमय मन्वन्तरगणना का परिणाम है। स्वायम्भुवमनु का समय हमने पुराण प्रकरण से ऊपर बता दिया, अब अन्य मनुओं का समय निर्दिष्ट करते हैं।

चौदह मनुओं का समय (कालान्तर)

पुराणानुसार स्वायम्भुवमनु से पाराशर्यव्यासपर्यन्त ७१ परिवर्तयुग (७१ × ३६० २५९२० वर्ष) या लगभग छब्बीस सहस्र वर्ष व्यतीत हुए, यह पहले ही निर्णय किया जा चुका है, इससे अन्य मनुओं का समय भी अनुमानित किया जा सकता है। चौदह मन्वन्तरों में ९९४ चतुर्युग की कल्पना कितनी निरर्थक है, यह व्यासपरम्परा और परिवर्तयुगगणना से सिद्ध हो चुका है। इस मिथ्या-धारणा का मूल यह वाक्य था कि स्वायम्भुवमनु से महाभारतकाल तक ७१ युग (=परिवर्तयुग) व्यतीत हुए। उत्तरकालीन पुराणवेत्ताओं ने इसका यह अर्थ लगाया कि प्रत्येक मनु ७१ चतुर्युग के अन्तर से हुआ तथा अभी केवल छः मनु व्यतीत हो चुके हैं और सातवां वैवस्वतमनु का साल चल रहा है, लेकिन निम्न विवेचन से यह धारणा पूर्णतः निस्सार सिद्ध होगी।

पुराणों के ऐतिहासिक परिशीलन से सिद्ध होता है कि सभी चौदह मनु भूतकाल के प्राणी थे, इन मनुओं में कोई निश्चित कालान्तर नहीं था। कुछ मनु पिता-पुत्र थे, कुछ सहोदर भ्राता थे, तो कुछ अन्य निकटसम्बन्धी। कुछ मनुओं में परस्पर एक शताब्दी का अन्तर भी नहीं था—यथा चार सावर्णि सहोदर भ्राता एवं स्वभावतः समकालिक व्यक्ति थे। यह आगे स्पष्ट होगा।

गलत क्रम

वर्तमान पुराणपाठों में चौदह मनुओं का यह क्रम प्रदर्शित किया गया है—(१) स्वायम्भुवमनु, (२) स्वारोचिषमनु, (३) उत्तममनु, (४) तामसमनु, (५) रैवतमनु, (६) चाक्षुषमनु, (७) वैवस्वतमनु, (८) सावर्णिमनु, (९) दक्ष-सावर्णिमनु, (१०) ब्रह्मसावर्णिमनु, (११) धर्मसावर्णिमनु, (१२) रुद्रसावर्णिमनु, (१३) रौच्यमनु और (१४) भौत्यमनु।

उपर्युक्त नामों से ही पाठकों एवं विद्वानों को आभास हो जायेगा कि उपरोक्त सभी मनु भूतकाल में हो चुके थे, यथा अष्टम सावर्णिमनु, विवस्वान् के पुत्र और वैवस्वतमनु के भ्राता थे और दक्ष, ब्रह्मा (प्रजापति कश्यप), धर्म प्रजापति और उनके पौत्र रुद्र आदि सभी भूतकालिक महापुरुष थे और परस्पर इनमें सम्बन्ध भी था, यथा कश्यप (ब्रह्मसावर्णिमनु) दक्ष प्राचेतसमनु के जामाता और शिष्य थे, धर्म प्रजापति रुद्र के पितामह थे और दक्ष तथा कश्यप के समकालिक थे और इनके भविष्यकालिक होने का प्रश्न ही उत्पन्न नहीं होता।

प्रारम्भिक चार मनु

प्रारम्भिक चार मनु प्रथम स्वायम्भुवमनु के ज्येष्ठपुत्र प्रियव्रत के वंशज ही थे—

स्वारोचिषश्चोत्तमोऽपि तामसो रैवतस्तथा।
प्रियव्रतान्वया ह्येते चत्वारो मनवः स्मृताः॥

(ब्रह्माण्ड० १।२।३६।६५)

समय

मानव इतिहास की प्रथम सहस्राब्दी में आज से तीस हजार वर्ष पूर्व ७० परिवर्त (प्राक्महाभारतकाल) पूर्व ये चारों मनु हो चुके थे, क्योंकि चारों मनु प्रथम मनु—स्वायम्भुव के निकट वंशज ही थे। अतः मनुओं या मन्वन्तरों में तीस करोड़ वर्षों का अन्तर मानना उत्तरकालीन भ्रामककलपना है, जो ७१ परिवर्तयुग के यथार्थ कालमान की विस्मृति से उत्पन्न हुई।

चाक्षुषमनु का समय

स्वायम्भुवमनु के द्वितीय पुत्र मनु के ३५ परिवर्त पश्चात् लगभग द्वादश सहस्र वर्ष पश्चात् और आज से लगभग १८००० वर्ष पूर्व, दक्ष और कश्यप से लगभग दो सहस्रवर्ष पूर्व चाक्षुषमनु हुए। चाक्षुषमनु की पांचवीं पीढ़ी में आज से

लगभग १७००० वर्ष पूर्व, आदिराजा पृथु वैन्य हुए, जिनके नाम से यह भूमण्डल 'पृथिवी' कहलाया।

दक्षादि छः मनु

चाक्षुषमनु से पूर्व पुलह और भृगु के वंश में क्रमशः रुचि प्रजापति और भूति प्रजापति हुए। रुचि के पुत्र हुए कर्दम, जिनके ऊपर नाम रौच्य या दक्ष (आदिम-प्रथम) भी थे। कर्दम ही रौच्य मनु थे। रौच्य मनु और भौत्य मनु प्रायः स्वायम्भुवमनु के समकालिक थे। कर्दम (रौच्यमनु) के पुत्र परमर्षि कपिल थे और भौत्य मनु के वंशज वाचावृद्धसंज्ञक ऋषियों को स्वायम्भुव मन्वन्तर में बतलाया है—

वाचावृद्धानृषीन् विद्धि मनोः स्वायम्भुवस्य वै।
(ब्रह्माण्ड० ३।४।१।१०९)

कर्दम (रौच्यमनु) ने स्वायम्भुव मनु के समय में आदिदक्ष के नाम से विपुल प्रजायें उत्पन्न कीं—

पूर्वकाले महाबाहो ये प्रजापतयोऽभवन्।
कर्दमः प्रथमस्तेषाम्............॥
(रामायण ३।१४।६,७)

भागवतपुराण के अनुसार कर्दम (रौच्यमनु), स्वायम्भुवमनु के दौहित्र थे। वर्तमान अनेक पुराणपाठों में रौच्य और भौत्य मनुओं को भविष्यकालिक बताया गया है। उनको भविष्यकालिक मानना कितना निरर्थक है, यह इन तथ्यों से ज्ञात हो जाता है।

अतः स्वायम्भुवमनु, स्वारोचिषमनु, उत्तममनु, तामसमनु, रैवतमनु, भौत्यमनु और रौच्यमनु (कर्दम = दक्षप्रथम) प्रायः समकालिक एवं परस्पर सम्बन्धी एवं निकट वंशज थे और स्वायम्भुवमनु के अनन्तर, प्रथम सहस्राब्दी में, आज से लगभग ३० हजार वर्ष पूर्व हो चुके थे, अतः इनमें से कोई भी मनु भविष्यकालिक नहीं हो सकता।

मन्वन्तर को दीर्घकालिक परिमाण (३० करोड़ वर्ष) का मानना उत्तरकालीन भ्रष्टतम कल्पना है, जो 'परिवर्तयुग'सम्बन्धी विस्मृतिजन्य भ्रान्ति से उत्पन्न हुई। सृष्टि-इतिहास या मानव-इतिहास का ३० करोड़ वर्षवाले किसी मन्वन्तर से कोई सम्बन्ध नहीं। चौदह मनुओं में प्रायः कुछ शताब्दियों या सहस्राब्दियों का कालान्तर था। वैसे भी करोड़ों वर्ष की घटनाओं की स्मृति मानव इतिहास में रखना पूर्णतः असम्भव है, क्योंकि लगभग १८ हजार वर्षों में पृथिवी

पर हिमप्रलय या जलप्रलय होती है, और एक करोड़ अस्सी हजार वर्ष में महाप्रलय जिसमें पृथिवीतल की समस्त जीवसृष्टि नष्ट हो जाती है, अतः पृथिवी पर लाखों या करोड़ों वर्षों का इतिहास मिल ही नहीं सकता। स्वायम्भुवमनु आज से लगभग ३१ हजारवर्षपूर्व हुए और उनसे पूर्व का मानव इतिहास पूर्णतः अज्ञात है।

पांच सावर्णमनु

वर्तमान पुराणपाठों में जिन पांच सावर्णमनुओं को भविष्यकालिक मनु बताया गया है, वे परमेष्ठी प्रजापति कश्यप के ही पुत्र थे, यह वही कश्यप थे, जिनका पुत्र हिरण्यकशिपु दैत्यराज था और देवराज इन्द्र तथा विष्णु वामन इन्हीं कश्यप के परमतेजस्वी पुत्र थे। अतः कश्यप भविष्यकालिक नहीं, तब उनके पांच पुत्र—सावर्णमनु भविष्यकालिक कैसे हो सकते हैं—

सावर्णमनवस्तात पंच तांश्च निबोध मे।
परमेष्ठिसुतास्तात मेरुसावर्णतां गताः।
दक्षस्यैते दौहित्राः प्रियायास्तनया नृप ॥ (ब्रह्माण्ड०)

वायुपुराण (४।१००।५०।६०) में प्रथम मेरु सावर्णिमनु को दक्ष (प्राचेतस) पुत्र रोहित का पुत्र बतलाया है—

प्रथमं मेरुसावर्णेर्दक्षपुत्रस्य वै मनोः।
दक्षपुत्रस्य पुत्रास्ते रोहितस्य प्रजापतेः ॥

कश्यप, प्रजापति, ब्रह्मा, स्वयम्भू, परमेष्ठी एक ही व्यक्ति के नाम थे, जैसा कि अथर्ववेद (५३।५४ सूक्त) में स्पष्ट लिखा है—

कालो ह ब्रह्मा भूत्वा बिभर्ति परमेष्ठिनम्।
कालः प्रजा असृजत कालो अग्ने प्रजापतिम्।
स्वयम्भूः कश्यपः कालात्.........॥

कश्यप को ही परमेष्ठी कहा जाता था, निम्न वैदिक एवं इतिहासपुराण प्रमाण द्रष्टव्य हैं—

(१) प्रजापतिरिन्द्रमसृजत—आनुजावरं देवानाम्।
(तैत्तिरीय ब्राह्मण २।२।१०।६१)

(२) स परमेष्ठी प्रजापतिं पितरमब्रवीत्। स प्रजापतिरिन्द्रं पुत्रमब्रवीत् (माध्य० शतपथ ब्राह्मण ११।१।६।१७)

हरिवंशपुराण में स्पष्ट लिखा है—

यं कश्यपः सुतवरं परमेष्ठी व्यजीजनत्। (हरि० १।३।६)

तथाकथित अष्टममनु

रौहित (रोहितपुत्र) मेरुसावर्णि वैवस्वमनु के पिता विवस्वान् का अग्रज भ्राता ही था। अतः चाचा (मेरुसावर्णि) और भतीजे (वैवस्वतमनु) में कितना कालान्तर हो सकता है, यह सामान्य बुद्धि से ही सोचा जा सकता है, अतः मन्वन्तर का वर्तमान आंकड़ा—३० करोड़ ६७ लाख २० हजार वर्ष—पूर्णतः गपोड़ा है, इसमें रत्तीभर भी सत्यता नहीं है। यह अतिभ्रष्ट कल्पना है, जो परिवर्तयुग सम्बन्धी विस्मृति से उत्पन्न हुई, यह हम पूर्व संकेत कर चुके हैं। अतः पांच सावर्णिमनु परस्पर भ्राता एवं समकालिक थे और इनका समय आज से लगभग १५ हजार वर्ष पूर्व था।

दो वैवस्वतमनु

पांच सावर्णमनुओं में चार तो कश्यप के पुत्र थे और पांचवां सावर्णिमनु विवस्वान् का पुत्र एवं प्रसिद्ध वैवस्वतमनु—श्राद्धदेव का अनुज था—

मनुरेवाभवन्नाम्ना सावर्ण इति चोच्यते।
द्वितीयो यः सुतस्तस्याः स विज्ञेयः शनैश्चरः।
(हरिवंश १।६।२०)
वैवस्वतेऽन्तरे राजा द्वौ मनू तु विवस्वतः॥
(वायुपुराण)
मनुर्वैवस्वतः पूर्वं श्राद्धदेवः प्रजापतिः।
यमश्च यमुना चैव यमजौ संबभूवतुः॥ (हरि० १।६।८)

श्राद्धदेव– वैवस्वतमनु के इक्ष्वाकु आदि दश पुत्र प्रसिद्ध हैं। उनके अनुज सावर्णमनु के अन्य दो नाम—श्रुतकर्मा और शनैश्चर—पुराणों में उल्लिखित हैं।

अतः सावर्णमनु या चौदह मनुओं में कोई भी भविष्यकालिक नहीं।

मेरी खोजों से चौदह मनुओं का कालक्रम और क्रम इस प्रकार था—

१. स्वायम्भुवमनु
२. स्वारोचिषमनु
३. उत्तममनु
४. तामसमनु
५ रैवतमनु
६. रौच्यमनु=कर्दम=आदिदक्ष
७. भौत्यमनु
८. चाक्षुषमनु=चरिष्णुमनु

९. धर्मसावर्णिमनु=धर्मप्रजापति
१०. दक्षसावर्णि=प्राचेतस दक्षमनु
११. ब्रह्मसावर्णि=ब्रह्मा=कश्यप=परमेष्ठी=प्रजापति
१२. मेरुसावर्णिमनु
१३. वैवस्वतमनु=श्राद्धदेव
१४. सावर्णिमनु=श्रुतकर्मा=शनैश्चर

चतुर्युग और परिवर्तयुग कालगणना का सामंजस्य

स्वल्प व्यवधान के साथ परिवर्तयुगगणना का चतुर्युगगणना से सामंजस्य बैठाया जा सकता है। यहां पर हम वैवस्वतमन्वन्तर के २८ परिवर्तयुगों का चतुर्युगगणना से सामंजस्य स्थापित करेंगे।

हम, पुराणपाठों से पहले ही सिद्ध कर चुके हैं कि जिस प्रकार बृहस्पतियुग को षष्टिवत्सर, सप्तर्षियुग को सप्तर्षिवत्सर और ध्रुवयुग (=९०९० वर्ष) को 'ध्रुवसंवत्सर' कहा जाता था उसी प्रकार 'परिवर्तयुग' को 'दिव्यसंवत्सर' (सौर युग) कहा जाता था, इस प्रकार 'परिवर्तयुग' का वर्षमान था—३६० मानुष-वर्ष—

त्रीणि वर्षशतान्येव षष्टिवर्षाणि यानि तु।
दिव्यः संवत्सरो ह्येष मानुषेण प्रकीर्तितः॥ (ब्रह्माण्ड०)

'परिवर्तयुग' को 'दिव्य संवत्सर' कहने से ही महती भ्रान्तियां उत्पन्न हुईं, जिनका विवेचन हम पूर्वपृष्ठों पर कर चुके हैं। इस भ्रान्ति के कारण परस्पर गुरुशिष्यों या पितापुत्रों में एक चतुर्युग (४३२०००० वर्ष) का अन्तर कल्पित किया गया, जैसाकि शुक्राचार्य बृहस्पति और जातूकर्ण्य—कृष्णद्वैपायन आदि व्यासों के उदाहरणों से स्पष्ट है। वैवस्वतमनु से पाराशर्य व्यास (महाभारतकाल) तक २८ युग (परिवर्तयुग)=१००८० वर्ष व्यतीत हुए थे, जिसको भ्रान्तिवश २८ चतुर्युग माना गया—

अष्टाविंशद्युगाख्यास्तु गता वैवस्वतेऽन्तरे।
(वायुपुराण ३७।४३)

अन्य प्रमाणों से भी ज्ञात होता है कि नहुष (जो मनु की पांचवीं पीढ़ी में हुआ) से युधिष्ठिरपर्यन्त केवल दशसहस्रवर्ष व्यतीत हुए थे—

दशवर्षसहस्राणि सर्परूपधरो महान्।
विचरिष्यसि पूर्णेषु पुनः स्वर्गमवाप्स्यसि॥
(उद्योगपर्व १७।१४)

अतः चतुर्युग केवल १२००० (द्वादश सहस्र) मानुषवर्षों के थे। चतुर्युग का प्राचीनतम उल्लेख अथर्ववेद में मिलता है—

"शतं तेऽयुतं हायनान् द्वे युगे
त्रीणि चत्वारि कृण्मः।" (८।२।२१)

मूल में चतुर्युग १०००० (दशसहस्र) वर्ष के ही थे, परन्तु उत्तरकाल में उनमें सन्धिकाल (२००० वर्ष) जोड़कर उन्हें १२००० वर्षों का माना जाने लगा—

चत्वार्याहुः सहस्राणि वर्षाणां च कृतं युगम्।
तस्य तावच्छती संध्या संध्यांशं संध्यया समः।
इतरेषु ससंध्येषु ससंध्यांशेष च त्रिषु।
एकापायेन वर्तन्ते सहस्राणि शतानि च।
तेषां द्वादशसाहस्री युगसंख्या प्रकीर्तिताः।
अत्र संवत्सराः सृष्टा मानुषेण प्रमाणतः॥
(ब्रह्माण्ड० १।२।२९।२०-३०)

चत्वार्याहुः सहस्राणि वर्षाणां तत्कृतं युगम्।
तथा त्रीणि सहस्राणि त्रेतायां मनुजाधिप।
द्विसहस्रं द्वापरे तु शतं तिष्ठति सम्प्रति॥
(भीष्मपर्व)

ब्रह्माण्डपुराण के वर्तमानपाठ में भी चतुर्युग के द्वादशसहस्रवर्षों को स्पष्ट ही मानुषवर्ष कहा गया है—

तेषां द्वादशसाहस्री युगसंख्या प्रकीर्तिता।
कृतं त्रेता द्वापरं च कलिश्चैव चतुष्टयम्।
अत्र संवत्सराः सृष्टा 'मानुषेण' प्रमाणतः॥
(ब्रह्माण्ड० १।२।२९।१८)

चतुर्युग के द्वादशसहस्रवर्ष मानुषवर्ष ही थे, इसका अकाट्य प्रमाण है, वायुपुराण का वह उल्लेख, जिसमें कहा गया है कि जिस प्रकार वेद चतुष्पाद है, युग चतुष्पाद है, उसी प्रकार पुराण चतुष्पाद है तथा पुराण (वायुपुराण) में १२००० श्लोक हैं उसी प्रकार चतुष्पाद युग में १२००० मानुषवर्ष होते हैं—

एवं द्वादशसाहस्रं पुराणं कवयो विदुः।
यथा वेदश्चतुष्पादश्चतुष्पादं यथा युगम्।
चतुष्पादं पुराणं तु ब्रह्मणा विहितं पुरा॥

ऋग्वेद में प्रजापति (कश्यप) रचित द्वादशसहस्र ऋचायें थीं तथा अग्निचयन अतियज्ञ में इतनी ही इष्टकायें रखी जाती थीं—

"द्वादश बृहती सहस्राणि एतावत्यो ह्यर्चो या: प्रजापतिसृष्टा: ।"
(शतपथब्राह्मण १०।४।२।२३)

प्राचीन यूनानी इतिहासकार हैरोडोट्स ने भी लिखा है कि किसी इतिहास के अनुसार मनु से सैथोस (हैरोडोट्स कालिक) तक केवल ११३९० वर्ष व्यतीत हुए थे—The priests told Herodotus that there had been 391 generations both of kings and High priests from Manos (मनु) to Sethos and this he calculates at 11390 years (The Ancient History of East by P. Smith, p. 59).

अत: लोकमान्य तिलक ने ठीक ही लिखा—"In other words, Manu and Vyasa, obviously speak of a period of 10000 or including the Sandhyas of 12000 ordinary or human (not divine) years; from the beginning of Krita to the end of Kaliage, and it is remarkable that in the Atharvaveda, we should find a period of 10000 years apparently assigned to one Yuga (The Arctic Home in the Vedas, p. 350)

पारसीपरम्परा में भी चारयुग बारहसहस्रवर्ष के ही मान्य थे। (द्रष्टव्य Encyclopedia of Religion and Ethics (Ages). मैक्सिको की प्राचीन मयसभ्यता में प्रथमयुग (कृतयुग) ४८०० वर्षों का माना जाता था। (द्रष्टव्य Hindu America, page 34. भिक्षु चमनलाल द्वारा)

वैव० मनु का समय

परिवर्तयुगगणना से वैवस्वत मनु का समय आज से लगभग १५ हजार वर्ष पूर्व और महाभारतयुद्धकाल से दशसहस्रवर्ष पूर्व निश्चित होता है। (२८ परिवर्तयुग × ३६० = १००८० वर्ष) अत: परिवर्तयुगगणना तथा चतुर्युगकाल गणना में पूर्ण सामंजस्य बैठ जाता है।

प्राचीन घटनाक्रम—परिवर्तनयुग में उल्लिखित

पुरातन मौलिक पुराणों में प्राचीनतम (प्राग्महाभारतीय) घटनाक्रम परिवर्त-युगों में ही उल्लिखित होता था। इस समय केवल वायुपुराण और ब्रह्माण्डपुराण के प्राचीन अंशों में, केवल निदर्शनरूप में ही परिवर्तयुगों का उल्लेख अवशिष्ट रह गया है, इनमें सर्वाधिक विस्तृत निदर्शन वायुपुराण—२३वें अध्याय में है

जहां माहेश्वरावतारयोग के सन्दर्भ में व्यासपरम्परा का वर्णन है और २८ परिवर्तयुगों के कुछ प्रमुख व्यक्तियों के नाम उल्लिखित हैं। अन्य, ब्रह्माण्डपुराण के निदर्शन द्रष्टव्य हैं, यथा हिरण्यकशिपु आदिदैत्य सम्राट् का नृसिंह द्वारा वध चतुर्थयुग (परिवर्तयुग) में हुआ—

चतुर्थ्यां तु युगाख्यामापन्नेषु सुरेष्वथ।
संभूतः स समुद्रान्ते हिरण्यकशिपोर्वधे॥

(ब्रह्माण्ड० २।३।७३।७३)

चरकसंहिता के अनुसार प्रजापति दक्ष और रुद्र का संघर्ष द्वितीय परिवर्तयुग में हुआ था—

द्वितीये हि युगे शर्वमक्रोधमास्थितम्।
पश्यन् समर्थश्चोपेक्षां चक्रे दक्षः प्रजापतिः॥

(च० सं० ३।१५,१६)

पुराणों के अनुसार दैत्यासुरों का साम्राज्य एवं प्रभाव दशयुग (परिवर्तयुग) पर्यन्त (३६०×१०=३६००=१४००० वि० पू० से १०४०० विक्रमपूर्वतक) रहा—

युगाख्या दश सम्पूर्णा ह्यासीदव्याहतं जगत्।
दैत्यसंस्थमिदं सर्वमासीद्दशयुगं किल।
अशपत्तु ततः शुक्रो राष्ट्रं दशयुगं पुनः॥
युगाख्या दश सम्पूर्णा देवानाक्रम्य मूर्धनि॥

(ब्रह्माण्डपुराण)

असुर साम्राज्य वृषपर्वादानवेन्द्र के समय तक प्रायः अक्षुण्ण रहा, अब इन्द्र ने अपनी पुत्री जयन्ती का विवाह वृद्ध आचार्य शुक्र उशना (असुर पुरोहित) से कर दिया। जयन्ती की पुत्री देवयानी का विवाह ययाति नाहुष के साथ हुआ और वृषपर्वा की पुत्री शर्मिष्ठा भी ययाति की पत्नी थी। यह समय महाभारतकाल से लगभग आठ सहस्र वर्ष पूर्व (या ११००० विक्रमपूर्व) था, यद्यपि इन्द्र का प्रभाव इससे तीन युग पूर्व—सप्तम परिवर्तयुग में बढ़ चुका था—

बलिसंस्थेषु लोकेषु त्रेतायां सप्तमे युगे।
दैत्यैस्त्रैलोक्याक्रान्ते तृतीयो वामनोऽभवत्॥

(वायुपुराण)

इसी प्रकार, पुराणों में दत्तात्रेय का समय दशम परिवर्त, मान्धाता का पन्द्रहवें परिवर्त में, परशुराम का उन्नीसवें परिवर्त में, दाशरथिराम का चौबीसवें परिवर्त में और कृष्ण वासुदेव का अट्ठाइसवें परिवर्त में निर्दिष्ट है।

अतः 'परिवर्तयुग' की खोज प्राचीन इतिहास की अतिमहत्त्वपूर्ण मौलिक खोज है, जिससे महाभारतपूर्व के महापुरुषों का समय सरलता से निश्चित किया जा सकता है ।

युगाख्यापद की व्याख्या

वेद में मानुषयुग के साथ दैव्ययुग, देवयुग या दिव्ययुग का उल्लेख है, जिसको पुराणों के भ्रान्त पाठों में प्रायः 'देववर्ष' कहा गया है ।

पुराणों विशेषतः वायुपुराण और ब्रह्माण्डपुराणों के अनेक प्रकरणों में व्यास-परम्परा वर्णन[1], असुर साम्राज्यकाल[2] तथा अन्य अनेक प्रकरणों में यत्र तत्र **'युगाख्या'** का उल्लेख है । प्रत्येक युग या परिवर्त में एक व्यास हुआ, परम्परा-क्रम से प्रत्येक व्यास पूर्वव्यास का शिष्य था, यथा जातूकर्ण्य व्यास के शिष्य अन्तिम कृष्णद्वैपायनव्यास शिष्य थे, इसी प्रकार चतुर्थ व्यास बृहस्पति के गुरु तृतीय व्यास उशना शुक्र थे, बृहस्पति के शिष्य पंचम व्यास विवस्वान् (सबिता=सूर्य) हुए, अतः व्यासपरम्परा गुरुशिष्यगण थे, ऐसे तीस व्यास, परमेष्ठी प्रजापति कश्यप से कृष्णद्वैपायन पर्यन्त हुए । अतः युगाख्या या युग या परिवर्त का वर्षमान लाखों करोड़ों वर्ष नहीं हो सकता । यह युग या परिवर्त ३६० वर्ष का था, जिसे भ्रान्ति से कहीं त्रेता, कहीं द्वापर, कहीं कलि और कहीं चतुर्युग बना दिया । पुनः ७१ चतुर्युग का एक मन्वन्तर माना गया, जिसका स्पष्टीकरण पूर्वपृष्ठ पर किया जा चुका है । **युगाख्या** को ही पुराणकारों ने उत्तरकालीन पाठों में **'चतुर्युग'** बना दिया—

युगाख्या या समुद्दिष्टा प्रागेतस्मिन्मया नृपाः ।
कृतत्रेतासंयुक्तं चतुर्युगमिति स्मृतम् ।।
(ब्रह्माण्ड० १।२।३५।१७२)

असुरराज्यकाल = दशयुगाख्यापर्यन्त

पुराणों में उल्लिखित है कि देवों से पूर्व असुरों का पृथिवी पर अखण्ड साम्राज्य दशयुग पर्यन्त रहा—

हिरण्यकशिपुर्दैत्यस्त्रैलोक्यं प्राक्प्रशासति ।
बलिनाऽधिष्ठितं राष्ट्रं पुनर्लोकत्रये क्रमात् ।

---

१. (क) दैव्यं मानुषा युगाः (शु० यजु० १२।१)
(ख) या ओषधीः पूर्वा जाता देवेभ्यस्त्रियुगं पुरा (ऋ० १०।९७।१)
(ग) "तद्धैवं विद्वान् ब्राह्मणः सहस्रं देवयुगानि उपजीवति" (तै० ब्रा० २)
(घ) वायुपुराण – त्रयोदश अध्याय

२. ब्रह्माण्ड (२।३।७२)

सख्यमासीत्परं तेषां देवानामसुरैः सह ।
युगाख्या दश सम्पूर्णा ह्यासीदव्याहतं जगत् ।[1]
दैत्यसंस्थमिदं सर्वमासीद्दशयुगं किल ।
अशपत्तु ततः शुक्रो राष्ट्रं दशयुगं पुनः ।[2]
युगाख्या दश सम्पूर्णा देवानाक्रम्य मूर्धनि ।[3]

"हिरण्यशिपु दैत्यराज त्रैलोक्य का अधिपति था, पुनः प्रह्लाद और विरोचन के पश्चात् त्रैलोक्य पर बलि का शासन हुआ। दशयुगपर्यन्त दैत्यों का अनुल्लंघित शासन रहा है और उनकी (प्रायः) देवों के साथ मैत्री रही। दशयुग पर्यन्त असुरों का विश्व पर अधिकार रहा। तदनन्तर शुक्राचार्य ने शाप दिया कि तुम्हारा (असुरों का) राष्ट्र दशयुगपर्यन्त ही रहेगा। दशयुगपर्यन्त दैत्यगण देवों के सिर पर शासन करते रहे।" हिरण्यकशिपु, प्रह्लाद और बलि—ये तीनों ही दैत्यों के तीन इन्द्र थे।[3]

हिरण्यकशिपु का राज्यकाल (अवधि)

पुराणों में आदि दैत्यराज हिरण्यकशिपु के तपःकाल, राज्यकाल और अन्तकाल का उल्लेख मिलता है। यह वर्षसंख्या का अत्यन्त दीर्घ और भ्रामक एवं परस्पर विरोधी भी है। उसका राज्यकाल पुराणों में इस प्रकार लिखा है—

हिरण्यकशिपू राजा वर्षाणामर्बुदं बभौ।
तथा शतसहस्राणि ह्यधिकानि द्विसप्ततिः।
अशीतिश्च सहस्राणि त्रैलोक्येश्वरोऽभवत्।
(ब्रह्माण्ड० २।३।७२।८९)

"एक अरब, दो लाख और पचास हजार वर्ष पर्यन्त हिरण्यकशिपु त्रैलोक्येश्वर रहा।" इतनी दीर्घ संख्या का रहस्य अज्ञात है यद्यपि इससे प्रकट होता है कि उसका राज्यकाल दीर्घ था, जो आगे स्पष्ट किया जायेगा।

हिरण्यकशिपु का तपःकाल ही एक लाख वर्ष बताया गया है—

शतं वर्षसहस्राणां निराहारो ह्यधशिराः ।
वरयामास ब्रह्माणं तुष्टं दैत्यो वरेण ह ।
(ब्रह्माण्ड० २।३।४।१४)

---

१. ब्रह्माण्ड० (२।३।७२।६८-६९)
२. वही, (२।३।७२।९२) तथा
वही, (२।३।७२।५१)
३. इन्द्रास्त्रयस्ते विख्याता असुराणां महौजसः ।
(वायु० ९७।९१)

"हिरण्यकशिपु दैत्य ने निराहार और अधःशिरा होकर तप किया और ब्रह्मा (कश्यप पिता) को तुष्ट करके वरदान मांगा।"

परन्तु हरिवंशपुराण (१।४१।४०-४१) का पाठ प्राचीनतर और सही प्रतीत होता है—

पुरा कृतयुगे राजन् सुरारिर्बलदर्पितः।
दैत्यानामादिपुरुषश्चचार तप उत्तमम्।
दशवर्षसहस्राणि शतानि दश पंच च॥

"कृतयुग में दैत्यराज हिरण्यकशिपु ने ग्यारहसहस्र पांचसौवर्ष तप (ब्रह्मचर्य) किया।"

आगे पुराणों एवं अन्य वैदिकग्रन्थों के प्रामाण्य से सिद्ध करेंगे कि उपर्युक्त ११५०० वर्ष नहीं दिन थे, जिनके कुल मानुषवर्ष केवल ३२ होते हैं $\left(\frac{११५००}{३६०} = ३२\right.$ वर्ष)। अतः हरिवंशपुराण का अंक सत्य है कि हिरण्यकशिपु ने ३२ वर्ष तप या ब्रह्मचर्य किया।[1]

पुराणों में युगाख्या के उल्लेख से हिरण्यकशिपु का राज्यकाल अनुमानित किया जा सकता है।

हमने अन्यत्र सिद्ध किया है कि कश्यप और दक्षप्रजापति से युगाख्या प्रारम्भ हुई, जिसको भ्रान्तिवश पं० भगवद्दत्त ब्रह्मा से मानते थे, परन्तु उन्होंने भी माना "महाभारत में लिखा है कि ययाति प्रजापति से दसवां था[2]। यह संख्या तभी पूर्ण होती है, जब गणना प्रचेता से आरम्भ की जाय। प्रचेता, दक्ष, अदिति (+कश्यप), विवस्वान्, मनु, इला, पुरूरवा, आयु, नहुष, ययाति। इससे प्रतीत होता है कि महाभारत का युगारम्भ प्रचेता से होता है[3]।" अतः पुराणोल्लिखित युगारम्भ प्रचेता या दक्ष प्राचेतस से हुआ और परमेष्ठी प्रजापति कश्यप दक्ष प्राचेतस के समकालिक थे ही। कश्यप के ज्येष्ठ पुत्र हिरण्यकशिपु का जन्म

---

१. देवासुर युग में ३२ वर्ष—ब्रह्मचर्य-तप की प्रथा थी, जैसाकि इन्द्र और विरोचन द्वारा ऐसा ही किया गया—"इन्द्रो वै देवानाम् अभिवव्राज। विरोचनोऽसुराणां। तौ ह द्वात्रिंशतं वर्षाणि ब्रह्मचर्यमूषतुः"
(छान्दोग्य० ८।७)

२. ययातिः पूर्वजोऽस्माकं दशमो यः प्रजापतेः।
(आदिपर्व ७१।१)

३. भा० बृ० इ० भा० १, पृ० ६५।

प्रथम युग के अन्त में हो गया था और वह प्रथम युग के अन्त या द्वितीय युग के प्रारम्भ में राज्याभिषिक्त हुआ होगा और चतुर्थी युगाख्या (या चतुर्थपरिवर्त) में नृसिह द्वारा उसका वध हुआ—

चतुर्थ्यां तु युगाख्यायामापन्नेषु सुरेष्वथ ।
संभूतः स समुद्रान्ते हिरण्यकशिपोर्वधे ॥[1]

अतः हिरण्यकशिपु के समय तक संभवतः इन्द्र का जन्म भी नहीं हुआ था, परन्तु रुद्र उस समय विद्यमान थे, जो नृसिह के पुरोहित थे[2]। रुद्र और दक्ष का संघर्ष भी द्वितीय युग में हुआ था—

द्वितीये हि युगे शर्वमक्रोधव्रतमास्थितम् ।
पश्यन् समर्थश्चोपेक्षां चक्रे दक्षः प्रजापतिः ॥[3]

अतः हिरण्यकशिपु का राज्यकाल तीन युग—(३६०×३ - १०८०) लगभग एक सहस्र वर्ष पर्यन्त रहा। आधुनिक मापदण्ड से इतना दीर्घराज्यकाल असम्भव प्रतीत होता है, परन्तु प्राचीनकाल में दिव्य पुरुषों की आयु सहस्रवर्ष से अधिक होती थी, यह 'दीर्घायु पुरुष' प्रकरण में सिद्ध करेंगे।

यहां यह सब अनुशीलन एवं पुराणप्रामाण्य प्रदर्शित करने का हमारा उद्देश्य है युगाख्या का सत्य वर्षमान निश्चित करना और चतुर्युगादि का वर्षमान लाखों वर्ष नहीं था, वह केवल १२००० मानुष वर्ष था।

सप्तमयुग में बलिबन्धन

प्रह्लाद दैत्येन्द्र और बलि का सम्मिलित राज्यकाल पुनः हिरण्यकशिपु के समान अविश्वसनीय एवं भ्रान्तिमय कथित है—

पारम्पर्येण राजा बलिर्वर्षार्बुदं पुनः ।
षष्टिश्चैव सहस्राणि त्रिंशच्च नियुतानि च ।
बले राज्याधिकारस्तु यावत्कालं बभूव ह ।
प्रह्लादो निर्जितो भूच्च तावत्कालं सहासुरः ॥
(ब्रह्माण्ड० २।३।९०-९१)

"परम्परा से बलि का राज्यकाल एक अरब तीस लाख साठ हजार वर्ष रहा, इसी मध्य में देवों ने प्रह्लाद को विजित कर लिया था।"

---

१. ब्रह्माण्ड० (२।३।७३।७३)
२. द्वितीयो नरसिंहोऽभूद्रुद्रपुरस्सरः। (वायुपुराण)
३. चरकसंहिता, चिकित्सास्थान (३।१५,१६)

परन्तु, अन्यत्र, प्रामाणिक पुराणपाठ से ज्ञात होता है कि प्रह्लाद, विरोचन और बलि का राज्यकाल सप्तमयुग तक रहा—

बलिसंस्थेषु लोकेषु त्रेतायां सप्तमे युगे ।
दैत्यैस्त्रैलोक्याक्रान्ते तृतीयो वामनोऽभवत् । (वायु)

"सप्तम युग में संसार के बलि के अधीन हो जाने पर और त्रैलोक्य के दैत्यों से आक्रान्त होने पर तृतीय (वैष्णव अवतार) वामन हुआ ।"

प्रह्लाद, विरोचन और बलि का शासन पंचमयुग से सप्तम युगपर्यन्त, लगभग १००० वर्ष रहा। जब अकेले हिरण्यकशिपु का राज्यकाल इतना ही था तो तीन दैत्य पीढ़ियों का इतना राज्यकाल असंभव नहीं कहा जा सकता ।

प्रथम युग का आरम्भ दक्ष, कश्यपादि से, आज से १४००० वि०पू० हुआ । अत: उपर्युक्त युगगणना से हिरण्यकशिपुवध १३००० वि०पू० के आसपास और बलिबन्धन १२००० वि०पू० के निकट हुआ ।

उपर्युक्त युगपद्धति (युगाख्या) की गणना अनुसार अन्य कुछ महापुरुषों का समय पुराणों में इस प्रकार निर्दिष्ट है—

त्रेतायुगे तु दशमे दत्तात्रेयो बभूव ह ।

"दशम त्रेतायुग (परिवर्त) में दत्तात्रेय हुए ।"

........पञ्चदश्यां तु त्रेतायां संबभूव ह ।
मान्धाता चक्रवर्तित्वे तस्थौ उतथ्यपुरस्सरः ।

"पन्द्रहवें त्रेतायुग (परिवर्त) में चक्रवर्ती मान्धाता हुआ ।"

एकोनविंशे त्रेतायां सर्व क्षत्रान्तकोऽभूत्
जामदग्न्यस्तथा षष्ठो विश्वामित्रपुरस्सरः ।

"उन्नीसवें त्रेतायुग में सर्वक्षत्रान्तक षष्ठ वैष्णव अवतार हुआ—जामदग्न्य राम—विश्वामित्र को आगे करके ।"

चतुर्विंशे युगे रामो वसिष्ठेन पुरोधसा ।
सप्तमो रावणवधस्यार्थे जज्ञे दशरथात्मजः ।।

"चौबीसवें युग में वसिष्ठ पुरोहित को आगे करके सप्तम वैष्णव अवतार रावणवधहेतु दाशरथि राम का हुआ ।"

उपर्युक्त वायुपुराणपाठ में युग या परिवर्त को 'त्रेतायुग' कहा गया है, जिससे महती भ्रान्ति होती है कि इन युगों के सम्बन्ध में कृतयुग, द्वापर और कलियुग भी हुए होंगे । परन्तु यह भ्रान्ति है, जो सच्चा इतिहासवेत्ता समझ सकता है कि मान्धाता और दाशरथि राम या जामदग्न्य राम और दाशरथि राम में कितने युग, पीढ़ियों या काल का अन्तर था । अन्यत्र पुराणपाठ में उपर्युक्त युगाख्या को द्वापर या कलि भी कहा है, यह पूर्वपृष्ठ पर संकेत कर चुके हैं, अत:

द्वापर और कलिसम्बन्धो भ्रान्तपाठों के साथ 'त्रेतायुग' सम्बन्धी पाठ भी भ्रान्त है। इस भ्रान्ति के समूल नाश हेतु वक्ष्यमाण एवं उद्ध्रियमाण वेदव्यास परम्परा द्रष्टव्य है—जो वायुपुराण २३ अध्याय, श्लोक ११४-२२६ तक वर्णित है, उसका केवल आवश्यक अंश पूर्व उद्धृत किया गया है।

उपर्युक्त वेदव्यास परम्परा के प्रारम्भिक पांच व्यासों के लिये 'द्वापर' संज्ञा का प्रयोग हुआ है, जबकि पूर्वोद्धृत वैष्णव अवतार सम्बन्धी प्रकरण में 'त्रेतायुग' का प्रयोग किया गया है—

प्रथमे द्वापरे ब्रह्मा व्यासो बभूव ह।
पुनस्तु यमदेवेशो द्वितीये द्वापरे प्रभुः।
तृतीये द्वापरे चैव यदा व्यासस्तु भार्गवः।
चतुर्थे द्वापरे चैव व्यासोऽङ्गिरा स्मृतः।
पंचमे द्वापरे चैव व्यासस्तु सविताऽभवत्।

इसके आगे १ परिवर्त संज्ञा का प्रयोग हुआ है—

सप्तमे परिवर्ते तु यदा व्यासः शतक्रतुः।
परिवर्तेऽथ नवमे व्यासः सारस्वतो यदा॥

अतः युगाख्या की वास्तविक संज्ञा 'परिवर्त' या 'पर्याय' थी, परन्तु भ्रान्ति से उसे 'त्रेता' या 'द्वापर' कहा गया।

उपर्युक्त पाठ (वायुपुराण, अध्याय २३) में केवल २८ व्यासों के नाम हैं, परन्तु इसी पुराण के अन्त में २९ व्यासों के नाम हैं—

१. ब्रह्मा	११. शरद्वस्	२१. निर्यन्तर
२. वायु (मातरिश्वा)	१२. त्रिविष्ट	२२ वाजश्रवा (गौतम)
३. उशना शुक्र	१३. अन्तरिक्ष	२३. सोमशुण्य
४. बृहस्पति	१४. वर्षि	२४. तृणबिन्दु
५. विवस्वान् सविता	१५. त्र्यक्ष्यारुण	२५. ऋक्ष=वाल्मीकि
६. यम वैवस्वत	१६. धनंजय	२६. शक्ति वसिष्ठ
७. शक्र इन्द्र	१७. कृतंजय	१७. पाराशर
८. वसिष्ठ	१८. तृणंजय	२८. जातूकर्ण
९. सारस्वत-अपान्तरतया	१९. भरद्वाज (भारद्वाज)	२९. द्वैपायन पाराशर्य
१०. त्रिधामा	२०. गौतम	

पुराणों के अनेक भ्रष्टपाठों के कारण वेदव्यास नामों में पर्याप्त विकृतियां हैं। इनमें क्रमव्यत्यास के साथ नाम पाठान्तर की त्रुटियां भी हैं, विशेषतः द्वादश व्यास से पच्चीसवें व्यास ऋक्ष वाल्मीकि तक के नामभेद या पाठान्तर द्रष्टव्य हैं—

१२. भरद्वाज = सनद्वाज = सुतेजा = त्रिविष्ट
१४. धर्म = सुचक्षु = वर्णी = नारायण
१६. धनंजय = संजय
१८. ऋतंजय = ऋजीषी = जय = तृणंजय
२१. वाचस्पति = नियन्तर = हर्यात्मा = उत्तम
२२. वाजश्रवा = शुक्लायन
२३. सोमशुष्मायन = सोमशुष्म
१४. ऋक्ष = वाल्मीकि

उपर्युक्त पाठान्तरों के कारण एक या दो व्यासों के नाम लुप्त हो गये, प्रत्येक व्यास एक युग या परिवर्त = ३६० वर्ष के अन्तर या मध्य में हुआ। वर्तमान पाठों में कुल व्यासों की संख्या अट्ठाईस बताई गई है।

अष्टाविंशतिकृत्वो वै वेदा व्यस्ता महर्षिभिः।

ब्रह्माण्ड० १।२।३५ तथा वायु० अध्याय २३, विष्णुपुराण ३।३ द्रष्टव्य।

उपर्युक्त पाठान्तरों में एक एक व्यास के चार चार तक नाम मिलते हैं, अतः एक व्यास का नाम लुप्त होना कोई असंभव नहीं है। यह संभव है कि ऋक्ष और वाल्मीकि पृथक्-पृथक् हों, अथवा भरद्वाज, सनद्वाज, धनंजय, संजय आदि में कोई एक पृथक् हो, अतः व्यासपरम्परा में न्यूनतम ३० व्यास हुए, युगपरिवर्त का चतुर्युग गणना तभी सामंजस्य बैठता है। ऋक्ष वाल्मीकि से पाराशर्य व्यास तक २४०० वर्षों (द्वापर की अवधि) में न्यूनतम छः व्यास होने चाहियें।

वेदव्यासपरम्परा का विस्तृत वर्णन, यद्यपि चतुर्थ अध्याय में होगा, यहां पर इसके संक्षिप्त सोदाहरण विवरण का उद्देश्य यह प्रदर्शित करना है कि व्यास अवतरणकाल का तथाकथित युग एक चतुर्युग १२००० मानुषवर्ष या ४३२०००० तैंतालीस लाख बीस सहस्र में नहीं हुआ। प्रत्येक व्यास में १२००० वर्षों का अन्तर ही अत्यधिक है। तीस व्यास केवल १०८०० वर्ष (३६० × ३० = १०८००) में हुए, पुनः द्वादश सहस्र या तैंतालीस लाख बीस सहस्र वर्षों का अन्तर कितना बुद्धिगम्य या संभव है, यह सोचा जा सकता है।

युगसम्बन्धी भ्रान्त एवं अनैतिहासिक धारणा का कारण यही था कि ३० युगों में प्रत्येक का वर्षमान ३६० वर्ष था, और चतुर्युग पद्धति से चारों युगों का वर्षमान १२००० मानुषवर्ष था। यही युगपद्धति का ऐतिहासिक रूप था, परन्तु वास्तविक युगगणना की विस्मृति के कारण यह माना जाने लगा कि प्रत्येक व्यास एक चतुर्युग (४३ लाख २० हजार) वर्ष के अन्तर से हुआ। पुनः भ्रान्तिवश मानुषवर्षों को या परिवर्त को युग (३६० वर्ष का) न समझकर एक चतुर्युग समझा गया और तुर्रा यह कि वह भी मानुष (१२००० वर्ष) नहीं, उसमें भी ३६०×(१२०००) गुणा करके ४३ लाख २० हजार बना दिया गया। ३६० वर्ष और ४३ लाख २० हजार में कितना अन्तर है, यह पूर्व संकेत कर चुके हैं। यह विचारणीय है कि प्रत्येक व्यास, पूर्व व्यास का शिष्य था, यथा प्रथम व्यास ब्रह्मा कश्यप का शिष्य था, वायु=प्रध्वंसन (प्रभंजन) मातरिश्वा, उसका शिष्य हुआ शुक्राचार्य, उसका शिष्य हुआ बृहस्पति, और उसका शिष्य हुआ देव विवस्वान्। अन्तिम व्यास को देख लीजिये—पाराशर्य कृष्णद्वैपायन जातूकर्ण का शिष्य था। गुरु शिष्य में न तो १२००० वर्षों का अन्तर हो सकता है और न ४३ लाख २० हजार वर्ष का। ३६० वर्ष का अन्तर ही कठिनाई से बोधगम्य है। ऐसी स्थिति में युग (परिवर्त) का मान ३६० वर्ष और चतुर्युग का मान १२००० मानुषवर्ष ही था, यही बुद्धिगम्य एवं ऐतिहासिक तथ्य था और ऐसा ही था, यही आगे विविध प्रमाणों से सिद्ध करेंगे।

पुराणपाठों में एतद्विषयक भ्रान्ति के उदाहरण

युगाख्या (३६० वर्ष) को किस प्रकार चतुर्युग (१२००० मानुषवर्ष को दिव्य समझकर=४३२०००० वर्ष) बना दिया, निम्न व्याख्येय एवं वक्ष्यमाण उदाहरणों से और अधिक स्पष्ट करेंगे। ब्रह्माण्डपुराण के निम्न उदाहरण में किस प्रकार चतुर्युग, द्वापर और त्रेता को एकादश परिवर्त (युग) से भ्रान्त किया गया है, एतदर्थ तत्सम्बन्धी सम्पूर्ण श्लोक उद्धृत करते हैं—

> चतुर्युगे त्वतिक्रान्ते मनो ह्येकादशे प्रभो।
> अथावशिष्टे तस्मिंस्तु द्वापरे संप्रवर्तिते।
> मरुत्तस्य नरिष्यन्तस्तस्य पुत्रो दमः किल।
> राज्यवर्द्धनकस्तस्य सुधृतिस्ततस्तो नरः।
> केवलञ्च ततस्तस्य बन्धुमान् वेगवांस्ततः।
> बुधस्तस्याभवद्यस्य तृणबिन्दुर्महीपतिः।
> त्रेतायुगमुखे राजा तृतीये संबभूव ह॥

(ब्रह्माण्ड० २।३।८।३४-३६)

पुराणलिपिकार ने एक ही सांस में ११ पीढ़ियों में चतुर्युग (एकादश), द्वापर और तृतीय—त्रेतायुग के दीर्वकाल को व्यतीत कर दिया। ११ पीढ़ियां अधिक से अधिक एक सहस्र वर्ष में हो सकती हैं, परन्तु पुराणप्रतिलिपिकर्त्ता ने इसके लिए चतुर्युग+द्वापर+त्रेता (४३२००००+१२९६०००+८६४००० =६४८०००० चौंसठ लाख अस्सी हजार वर्ष) बताया। इसका अर्थ हुआ कि प्रत्येक राजा ने छः लाख वर्ष तक राज्य किया। इस प्रकार की अविश्वसनीय बात में न कोई विश्वास कर सकता है, न करना चाहिए।

और उपर्युक्त श्लोक में 'त्रेतायुगमुखे राजा तृतीये संबभूव ह' भी भ्रष्ट है, क्योंकि यही तृणबिन्दु अन्यत्र त्रयोविंश युग का व्यास बताया गया है—'परिवर्ते त्रयोविंशे तृणबिन्दुर्यदा मुनिः' अतः तृणबिन्दु का समय तेईसवें युग में था न कि तृतीय युग—यह तथ्य व्यासपरम्परा के साथ राजवंशपरम्परा से भी सिद्ध है। इस उदाहरण से प्रकट होता है कि वर्तमान पुराणपाठों में कितनी अशुद्धि एवं पाठ-च्युति या पाठभ्रष्टता है।

सत्य है कि सम्राट् मरुत्त ग्यारहवें युग (३६×११=३९६० वर्ष—१४०००—३९६०=१००४० वि० पू०) या मान्धाता से लगभग डेढ़ सहस्राब्दी (१५०० वर्ष) पूर्व हुआ और सम्राट् तृणबिन्दु २३वें या २४ युग में ५७२०—५३६० वि० पू०, रामदाशरथि और रावण से एक युग (३६० वर्ष) पूर्व हुए थे, क्योंकि तृणबिन्दु, रावण के पितामह पुलस्त ऋषि के ससुर थे, जिनकी कन्या इलविला का विवाह ऋषि के साथ हुआ था[1]।

अतः उत्तरकाल में पुराण में ३६० **वर्ष का 'युग'** किस प्रकार भ्रान्त किया गया, यह इसका ज्वलन्त उदाहरण है।

इसी प्रकार की भ्रान्ति का एक और उदाहरण पुराण में द्रष्टव्य है—

द्वितीये द्वापरे प्राप्ते शौनहोत्रः प्रकाशिराट्।
पुत्रकामस्तपस्तेपे नृपो दीर्घतपास्तथा।[2]

इस काशिराज दीर्घतपा शौनहोत्र के वंश में क्रमशः धन्व, धन्वन्तरि, केतुमान्, भीमरथ, दिवोदास और प्रतर्दन हुए। यह हमने अन्यत्र प्रमाणित किया है कि वैश्वामित्र अष्टक, औशीनरि शिवि और वसुमना ऐक्ष्वाक प्रतर्दन के समकालिक राजा थे और सत्रहवें युग में हुए। अतः शौनहोत्र काशिराज दीर्घतपा

---

१. तस्य चेलविला कन्यालम्बुषागर्भसंभवा।
(ब्रह्माण्ड० २।३।८।३७)

२. वायु० (९२।१८)

का समय द्वादशयुग से पूर्व नहीं हो सकता, अतः **'द्वादश'** का **'द्वितीय'** पाठ अत्यन्त भ्रष्ट है और परिवर्त या युग के स्थान पर 'द्वापर' पद का प्रयोग भी अतिभ्रामक है।

अतः पुराणों के युगसम्बन्धी पाठ में गहन अनुसंधान की आवश्यकता है और इन पंक्तियों का लेखक साधनों के अभाव में अत्यन्त कष्टमय स्थितियों में भी घोर प्रयत्न करके 'युगगणना' के ऐतिहासिक रूप का पुनरुद्धार कर रहा है और यह पुस्तक इसी दिशा में एक लक्षित प्रयत्न है। युगपद्धति या युगगणना पर इतना तमः या धूल जम चुकी है कि इसको दूर करने के लिए सतत महान् यत्न करना पड़ेगा।

उपर्युक्त भ्रान्तिमय गणना के कारण ही—यथा वेदव्यासपरम्परा—के आधार पर अत्युत्तरकालीन धार्मिक आचार्यों ने, यथा हेमाद्रिसंकल्प में यह संकल्प पढ़ा जाता है – 'स्वायम्भुवादि चतुर्दशमन्वन्तराणां मध्ये वैवस्वतमन्वन्तरे चतुर्णां युगानां मध्ये अष्टाविंशतितमे कलियुगे तत्प्रथमचरणे गताब्दे' इत्यादि। और यह मानकर वैवस्वतमनु का समय आज से बारह करोड़ वर्ष पूर्व निश्चित किया जाता है।

वैवस्वतमनु का समय १२ करोड़ वर्ष पूर्व मानने की मान्यता अन्य कारणों (यथा वंशावली) के अतिरिक्त **आधुनिक विज्ञान की इस खोज से ही निरस्त या असिद्ध हो जाती है कि बीस हजार से अस्सी हजार वर्ष के मध्य में पृथिवी की स्थावर जंगम (वनस्पति-जीव) सृष्टि सूर्यदाह या हिमप्रलय में नष्ट हो जाती है[1]। इस खोज से विकासवाद का भी पूर्ण खण्डन होता है।** वैवस्तमनु से बृहद्बल (महाभारतकाल) तक लगभग १०० पीढ़ियां हुईं, बारह करोड़ वर्ष में केवल १०० पीढ़ियां ही हुई हों, यह सर्वथा अबुद्धिगम्य है। इस अवधि में तथाकथित ३३२ चतुर्युग होते और इनमें पीढ़ियां भी इतनी होती कि जिनकी गणना कोई पुराणकार स्मरण नहीं रख सकता। अतः प्रत्येक मन्वन्तर में ७१ चतुर्युग, आदि की गणना इसी भ्रान्तिवश हुई कि वेदव्यासपरम्परा के ३० युगों को ३०

---

१. Lyell or others, are favourable and 21000 years must elapse between two successive accurance of winter at aphelion and four Inter Glacial epodes, the dur tion must be extended to soming like 80000 years (Arctic Home in the Vedas, p. 30)

पुराणों में प्रजा के सूर्यदाह से नष्ट होने का बारम्बार उल्लेख है—

युगान्ते सर्वभूतानि दग्ध्वैव वसुरुल्वणः। (महा० पृ० १५७)

चतुर्युग समझा गया। वेदव्यास परस्पर गुरु-शिष्य थे, इनमें तीन या चार शर्तो का अन्तर भी आधुनिक मानदण्ड से अधिक और अविश्वसनीय है, पुनः लाखों वर्षों का अन्तर (गुरु-शिष्य में) कैसे संभव है ?

युगगणना में भ्रान्ति के मूल कारण

अतः उत्तरकालीन या वर्तमान पुराणपाठों में ऐतिहासिक गणना में भ्रान्ति के निम्न तीन कारण थे—

प्रथम—वैदिक 'दिव्य-मानुष' शब्द

द्वितीय—पर्याय, परिवर्त-युग को चतुर्युग समझना या उसको उत्तरकाल में त्रेता, द्वापर या कलि संज्ञा प्रदान करना।

तृतीय—भ्रान्ति से उपर्युक्त दोनों गणनाओं का मिश्रण करना।

अर्थात् ऐतिहासिक युग या परिवर्त का वर्षमान ३६० वर्ष था, यही युग-पद्धति प्राग्महाभारतकाल में विशेषरूप से प्रचलित थी। आदिकाल (कश्यपदक्ष-काल) से महाभारतयुग तक ऐसे ३० युग व्यतीत हुए और प्रत्येक युग में एक व्यास अवतीर्ण हुआ। महाभारतकाल के आसपास चतुर्युग पद्धति (कृत=४८००, त्रेता=३६०० वर्ष, द्वापर=२४०० वर्ष) का प्राबल्य हो गया, तथापि व्यास ने पुराण में दोनों का पार्थक्य रखा और महाभारत में गणना प्रायः चतुर्युगीन पद्धति से की। महाभारतयुग तक दोनों गणना पद्धतियों के (३०×३६०=१०८००)=कृतत्रेताद्वापर=१०८०० वर्ष ही व्यतीत हुए। परन्तु उत्तरकालीन पुराण प्रक्षेपकारों या प्रतिलिपिकारों को भ्रान्तियां होती गई, अतः ३६० वर्ष वाले ३० युगों को पृथक् न समझकर चतुर्युग (=१२००० वर्ष) से गुणा करके यह कल्पना की कि यह गणना दिव्यवर्षों में है, मूल में ३६० वर्ष ऐतिहासिक युग का मान ही था, उसे गुणा करके १२०००×३६०=४३२०००० वर्ष बना दिया, जिससे चतुर्युग इतिहास की वस्तु न बनकर कल्पना लोक की वस्तु बन गये।

वर्ष का दिनपरक अर्थ—वैदिक दिव्यमानुष उभय संज्ञाओं ने भी भ्रान्ति उत्पन्न करने में सहायता की। पुराणों की वर्षगणना में भ्रम का मूल कारण तैत्तिरीय ब्राह्मण का यह वाक्य था—"**वर्षं देवानां यदहः**" यद्यपि इसका ऐतिहासिक गणना से कोई सम्बन्ध नहीं था, यह एक प्ररोचनावाक्य था, परन्तु, उत्तरकालीन ज्योतिषियों आदि ने भ्रान्तिवश, इसका सम्बन्ध पुराणोल्लिखित युगों-चतुर्युगों और परिवर्तों से जोड़कर उन्हें अनैतिहासिक किंवा काल्पनिक बना

दिया। प्राचीन इतिहास पुराणपाठों में मूल ऐतिहासिक गणना सामान्य मानुषवर्षों में ही थी, कुछ विशिष्ट उदाहरण द्रष्टव्य हैं—

(१) रामायणादि में राम का वनवासकाल सामान्य १४ वर्षों का ही कथित है, यह तथ्य सुप्रसिद्ध है, परन्तु उत्तरकाण्ड में एक बालक की आयु पांच सहस्र वर्ष कही गई है—

(क) अप्राप्तयौवनं बालं पंचवर्षसहस्रकम्।
अकाले कालमापन्नम्। (रामा० ७।७३।५)

(ख) दशरथ की आयु—षष्टिवर्षसहस्राणि जातस्य
मम कौशिक। (रामा० १।५१।१)

इस पर टीकाकार तिलक ने कहा है—**'वर्षशब्दोऽत्र दिनपरः' 'सहस्र-संवत्सरसत्रमुपासीत इतिवत् तेन षोडशवर्षबालकमित्येवायम्।'** इसी प्रकार राम का राज्यकाल ११००० दिन, जिसके लगभग ३१ वर्ष बनते हैं, परन्तु दिव्यवर्ष=१ दिन के घटाटोप में उसे ११००० वर्ष बना दिया—

दशवर्षसहस्राणि दशवर्षशतानि च।
रामो राज्यमुपासित्वा ब्रह्मलोकं प्रयास्यति।
(रामा० १।१)

परन्तु पुराणों में सर्वत्र ही ऐसा नहीं किया गया, यथा शुक्राचार्य ने जयन्ती के साथ दश मानुषवर्ष वास किया—

ततः स्वगृहमागत्य जयन्त्या सहितः प्रभुः।
स तया चावसद्देव्या दशवर्षाणि भार्गवः।
(ब्रह्माण्ड० २।३।७३।१२)

यहां तक कि अश्वघोष (३५० वि०पू०) के समय तक—(कनिष्क समकाल) तक यह तथाकथित 'दिव्यवर्षगणना' प्रचलित नहीं हुई थी—

विश्वामित्रो महर्षिश्च विगाढोऽपि महत्तपः।
दशवर्षाण्यहर्मेने घृताच्याप्सरसा हृतः॥
(बुद्धचरित ४।२०)

परन्तु अनेक बौद्ध, जैन और सूर्यसिद्धान्तादि ग्रन्थों में तथाकथित दिव्य वर्षगणना परिपाटी प्रविष्ट हो गई। यथा निदानसंज्ञक बौद्धग्रन्थ में २४ बुद्धों में कुछ की आयु, बुद्धघोष ने इस प्रकार बताई है—

प्रथम बुद्ध—दापंकर—आयु=एक लाखवर्ष दिन=२७७ वर्ष
द्वितीय बुद्ध—कौण्डिन्य= आयु=एक लाख वर्ष दिन=२७२ वर्ष

उस समय यह दिव्यगणना-सम्बन्धी रोग केवल भारतवर्ष में ही नहीं बैबीलोन (ईराक) सदृश असुर देशों में भी फैल गया था तभी तो वहां प्रसिद्ध इतिहासकार बैरोसस ने राजाओं के राज्यकाल को भारतीय पुराणों के सदृश सामान्य वर्षों को दिव्य वर्ष मानकर गणना की है[1]—

बैरोसस के अनुसार ही जलप्रलय से पूर्व ८६ राजाओं ने ३४०९० वर्ष राज्य किया और १० राजाओं या १० राजवंशों ने ४ लाख ३ हजार वर्ष राज्य किया।

दश राजाओं का राज्यकाल ४०३००० वर्ष = दिन = १११० वर्ष
राजा एललम (इलिल (= भरतपूर्वज) या पुरूरवा ऐल) =
राज्यकाल २८८०० वर्ष = दिन = ८० वर्ष राज्यकाल
राजा अलालगर = ३६००० = दिन = १०० वर्ष राज्यकाल
आठ राजाओं का राज्यकाल २४१२०० दिन = ६७० वर्ष

पुराणों के सदृश बैरोसस भी इसी भ्रान्त 'दिव्यगणना' पद्धति के चक्कर में फंस गया। तृतीय शतीपूर्व के इतिहासकार बैरोसस को दैत्येन्द्र असुर बलि के मन्दिर में जलप्रलयपूर्व और पश्चात् के राजाओं का विवरण सुरक्षित मिला था, जहां से नकल करके उसने अपना इतिहास ग्रन्थ लिखा था (द्रष्टव्य : हिस्ट्री आफ हिन्दुस्तान, टी० मौरिस, पृ० ३९९)।

मूल में उपर्युक्त वृत्तान्त दिनों में ही लिखा हुआ था, इतने पुरातन वृत्तान्त को पढ़ने या समझने में बैरोसस को भ्रान्ति या त्रुटि होना असंभव नहीं, इसी भ्रान्ति के कारण बैरोसस ने दिनों को वर्ष समझकर राजाओं का राज्यकाल हजारों लाखों वर्षों में लिखा, जिस प्रकार पुराणप्रक्षेपकारों ने सामान्य मानुषवर्षों को दिव्य वर्ष समझकर उसी प्रकार गणना की। हमने अपने अनुसंधान में संशोधन (शुद्ध) कर दिया है।

---

१. सूर्यसिद्धान्त का सम्बन्ध असुर मय से था, उसमें लिखा है कि मानुषवर्ष को दिव्य वर्ष बनाने की प्रथा आसुर देशों में भी थी—

In Eridu, Alulum became King and reigned 28800 years, Alalagar reigned 36000 years. Five cities were they. Eight Kings reigned 211200 years (The greatness that was Babylon, p. 35 by H.W.F. Saggs).

२. सुरासुराणामन्योऽन्यमहोरात्रं विपर्ययात्।
तत्षष्टिषड्गुणदिव्यं वर्षमासुरमेव च। (सूर्यसिद्धान्त १।१४)

कहीं कहीं पुराणों एवं वेदों में 'दिव्य' शब्द निरर्थक भी है—(१) सः (प्रजापतिः) ऊर्ध्वबाहुरधस्तात् भूम्यां शिरः कृत्वा दिव्यं वर्षसहस्रं तपोऽतप्यत' (काठक संहिता)। पुराणों में सप्तर्षियुग के २७०० वर्षों में 'दिव्य' शब्द निरर्थक ही है—सप्तर्षीणां युगं ह्येतद्दिव्यया संख्यया स्मृतम् (वायु० ९९।४१९) यथा हरिवंश (१।२६।१८) तथा वायुपुराण (९१।५) में पुरूरवा ने उर्वशी के साथ लगभग ६० वर्ष रमण किया—

तया सहावसद्राजा दश वर्षाणि चाऽष्ट च।
सप्त षट् सप्त चाष्टौ च दश चाष्टौ च वीर्यवान्॥
(वायु०)

वर्षाण्येकोनषष्टिस्तु तत्सक्ता शापमोहिता। (हरिवंश०)

विष्णुपुराण इसी ६० वर्ष को ६० सहस्र वर्ष कहता है—

"तया सह रममाणः षष्टिवर्षसहस्राण्यनुदिनप्रवर्द्धमानप्रमोदोऽवसत्।" (४।६)

अतः ऐसे स्थानों पर सहस्र पद निरर्थक या पूर्णार्थक है[1]।

परन्तु राजाओं के राज्यकालसम्बन्धी विवरणों में प्रायः वर्ष या सामान्य मानुषवर्ष को दिव्य वर्ष समझकर उसको पुनः ३६० से गुणा करके तथाकथित वर्ष (वास्तव में दिन) बना दिया है, यथा राम दाशरथि के राज्यकाल में ११००० वर्ष, वास्तव में दिन ही थे, जिनको ३१ वर्ष में ३६० का गुणा करके बनाया गया है।

राजाओं के राज्यकाल वर्ष सम्बन्धी और उदाहरण आगे लिखेंगे।

दीर्घसत्र सम्बन्धी मीमांसा

मीमांसादर्शनशास्त्र में 'सहस्रसंवत्सरात्मकसत्र' के विषय में सूत्रग्रन्थों एवं जैमिनीय मीमांसासूत्र में जो शास्त्रार्थ मिलता है—उससे भी वर्षों के दिन मानने की परम्परा पर अच्छा प्रकाश पड़ता है, इस सम्बन्ध में कात्यायन श्रौतसूत्र और जैमिनिमीमांसासूत्र में विभिन्न आचार्यों के मत उद्धृत किये हैं, जिससे ज्ञात होता

१. म०म० मधुसूदन ओझा ने 'अत्रिख्याति' में लिखा है—'एष त्रीणि वर्षसहस्राणि शक्तिविशेषलाभार्थमृक्षपर्वतेऽनुत्तमं तपस्तेपे इत्याहुः। तत्र सहस्रशब्दः पूर्णार्थकः 'सर्वं वै सहस्रम्' (श० ब्रा० ४।६।१।१५) इति श्रुतेः। पूर्णत्वं च वर्षाणां मासवासरादिभिरन्यूनव्यतिरिक्तत्त्वम्।

(अत्रिख्याति, पृ० ३)

है कि उस समय 'सहस्रसंवत्सर सत्र' के विषय में भारी विवाद था और आचार्यगण 'वर्ष' का 'दिनपरक' अर्थ मानने के पक्ष में थे—

कात्यायनसूत्र	जैमिनिमीमांसासूत्र
सहस्रसंवत्सरम्मनुष्याणामसम्भवात्	सहस्रसंवत्सरं तदायुषामसंभवा-
शास्त्रसम्भवादिति भारद्वाज:	न्मनुष्येषु कुलकल्प: स्यादिति
कुलसत्रमिति कार्ष्णाजिनि:	कार्ष्णाजिनेरेकस्मिन्नसम्भवात् ।
साम्युत्थानमिति लौगाक्षि:	संवत्सरो विचालित्वात् ।
अह्नां वाशक्यत्वात्[1]	मासा: प्रकृति: स्यादधिकारात् ।
	अहनि वाऽभिसंख्यत्वात्[2] ।

कोई सहस्रसंवत्सरसत्र को कुलसत्र मानता था, कोई साम्युत्थान (बीच में छोड़ता) और अन्त में यही मान्यता थी कि यहां संवत्सर का अर्थ 'दिन' ही है। यद्यपि सहस्रसंवत्सरात्मक सत्र महाभारतकाल में नहीं होते थे तथापि प्रजापति युग में प्रजापतियों ने ऐसे सहस्रसंवत्सरात्मक सत्र किये थे[3]। प्रथम प्रजापतिगण स्वायम्भुवमनु, मरीचि आदि के अतिरिक्त उत्तरकाल में परमेष्ठी प्रजापति कश्यप के पश्चात् 'सहस्रसंवत्सरात्मकयज्ञ' का प्रयत्न समाप्त हो गया, जैसाकि सूत्रकारों ने कहा है—'तदायुषामसंभवान्मनुष्येषु'। इसीलिये यह विवाद का विषय बन गया। तथापि यहां इसका उल्लेख इसलिये किया गया कि वेदाचार्य या मीमांसकगण 'दिन' को ही वर्ष (संवत्सर) भी मानते थे, इसीलिये भी संभवत: उत्तरकालीन पुराणपाठों में भ्रान्तिवश दिनों को वर्ष=(संवत्सर) बना दिया गया।

उपर्युक्त पृष्ठों पर भ्रान्ति के कुछ मूलकारणों पर प्रकाश डाला गया, अब आगे 'पुराणों में उल्लिखित' ऐतिहासिक युगमानों का यथार्थ विवेचन प्रस्तुत करते हैं कि किस किस युगमान का इतिहास गणना में प्रयोग होता था और 'दिव्यादि' शब्द किस प्रकार भ्रमोत्पादक हुए।

---

१. का श्रौ० १।६।१७-२५

२. जै० मी० सू० ६।७।४३१-४१

३. विश्वसृज: प्रथमा: सत्रमासत सहस्रसत्रम्। (आप० श्रौ० २३।१४।१७)
प्रजापति: सहस्रसंवत्सरमास्त। जै० ब्रा० (१।३)

द्वितीय अध्याय

युगमानविवेक

युग

मूल रूप में 'युग' शब्द अहोरात्ररूपी 'युगम' (जोड़े) का वाचक था, यह शब्द 'युजिर्' (योगे) धातु से 'घञ्' प्रत्यय लगाने पर निष्पन्न हुआ है[1]। ऋग्वेद (१।१६४।११) में ही दिन-रात को 'मिथुन' जोड़ा कहा गया है[2]। अतः मूलार्थ में 'युग' शब्द दिनरात के जोड़े या मिथुन के अर्थ में ही था। परन्तु वेद में ही 'पञ्चशारदीय' (पंचसंवत्सरात्मकयुग), 'मानुषयुग' और 'दिव्य' या 'दैव्ययुगों' का उल्लेख है। ऐतिहासिककालगणना की दृष्टि से इन युगों का विशेष महत्त्व है, अतः प्राचीन वाङ्मय में जिन ऐतिहासिक युगों का उल्लेख है, उनका संक्षेप में विवरण प्रस्तुत करेंगे। प्रमुख युग थे—

१. पञ्चसंवत्सरात्मकयुग=५ वर्ष
२. षष्टिसंवत्सर (बाहस्पत्ययुग)=६० वर्ष
३. शतवर्षीयमानुषयुग=१०० वर्ष
४. दैव्ययुग (त्रिशतषष्टिवत्सरात्मक)=३६० वर्ष=परिवर्तयुग
५. सप्तर्षियुग=(२७०० वर्ष)
६. ध्रुवयुग=६०६० वर्ष
७. चतुर्युग=द्वादशवर्षसहस्रात्मक=महायुग=देवयुग=१२००० वर्ष

पंचसंवत्सरात्मकयुग

वेद और इतिहासपुराणों में युग के पांच वर्षों के पृथक्-पृथक् नाम हैं—संवत्सर, परिवत्सर, इदावत्सर, अनुवत्सर और इद्वत्सर[3]। वायुपुराण, सूर्यप्रज्ञप्ति,

---

१. सायण ने ऋग्वेद (५।७३।३) की पंक्ति 'नाहुषा युगा' मह्ना रजांसि दीयथः मे 'युग' शब्द का अथ 'दिनरात' ही किया है।
२. आपुत्रा अग्ने मिथुनासो अत्र सप्त शतानि विंशतिश्च तस्थुः।"
३. द्रष्टव्य-ऋग्वेद (७।१०३।७), शु० यजु० (३०।१६),
(ब्रह्माण्ड० पु० (१।२)

कौटल्य अर्थशास्त्र में इस पंचसंवत्सरात्मकयुग का उल्लेख है। वायुपुराण के अनुसार पंचवर्षात्मकयुग का प्रवर्तक चित्रभानु (विवस्वान्=सूर्य=सविता=आदित्य) था[1]। प्रत्येक पांच वर्ष में सूर्य, चन्द्रमा और नक्षत्रादि अपने-अपने स्थल पर निवर्तमान होते हैं। लगध ने पंचसंवरात्मकयुग को प्रजापति कहा है—

पंचसंवत्सरमयं युगाध्यक्षं प्रजापतिम्।
कालज्ञानं प्रवक्ष्यामि लगधस्य महात्मनः ॥[2]

षष्टिसंवत्सर या बार्हस्पत्ययुग

पूर्वकथित पंचसंवत्सरात्मक युगों के १२ पंचक मिलकर एक षष्टिसंवत्सर या बार्हस्पत्ययुग बनता था। वैदिकग्रंथों में इस बार्हस्पत्ययुग का उल्लेख मिलता है यथा तैत्तिरीय आरण्यक के प्रारम्भ में षष्टिसंवत्सर का वर्णन है। वायुपुराणादि में षष्टिसंवत्सर के विष्णु, बृहस्पति आदि द्वादश देवता निर्दिष्ट हैं और प्रत्येक वर्ष का नाम भी कथित है। अतिप्राचीनकाल में इतिहास में इस युग का उपयोग होता था, यथा सिन्धुसभ्यता के असुरगण इसका प्रयोग करते थे, परन्तु अर्वाचीनतरग्रन्थों में इसका प्रयोग नहीं मिलता।

मानुषयुग—शतवर्षात्मक

वेद और इतिहासपुराण में ऐतिहासिकतिथिगणना सर्वदा मानुषवर्षों में ही होती थी—वायुपुराण और ब्रह्माण्डपुराण में स्पष्टतः कहा गया है कि 'दिव्य संवत्सर' की गणना मानुषवर्षों के अनुसार ही होती थी—

दिव्यः संवत्सरो ह्येष मानुषेण प्रकीर्तितः।[3]
अत्र संवत्सराः सृष्टा मानुषेण प्रमाणतः॥[4]

हम पहले बता चुके हैं कि 'दिव्य' शब्द 'सौर' का पर्यायवाची है, इसी से महान् भ्रम हुआ और व्यर्थ में युगों में ३६० वर्ष का गुणा किया जाने लगा। मनुस्मृति और महाभारत में जहां चतुर्युगों को १२००० वर्ष का बताया गया है, वे मानुषवर्ष ही हैं, यही आगे प्रमाणित किया जाएगा। कुछ वैदिक उद्धरणों के आधार पर उत्तरकाल में 'दिव्य' शब्द के अर्थ में भ्रम उत्पन्न हुआ, जिससे

---

१. श्रवणन्तं श्रविष्ठादि युगं स्यात् पंचवार्षिकम्।
(वायु० ५३।१।१६)

२. वेदांगज्योतिष—प्रथम श्लोक।

३. ब्रह्माण्ड० (१।२।६), कही (१।२।३०)

४. सप्तर्षीणां युगं ह्येतद्दिव्यया संख्यया स्मृतम्।
तेभ्यः प्रवर्तते कालो दिव्यः सप्तर्षिभिस्तुतैः॥ [(वायु० ११।४१६, ४२०)

पुराणकारों ने पुराणों के युगसम्बन्धी पाठों में पूर्णतः परिवर्तन कर दिया, जिससे 'इतिहास' इतिहास न रहकर कल्पनालोक की वस्तु बन गया, इन भ्रामक कल्पनाओं से ही भारतीय इतिहास पूर्णतः कलुषित, भ्रष्ट, अस्पष्ट एवं अज्ञेयतुल्य हो गया।

इस भ्रम का मूल तैत्तिरीयसंहिता के एक वाक्य से उत्पन्न हुआ—"एकं वा एतद्देवानामहः। यत्संवत्सरः।" प्राचीनपुराणपाठों, महाभारत[1] और मनुस्मृति[2] में इस 'दिव्य' संख्या का कोई चक्कर नहीं है, वहां युगगणना साधारण मानुषवर्षों में है। यह बहुत उत्तरकाल की बात है, जब पुराणोल्लिखित वास्तविक इतिहास को लोग प्रायः भूल गये तब कल्प, मन्वन्तरों और युगों की भ्रामक गणना प्रचलित कर दी गई। ज्योतिषियों के आधार पर पुराणपाठों में, परिवर्तन करके द्वादशसहस्रात्मक चतुर्युग को जो सामान्य मानुषवर्षों के थे, उनको ४३२०००० (तैंतालीस लाख बीस सहस्र) वर्षों का बना दिया। मन्वन्तर को ७१ चतुर्युगों का माना गया, जिसका समय ३० करोड़ ६७ लाख २० सहस्र वर्ष का कल्पित किया गया और १४ मन्वन्तरों का समय ४ अरब ३२ करोड़ माना गया, जबकि १४ मनुओं में अनेक मनु प्रायः समकालीन थे, वे पितापुत्र ही थे यथा चार सावर्णमनु परस्पर भ्राता ही थे—

सावर्णमनवस्तात पंच तांश्च निबोध मे।
परमेष्ठिसुतास्तात मेरुसावर्णतां गताः।
दक्षस्येते दौहित्राः प्रियायास्तनया नृप ॥ (ब्रह्माण्ड०)

सौदर्यभ्राताओं में तीस करोड़ वर्षों से अधिक का अन्तर कैसे हो सकता है यह तो सामान्यबुद्धि से ही समझा जा सकता है, चौदह मनुओं का यथार्थकाल आगे निर्दिष्ट करेंगे। मनु का अर्थ है मनुष्य (बुद्धिमान् प्राणी), प्रथम स्वायम्भुव मनु से अन्तिम (चौदहवें) वैवस्वत मनुपर्यन्त ४३ परिवर्तयुग व्यतीत हुए[3]। स्वायम्भुव मनु अथवा दक्ष प्रजापति से भारतयुद्ध (कृष्ण) पर्यन्त ३० परिवर्त (जिनमें प्रत्येक का वर्षमान ३६० था) व्यतीत हुए, इससे उत्तरकाल में यह कल्पना की गई कि वैवस्वत मन्वन्तर के २८ या ३० चतुर्युग व्यतीत हो गये और माना

---

१. चत्वार्याहुः सहस्राणि वर्षाणां कृतं युगम्।
तथा त्रीणि सहस्राणि त्रेतायां मनुजाधिप।
द्विसहस्रं द्वापरे शतं तिष्ठति सम्प्रति ॥ (भीष्मपर्व)

२. मनुस्मृति (१।६-९)

३. तदूचिषे मानुषेमा युगानि कीर्तेन्यं मघवा नाम बिभ्रत् (ऋ० १।१०३।४)
विश्वे ये मानुषा युगा पान्ति मर्त्यैरिषः। (ऋ० ५।५२।४)

जाने लगा कि यह वैवस्वत मन्वन्तर का अट्ठाईसवां कलियुग चल रहा है। परन्तु पुराणों एवं महाभारतादि के प्रामाणिक वचनों पर कोई ध्यान नहीं दिया, जहां बारम्बार कहा गया है कि युगगणना सर्वत्र मानुषवर्षों में की गई है—

सूर्यसिद्धान्त

सुरासुराणामन्योऽन्यमहोरात्रविपर्ययात् ।
तत्षष्टिषड्गुणदिव्यं वर्षमासुरमेव च ॥ (१।७) सू०सि०)
तेषां द्वादशसाहस्री युगसंख्या प्रकीर्तिता ।
कृतं त्रेता द्वापरं च कलिश्चैव चतुष्टयम् ।
अत्र संवत्सराः सृष्टा मानुषेण प्रमाणतः ।
(ब्रह्माण्ड० पु० १।२९-३०)

और भी स्पष्ट वायुपुराण में कहा गया है कि ये द्वादशसहस्र केवल मानुषवर्ष ही हैं—

एवं द्वादशसाहस्रं पुराणं कवयो विदुः ।
यथा वेदश्चतुष्पादश्चतुष्पादं यथा युगम् ।
चतुष्पादं पुराणं तु ब्रह्मणा विहितं पुरा ॥

जब वायुपुराण में १२ सहस्रश्लोक और ऋग्वेद में द्वादश सहस्र ऋचायें[1] हैं और युगों (चतुर्युग) में इतने ही वर्ष हैं तब यह कल्पना कहां ठहरती है कि चतुर्युग में ४३ लाख २० सहस्रवर्ष हैं। अतः इस गपोड़े में कोई भी मनुष्य (बुद्धिमान्) विश्वास नहीं कर सकता कि एक चतुर्युग में ४३ लाख २० हजार वर्ष होते थे।

चतुर्युगपद्धति का प्राचीनतम उल्लेख मनुस्मृति में है, इसमें स्पष्टतः ही वर्षगणना मानुषसौरवर्षों में है, वहां द्वादशवर्षसहस्रात्मकचतुर्युग (महायुग) को केवल 'देवयुग'[2] कहा गया है। टीकाकारादि ने पुनः इस 'देववर्ष' शब्द के आधार पर भ्रम उत्पन्न किया। इस सम्बन्ध में प्रसिद्ध ज्योतिर्विद्वान् स्वर्गीय बालकृष्ण दीक्षित का मत सर्वथा भ्रामक है[3]। इस सम्बन्ध में दीक्षितजी ने प्रो० ह्विटने का जो मत उद्धृत किया है, वह पूर्णतः सत्य है—"ह्विटने कहते हैं कि इन १२००० वर्षों को देववर्ष मानने की कल्पना मनु की नहीं है[4], इसकी उत्पत्ति बहुत दिनों

---

१. द्वादश बृहतीसहस्राणि एतावत्यो ह्यर्चो याः प्रजापतिसृष्टाः ॥
(श० ब्रा० १०।४।२।२३)

२. एतद्द्वादशसाहस्रं देवानां युगमुच्यते (मनु० १।९)

३. भारतीयज्योतिष (पृ० ४९)

४. बर्जेसकृत सूर्यसिद्धान्त अनुवाद (पृ० १० पर) द्र०

बाद हुई[1]।" सम्भवत यह कल्पना गुप्तकाल या अधिक-से-अधिक वराहमिहिर या अश्वघोष के पश्चात् उत्पन्न हुई होगी। सूर्यसिद्धान्त में यह कल्पना है[2]। परन्तु दीक्षित जी ने अपने भ्रम को चालू रखना श्रेयस्कर समझा, उन्होंने तैत्तिरीय संहिता में 'दिव्यवर्ष' सम्बन्धी प्ररोचना को ज्योतिष और इतिहास से जोड़ा। वस्तुतः मनुस्मृति और महाभारत में यह कल्पना है ही नहीं, हां, उत्तरकाल में यह कल्पना पुराणों में प्रक्षेपकारों ने पूर्णतः घुसेड़ दी।

अथर्ववेद (६।२।२१) का प्रमाण पूर्व संकेतित है कि तीन युग (द्वापर, त्रेता और कृत या ३० परिवर्त) १०८०० वर्ष के होते थे। अथर्व, मनुस्मृति और महाभारत तथा प्राचीनपुराणपाठ में 'दिव्यवर्ष' सम्बन्धी कल्पना का पूर्णतः अभाव है और स्पष्टतः ही वे मानुषवर्ष हैं, अतः लोकमान्य ने इसी मत का समर्थन किया है और उनके एतत्सम्बन्धी मत से हम पूर्ण सहमत हैं—"In other words, Manu and Vyasa, obviously speak only of a period of 10000 or including the sand has of 12000 ordinary or human (not divine) years from the beginning of Krιta to the end of Kaliage, and it is remarkable that in the Atharvaveda we should find a period of 10000 years apparantly assigned to one yuga[3].

यह द्रष्टव्य है कि अथर्वमन्त्र (८।२।२१) में ११००० (या १०८००) वर्षों के तीन विभाग "द्वे युगे त्रीणि चत्वारि कृण्मः" ही उल्लिखित हैं। केवल एक युग अथवा कलियुग के १००० वर्ष या १२०० वर्ष उल्लिखित नहीं हैं कलियुगमान १२०० जोड़ने पर (१०८००+१२००)=१२००० वर्ष हुए।

अतः दिव्यवर्ष या दिव्ययुग के सम्बन्ध में यह भ्रम समाप्त हो जाना चाहिये कि वह मानुषवर्ष की अपेक्षा ३६० गुणा होते थे, परन्तु परिणाम इसके विपरीत ही है कि मानुष और दिव्यवर्ष एक ही थे, जैसाकि पं० भगवद्दत्त को भी आभास हो गया—"इस प्रकरण के सब प्रमाणों से मानुष और दिव्यसंख्या का स्वल्प-सा अन्तर दिखाई पड़ता है[4]।" हां वेदोक्त 'मानुषयुग' और 'दिव्ययुग' में जो अन्तर था, उसका व्याख्यान या स्पष्टीकरण आगे करते हैं।

---

१. वही (पृ० १४८)

२. वही (पृ० १४६)

३. The Arctic Home in the Vedas (p. 350)

४. भा० बृ० इ० भाग १, पृ० १६५

मानुषयुग—(१०० वर्ष)

वेद में बहुधा 'मानुषयुग' का उल्लेख मिलता है, परन्तु आज इसका स्पष्ट रहस्य किसी को ज्ञात नहीं है कि 'मानुषयुग' क्या था, इसका 'कालमान' क्या था। पाश्चात्य लेखक मिथ्याज्ञान या अज्ञानवश सर्वदा अर्थ का अनर्थ करते हैं, सो इस सम्बन्ध में उन्होंने इसी परिपाटी का अनुसरण किया। लोकमान्यतिलक ने एतत्सम्बन्धी पाश्चात्य लेखकों के मत उद्धृत किये हैं[1]। **'मानुषयुग' का अर्थ मानवायु या युग कुछ भी लिया जाय, परन्तु यह काल १०० वर्ष का होता था।**

वेद में ही बहुधा अनेकत्र उल्लिखित है कि मनुष्य की आयु १०० वर्ष होती है—

'शतायुर्वै' पुरुषः (श० ब्रा० १३।४।१।१५)
तस्माच्छतं वर्षाणि पुरुषायुषो भवन्ति (ऐ० आ०)

अतः वेद में दीर्घतमा मामतेय[2] की आयु १००० वर्ष (एकसहस्रवर्ष) कथित है, न कि पंचसंवत्सरात्मक युग को आधार मानकर ५० वर्ष। इसकी पुष्टि इतिहास में भी होती है। देवयुग में उत्पन्न दीर्घतमा औचत्य (मामतेय) त्रेतायुग में भरत-दौष्यन्ति के समय तक जीवित रहा–'दीर्घतमा मामतेयो भरतं दौष्यन्तिमभिषिषेच[3]', दीर्घतमा बृहस्पति का भतीजा था।

अतः मन्त्र में कथित 'मानुषयुग' १०० वर्ष का होता था, जितनी कि मानवायु। इसकी पुष्टि अथर्ववेद के पूर्वोद्धृत मन्त्र से भी होती है कि १०००० (दशसहस्र) वर्षों में १०० युग या मानुषयुग थे—'शतं तेऽयुतं हायनान् द्वे युगे त्रीणि चत्वारि कृण्मः।' अर्थात् मानवयुगों या १०००० (दशसहस्र) वर्षों को हम दो (द्वापर) तीन (त्रेता) और चार (कृतयुग) में बांटे।

मनुष्यायु १०० वर्ष थी, इसी आधार पर ऋग्वेद (१।१५८।६) में दीर्घतमा को दशयुगपर्यन्त जीवित रहनेवाला कहा है, इसका स्पष्ट उल्लेख शांखायन आरण्यक (२।१७) में दश (मानव) युग का यही अर्थ लिखा है, यह कोई आधुनिक कल्पना नहीं है—"तत उ ह दीर्घतमा दशपुरुषायुषाणि जिजीव।" पुरुषायु १०० वर्ष होती है, अतः दीर्घतमा १००० वर्ष पर्यन्त जीवित रहा।

---

१. The Petersburg Lexican would interpret yuga, wherever, it occurs in Rigveda, to mean not a period of time, but a generation (Arctic Home in the Vedas, p. 139).

२. दीर्घतमा मामतेयो जुजुर्वान् दशमे युगे (ऋ० १।१५८।६)

३. ऐ० ब्रा० (८।२३)

वेदोक्त 'मानुषयुग' स्पष्ट ज्ञात हुआ, अतः इतिहास में गणना मानुषयुग या 'मानुषवर्षों' में होती थी ।

देवयुग, दैव्ययुग या देववर्ष में 'दिव्य' शब्द का अर्थ

'देव' या 'दिव्य' शब्द का निर्वचन यास्काचार्य ने इस प्रकार किया है—"देवो दानाद् वा दीपनाद् वा द्योतनाद् वा, द्युस्थानो भवतीति वा । (नि० ७।१५), वेद में 'देव' प्रायः सूर्य या सविता को कहते हैं, यही 'दिव्य' या सौर' (सूर्य) हैं[1] अतः दिव्यवर्ष का अर्थ हुआ सौरवर्ष । इसी आधार पर वेद में दिव्य या दैव्ययुग की कल्पना की गई[2] । क्योंकि पृथ्वी सूर्य की परिक्रमा ३६० दिन में करती है अतः ३६० वर्ष का ही एक दैव्ययुग (सौरयुग) माना गया—लेकिन है यह मानुष-वर्षों के आधार पर ही, जैसा कि पुराण में स्पष्ट लिखा है ३६० वर्षों का संवत्सर मानुषप्रमाण के अनुसार ही है[3] । वक्ष्यमाण सप्तर्षियुग के दिव्यवर्ष भी सामान्य मानुषवर्ष थे[4] । वस्तुतः मानुषवर्ष और दिव्यवर्ष में कोई अन्तर था ही नहीं । अतः देवयुग का अर्थ था देवों का वह समय जब वे पृथ्वी पर विचरण करते थे और शासन करते थे 'देवयुग' शब्द का अन्य कोई अर्थ नहीं था ।

देव एक विशिष्ट मानवजाति थी, जिसका वैदिकग्रन्थों में बहुधा उल्लेख है, इन्द्र, वरुण, यम विवस्वान् आदि ऐसे ही देवपुरुष थे, देवयुग में मनुष्य की आयु ३०० या ४०० वर्ष होती थी, जैसाकि मनुस्मृति (१।८३) में उल्लिखित है—

"अरोगाः सर्वसिद्धार्थाश्चतुर्वर्षशतायुषः ।
कृते त्रेतादिषु ह्येषामायुर्ह्रसति पादशः ।"

देवों की ३०० या ३६० वर्ष आयु सामान्य थी, यह इतिहास से सिद्ध है, परन्तु विशिष्ट देवों यथा इन्द्र, वरुण, यम[5], विवस्वान् आदि प्रजापति-तुल्य देवों

---

१. देवस्य सवितुः प्रातःप्रसवः प्राणः (तै० ब्रा०)

२. त्वमंगिरा दैव्यं मानुषा युगाः (वाज० १२।१११)

३. त्रीणि वर्षशतान्येव षष्टिवर्षाणि यानि च ।
दिव्यः संवत्सरो ह्येष मानुषेण प्रकीर्तितः ॥
(ब्रह्माण्ड० १।२।१६)

४. सप्तर्षीणां युगं ह्येतद्दिव्यया संख्यया स्मृतम् । (ब्रह्माण्ड०)

५. पारसीधर्मग्रन्थ जेन्दा अवेस्ता (छन्दोवेद=अथर्ववेद) के प्रमाण से ज्ञात होता है कि वैवस्वतयम, जो इन्द्र का गुरु था, उसने १२०० वर्ष पृथ्वी पर शासन किया—३००-३०० वर्ष करके उसने चार बार राज्य किया । इस १२०० वर्षों में पृथ्वी का आकार (जनसंख्या) पहले से दुगुना हो गया (अवेस्ता, द्वितीय फर्गद, आर्यों का आदिदेश, पृ० ७४ पर उद्धृत)

की आयु सहस्रवर्ष से भी अधिक थी। जो इन्द्र १०१ वर्ष ब्रह्मचारी रहा, जो अपने शिष्य भरद्वाज को ४०० वर्ष की आयु प्रदान कर सकता था, उसकी अपनी स्वयं की आयु कितनी हो सकती है, इसका अनुमान लगाया जा सकता है। दीर्घायु पुरुषों का वर्णन पृथक् अध्याय में किया जायेगा।

देवों की आयु सामान्यत: ३०० (या ३६० वर्ष और प्रजापति की आयु ७०० (या ७२० वर्ष) या सहस्राधिक होती थी, इसका प्रमाण जैमिनीय ब्राह्मण (१।३) के निम्नवचन में प्राप्त होता है—"प्रजापतिस्सहस्रसंवत्सरमास्त। स सप्त शतानि वर्षाणां समाप्यमेमामेव जितिमजयत्—स स्वर्गं लोकमारोहन् देवान्नब्रवीदेतानि यूयं त्रीणि शतानि वर्षाणां समापयथेति।"

देवयुग में संवत्सर दशमास या ३०० दिन का भी होता था, इसका प्रमाण वैदिकग्रन्थों के साथ यूरोपियन इतिहास में भी मिलता है। इसका उल्लेख लोकमान्य तिलक ने अपने ग्रन्थ में किया है। जैमिनीयब्राह्मण और अवेस्ता से भी इसकी पुष्टि होती है[1]।

अत: देवयुग ३०० या ३६० वर्षों का होता था और प्राय: यही सामान्य देवपुरुष की आयु थी। इतिहासपुराणों में बहुधा देवयुग का उल्लेख है—'पुरा देवयुगे राजन्नादित्यो भगवान् दिव:।' (सभापर्व ११।१)

'पुरा देवयुगे ब्रह्मन् प्रजापतिसुते शुभे।' (आदिपर्व १४।५) जैमिनीयब्राह्मण (२।६५), निरुक्त (१२।४१) और रामायण (१।९।१२) में भी देवयुग का उल्लेख है। अत: 'देवयुग' एक ऐतिहासिक युग था। देवयुग ३०० वर्ष का होता था, इसका स्पष्ट उल्लेख मत्स्यपुराण २४।३७) में है—

"अथ देवासुरयुद्धमभूद्वर्षशतत्रयम्।"

ऐसे द्वादश देवासुरसंग्राम दशयुगपर्यन्त अर्थात् ३६०० वर्षों के मध्य में हुए[2] (१४००० वि० पू० से १०४०० वि० पू० तक हुए)

२८ अवान्तर त्रेता=परिवर्त=पर्याय=द्वापर ?

प्राचीन पुराणपाठों में गणना परिवर्त, पर्याय त्रेता या द्वापर (अवान्तर नाम के ऐतिहासिक युगों में की गई है) इन्हीं को वैदिक ग्रंथों में 'देवयुग' या 'दैव्ययुग' कहा गया है। पं० भगवद्दत्त ने देवयुग, अवान्तर त्रेता (पर्याय=परिवर्त) आदि की अवधि जानने में असमर्थता व्यक्त की है—"यदि अवान्तर त्रेताओं की अवधि तथा आदियुग, देवयुग और त्रेतायुग आदि की अवधि

---

१. द्र० Arctic Home in the Vedas (p. 158)

२. युगं वै दश (वायु० ९७।७०)

जान ली जाए तो भारतीय इतिहास का सारा कालक्रम शीघ्र निश्चित हो सकता है[1]।"

वायुपुराण के दक्ष, द्वादश आदित्य करन्धम, मरुत्त आदि पुरुषों को आदि-त्रेतायुग या प्रथमपर्याय में होना बताया गया है। मान्धाता १५वें युग में हुए, जामदग्न्य राम उन्नीसवें युग में, राम[2] (दाशरथि) चौबीसवें युग में और वासुदेव-कृष्ण २८वें युग में हुए। ये सभी पुरुष थोड़े अन्तर (कुछ शतियों) में उत्पन्न हुए, इनमें लाखों करोड़ों वर्षों का अन्तर किसी प्रकार उत्पन्न नहीं होता, यही तथ्य प्रत्येक गम्भीर पुराण-अध्येता समझ लेगा। परन्तु उनमें उतना स्वल्प समयान्तर नहीं था जैसा कि पार्जीटर मानता था।

प्रत्येक अवान्तरत्रेता (३६० मानुषवर्ष) को भ्रम से एक चतुर्युग (१२००० दिव्य वर्ष) मानकर ही पुराणगणना में भीषण त्रुटि हुई है। अतः २८ अवान्तर युगों को चतुर्युग मान लिया गया। पर्याय=परिवर्त की अवधि एक देवयुग (दैव्ययुग) यानि ३६० वर्ष थी, यह तथ्य विविध प्रमाणों से प्रमाणित किया जायेगा। ये प्रमाण हैं—(१) व्यासपरम्परा (२) नहुष से युधिष्ठिर का अन्तर (दससहस्रवर्ष) (३) तमिलसंघपरम्परा (४) मिस्रीपरम्परा (५) द्वादशवर्ष सहस्रात्मक महायुग (चतुर्युग=देवयुग) (६) पारसी (ईरानी) प्रमाण (७) मैगस्थनीज (उल्लिखित असित धान्वासुर (डायनोसिस) का समय और (८) मयसभ्यता की गणना।

देवयुग, परिवर्त का मान विस्मृत

३६० वर्षमितवाले युग का पुराणों में उल्लेख अवश्य है, परन्तु इसका वर्षमान विस्मृत सा हो गया, इसके कारण हम पूर्व संकेत कर चुके हैं—यथा देववर्ष की कल्पना, २८ परिवर्तों को २८ चतुर्युग मानना इत्यादि से ३६० वर्ष का युग विस्मृत सा हो गया। प्रकारान्तर से इसका उल्लेख अवश्य मिलता है जैसाकि निम्न श्लोक से स्पष्ट है—

त्रीणि वर्षशतान्येव षष्टिवर्षाणि यानि तु।
दिव्यः संवत्सरो ह्येष मानुषेण प्रकीर्तितः॥

(ब्रह्माण्ड० १।२।१६)

---

१. भा० बृ० इ० भा० १ (पृ० १५९)

२. चतुर्विंशे युगे चापि विश्वामित्रपुरस्सरः।
राज्ञो दशरथस्यासीत् पुत्रः पद्मायतेक्षणः।
लोके राम इति ख्यातस्तेजसा भास्करोपमः॥
(हरिवंश पु० २२।१।४१)

दिव्ययुग=सौरयुग=परिवर्तयुग को ही यहां दिव्य संवत्सर कहा गया है, कोई सन्देह नहीं। हमने सम्बन्धित तथ्यों से इस तथ्य की खोज (पुष्टि) कर ली है कि यह युगमान ३६० वर्ष था[1]।

आधुनिकयुग में कुछ सोवियत अन्वेषकों ने कम्प्यूटरादि से हड़प्पा सिन्धुलिपि की खोज की है। इस सम्बन्ध में सोवियत अन्वेषकों ने ज्ञात किया है, "सिन्धुजनों ने ६० वर्षों के कालचक्र की, बृहस्पतिचक्र की खोज कर ली थी और इस चक्र को वे १२ वर्षों की पांच अवधियों में विभाजित करते थे। यह भी कल्पना की गई है कि हड़प्पावासी 'वर्षकाल' को 'देवताओं के एक दिन' के तुल्य मानते थे। बाद में संस्कृत साहित्य में इस मान्यता को हम अधिक विकसित रूप से देखते हैं। सिन्धुजनों ने 'बृहस्पतिचक्र' के अलावा ३६० वर्षों के एक और कालचक्र की भी कल्पना की थी[2]।" वर्ष में ३६० दिन और देवयुग में ३६० वर्ष होने के कारण, साम्यसंख्या के कारण युगमान—(३६० वर्ष) विस्मृत हो गया। भारत के समान बैबीलोन का इतिहासकार बैरोसस भी इस भ्रम में पड़ गया और उससे दिनों को वर्ष मान लिया। द्र० पृष्ठ ५५

तृतीययुगगणनासम्बन्धी श्लोकों का पाठपरिवर्तन

प्राचीनग्रन्थों में विशेषतः पुराणों एवं ज्योतिषग्रन्थों में कालगणनासम्बन्धी कितना परिवर्तन, परिवर्धन संस्करण, क्षेपक, अंशनिष्कासन का कार्य किया गया, इसको प्रत्येक गम्भीर पुरातत्त्ववेत्ता या भारतविद्याविद् सम्यक् समझ सकता है।

---

१. इस युगमान की स्मृति, सिद्धान्तशिरोमणि के टीकाकार मुनीश्वर ने वेदांग ज्योतिष के रचयिता लगध के प्रमाण से इस प्रकार उद्धृत की है—

"पंचसंवत्सरैरेकं प्रोक्तं लघुयुगं बुधैः।
लघुद्वादशकेनैव षष्टिरूपं द्वितीयकम्।
तद् द्वादशमितैः प्रोक्तं तृतीयं युगसंज्ञकम्।
युगानां षट्शती तेषां चतुष्पादी कलायुगे।"

इसमें तृतीययुग ७२० वर्ष का था, परन्तु यह वैदिक प्रजापतियुग (अहोरात्ररूपी ७२० वर्ष) का मान था, इसका आधा अर्थात् ३६० देवयुग या वास्तविक युगमान था, अतः मुनीश्वर का उद्धरण कुछ भ्रान्तिजनक है, तृतीययुग ३६० वर्ष का ही था और उसमें ६०० के स्थान पर १२०० का गुणा करने पर ही कलियुग या युगपाद का मान आता था।

२. साप्ताहिक हिन्दुस्तान (२५ अक्तूबर, १९८१) में श्री गुणाकर मुले का लेख 'सिन्धु भाषा और लिपि की पहेली'।

परन्तु हम यहां केवल दो-चार उदाहरणों पर विचार करेंगे, जिसने इतिहासगणना को पूर्णतः अनैतिहासिक किंवा मिथ्या बना दिया।

प्रथम उदाहरण–दिव्यसंवत्सर या दिव्ययुग

वायु, ब्रह्माण्डादि प्राचीनपुराणों में एक श्लोक मिलता है—

त्रीणि वर्षशतान्येव षष्टिवर्षाणि यानि तु।
दिव्यः संवत्सरो ह्येष मानुषेण प्रकीर्तितः॥
(ब्रह्मा० २।२८।१६)

हमारा अनुमान है कि जब सूर्यसिद्धान्तादि ज्योतिषग्रंथ लिखे जा चुके अर्थात् उनके वर्तमान संस्करण विक्रमपूर्व की तृतीयशती में बन चुके थे, तब पुराणों में कालगणनासम्बन्धी श्लोकों में पूर्ण परिवर्तन कर दिया गया।

मनुस्मृति, निरुक्त, गीता, बृहद्देवता एवं इनसे पूर्व के अथर्ववेदादि ग्रन्थों में रंचमात्र भी संकेत नहीं है कि मानुषवर्ष में ३६० वर्ष का गुणा करने से दिव्य-वर्ष निकलता है। अथर्ववेद—'शतं तेऽयुतं हायनान्' (अथर्व ८।२।११) में गणना मानुषवर्ष में ही है, ऐसा ही लोकमान्य तिलक का मत है, मनुस्मृति द्वादशवर्ष-सहस्रात्मक 'देवयुग' भी मानुषवर्षों का था, ऐसा ह्विटने आदि के साक्ष्य से हम अन्यत्र बता चुके हैं और स्वबुद्धि से भी कोई पाठक समझ सकता है कि मनुस्मृति में 'दिव्यवर्ष' का कोई संकेत नहीं है।

परन्तु यह युग कितने मानुषवर्ष का था, यह पुराणादि के वर्तमानपाठों से भी ज्ञात होता जाता है। लगधाचार्य ने 'तृतीययुग' नाम से इसी का संकेत किया था, इसकी आगे समीक्षा करेंगे। लगध के वक्ष्यमाण संकेत के आधार पर तथा पुराणों की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि से हमारा अनुमान ही नहीं दृढ़तम निश्चय है कि पुराणों में व्यासपरम्परा के सम्बन्ध में जिन २८ युगों का परिवर्तों का वर्णन किया है, उनमें प्रत्येक परिवर्त (युग) का मान ३६० वर्ष (मानुषवर्ष) ही था। निश्चय ही प्राचीनपुराणपाठों में इस युगमान का उल्लेख होना चाहिए। हमारा मत है कि जिस प्रकार वर्ष में ३६० दिन होते थे, उसी प्रकार एक लघुदेवयुग या दिव्ययुग में ३६० मानुषवर्ष होते थे, जैसाकि सोवियत इतिहासविदों ने सिन्धुसभ्यता के अवशेषों से षष्टिवर्षात्मक बार्हस्पत्ययुग और ३६० वर्षात्मकयुग की खोज की है। अतः 'दिव्यसंवत्सर' परिवर्तयुग है। एतत्सम्बन्धी उपर्युक्त श्लोक का पाठ इस प्रकार अधिक उपयुक्त होगा—

त्रीणि वर्षशतान्येव षष्टिवर्षाणि यानि तु।
दिव्यं खलु युगमेतद् मानुषेण प्रकीर्तितम्॥

उपर्युक्त समीक्षा के अनन्तर हम अधिक प्रामाणिक लगधाचार्य के निम्न श्लोक का पाठ जो मुनीश्वर ने उद्धृत किया है, इस प्रकार मूल में होना चाहिए, तभी 'तृतीययुग' सार्थक होता—

तेषां तत् षण्मितैः प्रोक्तं तृतीयं युगसंज्ञकम् ।
युगानां द्वादशशती चतुष्पादी कलायुगे ॥

हमने लगध के 'द्वादशमितैः' के स्थान पर 'षण्मितैः' और 'षट्शती' के स्थान पर 'द्वादशशती' माना है, क्योंकि 'युगपाद' १२०० वर्ष (द्वादशशती) का होता था, न कि ६०० वर्ष का, जैसाकि आर्यभट ने भी लिखा है—'षष्ट्यब्दानां षष्टिर्यदा व्यतीतास्त्रयश्च युगपादाः ।' (कालक्रियापाद, आर्यभटीय, श्लोक १०) । आर्यभट के साक्ष्य से निश्चित है कि लगधोक्त 'तृतीययुगे' ३६० वर्ष का ही होता था, न कि ७२० वर्ष का, कलि के १२०० वर्ष में ३६० वर्ष का गुणा करके ही दिव्यवर्ष का मान निकाला जाता है, न कि ७२० वर्ष का । ७२० वर्ष के किसी भी युग का अन्यत्र किसी भी प्राचीनग्रंथ में किंचिन्मात्र भी संकेत नहीं है अतः युगपाद ६०० वर्ष का उपपन्न नहीं होता, यह १२०० वर्ष का ही था । यद्यपि गणित की दृष्टि से ७२० ६००=३६० । १२००=४३२००० तुल्य ही परिमाण है, परन्तु मुनीश्वर के वर्तमानपाठ को मानने से इतिहास में अर्थ का महान् अनर्थ हो जाता है । अतः तृतीययुग (३६० वर्ष) बार्हस्पत्ययुग (६० वर्ष) का छः गुना (षण्मित) होता था न कि द्वादशमित । अतः अज्ञान या भ्रान्तिवश मुनीश्वर के श्लोक में अनर्थपाठपरिवर्तन किया गया है जिसका निम्न शुद्ध रूप इतिहाससम्मत है—

तेषां तत् षण्मितैः प्रोक्तं तृतीयं युगसंज्ञम् ।
युगानां द्वादशशतो चतुष्पादी कलायुगे ॥

अतः आर्यभट, पुराण, लगध, सिन्धुसभ्यता और वैदिकवाङ्मय—सभी के साक्ष्य से ऐतिहासिक देवयुग=परिवर्त का मान ३६० वर्ष ही सिद्ध होता है ।

बैरोसस की भ्रान्ति

पुराणों के समान बैबीलोन का बैरोसस लिखता है 'जलप्रलय' के पूर्व (सुमेर में) १० राजाओं ने ४ लाख ३ हजार वर्ष राज्य किया । (विश्व की प्राचीन सभ्यतायें, भाग-१, पृ० ४३, ले० श्री रामगोपाल) ।

यह चार लाख तीन सहस्र दिन=१११९ वर्ष ४ दिन के होते हैं अतः १० राजाओं का यह राज्य सहस्राधिक वर्षमात्र था, जिनमें प्रत्येक राजा का औसत राज्यकाल एकशती से अधिक था ।

उपर्युक्त विवेचन से यह फलितार्थ निकलता है कि प्राचीन देशों—भारत, बैबीलोन आदि में ऐतिहासिक घटनाओं का विवरण प्रत्येक दिन लिखा जाता था और वह न केवल मास और वर्ष बल्कि दिनों में गणना होती थी, अतः आधुनिक तथाकथित इतिहासकारों का यह आरोप पूर्णतः मिथ्या है कि प्राचीनजन इतिहास लिखना नहीं जानते थे अथवा इतिहास में उन्होंने तिथिगणना की उपेक्षा की। निम्नलिखित चार देशों के साक्ष्य से यह सिद्ध है कि वे वर्ष या मास की ही नहीं एक-एक दिन की इतिहास में गणना करते थे।

स्वयं योरोपियन या यूनानियों के इतिहासपिता हैरोडोट्स ने लिखा है कि मिस्री पुरोहित प्रत्येक वर्ष का ऐतिहासिक वृत्तान्त बहियों में लिखते थे—"In these matters they say they cannot be mistaken as they have always kept count of the years, and noted them in their Registers" (Herodotus : Histories, p. 320).

बैबीलोन में

तृतीयशतीपूर्व के इतिहासकार बैरोसस को दैत्येन्द्र बलि असुर के मन्दिर में जलप्रलयपूर्व और पश्चात् का ऐतिहासिक विवरण सुरक्षित मिला, जहां से उसने अपना इतिहास ग्रन्थ लिखा—It was from these writings deposited in the Temple of Belus of Babylon, that Berosus copied the outlines of history of the antidiluvion sovereigns of Chadda" (History of Hindustan, its Arts and its sciences vol I by T. Mourice. p. 399).

बैरोसस की भ्रान्ति का कारण

जलप्रलयपूर्व और पश्चात् का वृत्तान्त मूल में दिनों में लिखा हुआ था, जो बैरोसस को मन्दिर में मिला और इतने प्राचीन वृत्तान्त को पढ़ने या समझने में बैरोसस को भ्रान्ति या त्रुटि का होना असम्भव नहीं, इसी भ्रान्ति के कारण बैरोसस ने दिनों को वर्ष समझकर राजाओं का राज्यकाल हजारों लाखों वर्ष का लिखा, जो पूर्णतः असम्भव है। हमने पुराणसाक्ष्य के आधार पर बैरोसस की त्रुटि सुधार दी है और बैबीलोन राजाओं का यथातथ्य राज्यकाल निकाल लिया है।

यहूदी साहित्य-बाइबल में गणना दिनों में

भारत और प्राचीन चाल्डिया के समान उनके अनुकरण पर प्राचीन यहूदियों में भी ऐतिहासिक वृत्तान्त दिन-प्रतिदिन सुरक्षित रखने की प्रथा थी, इससे उनकी

सूक्ष्म ऐतिहासिक बुद्धि का पता चलता है। बाइबल में मनु (नूह) और जलप्रलय सम्बन्धी वर्णन द्रष्टव्य है, जिसमें एक-एक दिन का विवरण लिखा गया है—
(1) For yet seven days and I will cause it to rain upon the earth forty daos and forty nights. (2) In the six hundredth year of Nooh's life the second month, the sevententh day of the month. (3) And the Flood was forty days upon the earth. (4) And there to rested in the seventh month on the seventeenth days of the month, upon the mountain of Arrarat (Holy Bible p. 10 & 11).

सहस्रोंवर्षपूर्व के इतिहास में एक-एक दिन का वृत्तान्त सुरक्षित रखना कितना दुष्कर कर्म है, यह वर्तमान विद्वान् समझ सकते हैं।

भारतीयगणना

प्राचीन भारत में इक्ष्वाकु, मान्धाता, सगर, भरतदौष्यन्ति, दाशरथिराम से हर्षवर्धन (सप्तमशती) पर्यन्त विवरण वर्ष, मास और तिथियों (दिनों) में सुरक्षित रखा जाता था, यह तथ्य पुराणों एवं मौर्ययुग से हर्ष तक के शतशः सहस्रशः शिलालेखों से प्रमाणित है, एक दो उदाहरण द्रष्टव्य हैं—

(१) सिधंवसे ४०, २ वैसाख मासे राजा क्षहरातस क्षत्रपस नइपानस—थ। (नहपान नासिक गुहालेख)

(२) शते पञ्चषष्टयधिके वर्षाणां भूपतौ च बुधगुप्ते।
आषाढमासशुक्लद्वादश्यां सुरगुरोर्दिवसे॥
(एरणस्तम्भ गुप्तलेख)

अतः प्राचीन भारतीयों पर इतिहास की उपेक्षा का आरोप मिथ्या है। हां, इतिहासवृत्त अनेक कारणों से पर्याप्त लुप्त होगए, यह पृथक् बात है। यह सत्य है कि प्राचीनभारतीयजन वृत्त को आज की अपेक्षा अधिक और पूर्ण सुरक्षित रखते थे, यदि प्राचीनवृत्तान्त केवल कागज या भोजपत्र पर लिखा जाता तो हम प्राचीन राजाओं का नाम भी नहीं जान सकते थे, उन्होंने तो इतिवृत्त को सुदृढ़ पत्थरों एवं धातुओं पर उत्कीर्ण करा दिया था, जिनके नष्ट होने की बहुत कम संभावना थी। इससे भी प्राचीन राजाओं और विद्वानों की इतिहाससंरक्षण के प्रति अत्यधिक चिन्ता प्रकट होती है।

१. व्यासपरम्परा से तृतीययुग (युगमान) (३६० संवरात्मक) की पुष्टि

अतः वायुपुराण (अ० २३।११४-२२६) में विस्तार से २८ या ३० व्यासों

का वर्णन है, ब्रह्माण्ड पुराण में (१।२।३५) एवं विष्णुपुराण (३।३) में व्यासों की सूची लिखित है।

पुराणों में अनेकश: भ्रष्टपाठों के कारण वेदव्यासनामों में पर्याप्त विकृतियां हैं। इनके नाम समस्तपाठों में संतोलित करके इस प्रकार संशोधित किये गये हैं — (१) स्वयम्भू ब्रह्मा, (२) प्रजापति (कश्यप), (३) उशना (शुक्र), (४) बृहस्पति, (५) विवस्वान्, (६) वैवस्वतयम, (७) इन्द्र, वसिष्ठ (वासिष्ठ), (९) सारस्वत (अपान्तरतमा), (१०) त्रिधामा, (११) त्रिवृषा, (१२) भरद्वाज (सनद्वाज = सुतेजा = त्रिविष्ट), (१३) अन्तरिक्ष, (१४) घर्म = सुचक्षु = वर्णी = नारायण, (१५) त्र्ययारुणि, (१६) धनंजय = संजय, (१७) कृतंजय, (१८) ऋतंजय (ऋजीषी = जय = तृणंजय, (१९) भरद्वाज, (२०) गौतम = वाजश्रवा, (२१) वाचस्पति = निर्यन्तर = हर्यात्मा = उत्तम, (२२) वाजश्रवा = शुक्लायन, (२३) सोमशुष्मायग = सोमशुष्म = तृणबिन्दु, (२४) ऋक्ष = वाल्मीकि, (२५) शक्ति, (२६) पाराशर, (२७) जातूकर्ण, (२८) कृष्णद्वैपायन = पाराशर्यव्यास।

इस व्यासपरम्परा के आधार पर २८ या ३० युगों का सम्पूर्ण और औसत कालमान निकाला जा सकता है। कृष्णद्वैपायन व्यास अन्तिम (के) थे, उनका समय ज्ञात है कि द्वापर के अन्त में, कलियुग प्रारम्भ से लगभग ३०० वर्ष पूर्व, और कलियुग का प्रारम्भ कृष्ण के स्वर्गवास के दिन से हुआ—

यस्मिन् कृष्णो दिवं यातस्तस्मिन्नेव तदा दिने।
प्रतिपन्नः कलियुस्तस्य संख्यां निबोधत ॥[1]

और २५वें व्यास ऋक्ष वाल्मीकि का अवतार त्रेताद्वापर की सन्धि में हुआ— 'परिवर्ते चतुर्विंशे ऋक्षो व्यासो भविष्यति[2]।' इसी युग में रामावतार हुआ—

त्रेतायुगे चतुर्विंशे रावणस्तपसः क्षयात्।
रामं दाशरथिं प्राप्य सगणः क्षयमेयिवान्।
संधौ तु समनुप्राप्ते त्रेतायां द्वापरस्य च।
रामो दाशरथिर्भूत्वा भविष्यामि जगत्पतिः॥
(शान्तिपर्व ३४८।१६)

---

१. वायु० (९९।४२८)

२. वायु० (१३।३०६),

(क) पुनस्तिष्ये च संप्राप्ते कुरवो नाम भारताः। शान्तिपर्व, ३४९)
कृष्णयुगे च संप्राप्ते कृष्णवर्णो भविष्यति। विख्यातो वसिष्ठकुलनंदनः।

२. नहुष से युधिष्ठिर तक का अन्तर (काल)–१०००० वर्ष

नहुष से युधिष्ठिर पर्यन्त दशसहस्रवर्ष व्यतीत हुए थे, इसका एक प्रमाण महाभारत के वर्तमान पाठ में अवशिष्ट रह गया है। उद्योगपर्व (१७।१५) में स्पष्ट रूप से लिखा है कि अगस्त्य ऋषि के शाप से नहुष दशसहस्रवर्ष तक अजगर-योनि में रहा और युधिष्ठिर के दर्शन होने पर उसकी शापमुक्ति हुई—

दशवर्षसहस्राणि सर्परूपधरो महान्।
विचरिष्यसि पूर्णेषु पुनः स्वर्गमवाप्स्यसि ॥

नहुष का पुत्र ययाति प्रजापति से दशम पीढ़ी में हुआ[1]।

वैवस्वतमनु, नहुष से पांच पीढ़ी पूर्व, नहुष से लगभग एक सहस्रवर्षपूर्व हुए, अतः वैवस्वतमनु और युधिष्ठिर में लगभग ग्यारह सहस्रवर्ष का अन्तर था।

३. तमिलसंघपरम्परा से परिवर्तकाल (दशसहस्रवर्ष) की पुष्टि

तमिलसंघपरम्परा से भी उपर्युक्त कालगणना की पुष्टि होती है। प्रथम तमिलसंघ की स्थापना शिव, स्कन्द, इन्द्र और अगस्त्य के समय में हुई, पाण्ड्य नरेश कापचिन बलुति (बलि ?) के राज्यकाल में[2]। प्रथमसंघ के प्रमुख अध्यक्ष थे—अगस्त्य ऋषि, जिन्होंने तमिल के अगस्त्य (अकत्तियम्) व्याकरण की रचना की। तमिल इतिहास में तीन संघकाल इस प्रकार माने जाते हैं—

प्रथम संघकाल—अगस्त्य से प्रारम्भ	८९ राजा =	४४०० वर्ष राज्यकाल
द्वितीय संघकाल—दाशरथिराम से प्रारम्भ	५९ राजा =	३७८० वर्ष राज्यकाल
तृतीय संघकाल—भारतोत्तरकाल प्रारम्भ	४९ राजा =	१८५० वर्ष राज्यकाल
योग	१९७ राजा =	१००३० वर्ष राज्यकाल

आदिम अगस्त्य ऋषि नहुष और देवराज इन्द्र के समकालिक थे। अन्तिम तमिलसंघ की समाप्ति विक्रम सम्वत् के निकट हुई। अतः तमिलगणना में अगस्त्य का समय विक्रम से दशसहस्रवर्षों से कुछ पूर्व था। आदिम अगस्त्य अत्यन्त दीर्घजीवी ऋषि थे—सहस्राधिक वर्षों तक जीवित रहे, पुनः उनके वंशज भी अगस्त्य

---

१. ययातिः पूर्वजोऽस्माकं दशमो यः प्रजापतेः। (आदिपर्व, ७१।१)
ये दशपुरुष थे = प्रचेता, दक्ष, कश्यप, विवस्वान्, मनु, बुध, पुरूरवा, आयु, नहुष और ययाति। ये सभी दीर्घजीवी थे, इनका कालादि अग्रिम अध्यायों में विचारित होगा।

२. द्र० तमिलसंस्कृति—ले० र० शौरिराजन् (पृ० ११)

ही कहे जाते थे। अतः तमिलसंघगणना से भी पुराणोक्त कालगणना, विशेषतः चतुर्युग एवं परिवर्तयुगगणना की पुष्टि होती है कि वह अगस्त्य और नहुष का समय विक्रम से लगभग तेरह सहस्रवर्षपूर्व था।

४. मिस्रीगणना से पुष्टि

हेरोडोटस ने मिस्रीगणना में चौदहमनुओं में से किसी एक मनु का समय अपने से ११३४० वर्ष पूर्व अर्थात् अब से लगभग चौदहसहस्रवर्षपूर्व बताया है—"The priest told Herodotus that there had been 391 generations both of Kings and High priest from Manos (मनु) to sethos and this he calculates at 11390 years''. (The Ancient History of East by Philips Smith p. 59).

बाइबल के अनुसार मनु की आयु—९५० वर्ष थी, अतः उसका जन्म आज से पन्द्रह सहस्रवर्षपूर्व हुआ - ११३४०+२६००=१३९४०। हेरोडोटस और सैथोज विक्रम से लगभग ६०० वर्ष पूर्व हुए, अतः मिश्री मनु का जन्म आज से १४५०० वर्ष पूर्व हुआ था। भारतीय गणना से वैवस्वतमनु, तृतीय परिवर्त में हुए, तदनुसार उनका समय (३६०=२७ परिवर्त=७९२०+५१२० भारतयुद्धकाल =१४५८० वर्ष पूर्व निश्चित होता है, अतः मिस्रीगणना से भी भारतीयगणना की पुष्टि होती है।

५. चतुर्युगपद्धति से पुष्टि

महाभारत (भीष्मपर्व ११।६), मनुस्मृति (१।६४-७८) एवं प्रायः सभी पुराणों में चतुर्युग कृत, त्रेता, द्वापर और कलि का मान क्रमशः ४८०० वर्ष, ३६०० वर्ष, २४०० वर्ष और १२०० वर्ष गणित है[1] इस पद्धति से भी उपर्युक्त परिवर्तयुगगणना की पुष्टि होती है। कलियुग को छोड़कर तीनों युगों का कालमान १०८०० वर्ष था, महाभारतयुद्ध समाप्त हुए लगभग ५१२० वर्ष हुए हैं, कश्यप और दक्ष प्रजापति कृतयुग के आदि में हुए, इस गणना से उनका समय १०८०० +५१२०=१५९०० वर्ष या षोडशसहस्रवर्षपूर्व था।

सभी गणनाओं से मनु आदि का एक ही समय निकलता है, अतः सभी गणनायें या परम्परायें मिथ्या नहीं हो सकतीं, अतः अगस्त्य, नहुषादि का जो समय उपर्युक्त गणनाओं से हमने निश्चित किया है, वही सत्य है। इतिहास में कल्पना के लिए कोई स्थान नहीं है।

---

१. एतद्द्वादशसाहस्रं देवानां युगमुच्यते (मनु० १।७१)

६. पारसीपरम्परा का प्रमाण

भारतीय अनुकरण पर पारसी, बावल, यहूदी और यूनानी परम्परा में चारयुगों एवं उनका काल १२००० वर्ष माना जाता था। ऐसा लेख प्रमाणों द्वारा पं० भगवद्दत्त ने लिखा है[1]। पारसीजन हमारी तरह ही १२००० वर्ष का युगचक्र मानते थे। वैवस्वत यम ने ३००-३०० करके १२०० (द्वादशशताब्दी = एककलियुगतुल्य) वर्ष राज्य किया था, यह पहले ही अवेस्ता (फर्गद २) के आधार पर लिखा जा चुका है[2]।

७. मेगस्थनीज का भारतीय इतिहासकालसम्बन्धी प्रमाण

मैगस्थनीज ने प्राचीनभारतीय इतिहासकालसम्बन्धी एक विवरण प्रस्तुत किया है और डायनोसिस (दानवासुर = धान्व आसितासुर) मे सिकन्दर पर्यन्त १५४ राजा और ६४५१ वर्ष गणित किये हैं[3]। पं० भगवद्दत्त डायनोसिस या बेवकस को विप्रचित्ति (प्रथम दानवेन्द्र) मानते हैं जो हिरण्यकशिपु के समकालिक एवं इन्द्र का पूर्ववर्त्ती था। परन्तु 'बेवकस'[4] वृत्र हो सकता है। वृत्रासुर का समय भी अत्यन्त पुरातन है, 'विप्रचित्ति' का विकार 'बेवकस' किसी प्रकार भी नहीं बनता। असुरेन्द्र असितधान्व ही 'डायनोसिस' हो सकता है[5]। निश्चय ही डायनोसिस 'धान्व' का विकार है। 'धान्व' असुर (डायनोसिस) ने देवों से बदला लेने के लिए, देवयुग के बहुत काल पश्चात् देवसन्तति (भारतीयों) पर आक्रमण किया। इसी का संकेत मैगस्थनीज ने किया है[6]। विप्रचित्ति के समय असुर

१. द्र० भा० बृ० इ० भाग १ पृ० २१ खं० २१० तथा Encyclopediary Religion and Ethics. (Ages).

२. द्र० आर्यों का आदि देश, पृ० ७४-७६ पर उद्धृत।

३. From the days of Father Bachus to Alexender, tne Great, their Kings are reckohed at 154 whose reigns extended over 6451 years (India).

४. बेवकस का शुद्ध संस्कृत 'वृक' भी सम्भव है, 'वृक' नाम के अनेक असुर हो चुके थे।

५. वायुपुराण (६८।८१) के अनुसार प्रह्लादपुत्र विरोचन का पुत्र शम्भु था, उसका पुत्र हुआ धनु, इसके वंशज असुर धान्व कहलाये, असित इन्हीं का कोई वंशज था।

६. Dionysus···coming from the regions, lying to west···He over run the whole India···He was besides, the Founder by Large cities (Fragments p. 35-36).

भारतवर्ष में ही रहते थे, परन्तु डायनोसिस (धान्व) बाहर (पश्चिम) से आया था। अतः धान्व असित असुर ही मैगस्थनीज उल्लिखित डायनोसिस था, जिसका समय आज से लगभग १०००० (६४५१+३२७+१९८२=९७६०) वर्ष पूर्व था, जो भारतयुद्ध से १३ परिवर्त पूर्व अर्थात् पन्द्रहवें युग में जब भारत में मान्धाता का राज्य था। असितधान्व असुरों का अदिम राजा नहीं था, परन्तु वंश प्रवर्तक एवं राज्यप्रवर्तक था, जिस प्रकार रघुवंश का प्रवर्तक रघु। अश्वमेधयज्ञ के अवसर पर सातवें दिन असितधान्व का उपाख्यान सुनाया जाता था। (द्र० श० ब्रा० १३।४।३)।

८. मैक्सिको की मयसभ्यता में चतुर्युगगणना

श्री चमनलाल ने 'द्वादशवर्षसहस्रात्मक' भारतीय चतुर्युग की तुलना प्राचीन मैक्सिको की मयगणना से की है—

The following comperative table shows the length of the Indian and Maxican Ages :—

	Indian Ages	Maxican Ages
Fist Age	4800 years	4800 years
Second Age	3600 years	4010 years
Third Age	2400 years	4801 years
Fourth Age	1200 years	5042 years
		Total = 18653 years

In both countries the first Age is of exactly, the same duration (Hindu America, p. 34 by Chaman Lal).

स्पष्ट है मैक्सिको का इतिहास आज से लगभग उन्नीस सहस्रवर्षपूर्व आरम्भ होता था और भारतीय और मैक्सीकनयुगगणना में प्रारम्भिक साम्य था तथा मनु का समय मैक्सिको में भी आज से चौदह सहस्रवर्षपूर्व ही माना जाता था, उनका आदिमपूर्वज या प्रमुख पुरुष मयासुर भी लगभग उसी समय हुआ, क्योंकि मयासुर, वैवस्वतमनु के पिता विवस्वान् का शिष्य और साला था।

सप्तर्षियुग

२७०० वर्षों का एक सप्तर्षियुग या संवत्सर प्राचीनपुराणपाठों में उल्लिखित

है । सप्तर्षिमण्डल के सप्त तारा मघादि नक्षत्रों में १००-१०० वर्ष ठहरते हैं, इस गणना से सत्ताईस सौ वर्षों का एक युग होता था[1] ।

एक अन्य मत (पुराणपाठ) के अनुसार सप्तर्षियुग ३०३० वर्षों का होता था—

त्रीणि वर्षसहस्राणि मानुषेण प्रमाणतः ।
त्रिंशद्यानि···तु मे मतः सप्तर्षिवत्सरः ॥

वायुपुराण एवं ब्रह्माण्डपुराण के मतानुसार शान्तनुपिता कौरवराज प्रतीप के राज्यकाल से लेकर आन्ध्रसातवाहनवंश के आरम्भ होने से पूर्व तक एक सप्तर्षियुग पूर्ण हो चुका था और प्रतीप से परीक्षितपर्यन्त ३०० वर्ष हुए थे, अतः परीक्षित से आन्ध्रपूर्व तक २४०० वर्ष पूर्ण हुए, परीक्षित से नन्दवंश के प्रारम्भ तक १५०० वर्ष पूरे हुए थे । अतः महाभारत का युद्ध कलि के प्रारम्भ से ३६ वर्ष पूर्व अर्थात् ३०८० वि० पू० हुआ—

सप्तर्षयस्तदा प्राहुः प्रतीपे राज्ञि वै शतम् ।
सप्तविंशैः शतैर्भाव्या अन्ध्राणामन्वयाः पुनः ।[2]
सप्तर्षयस्तदा प्राहुः प्रदीप्तेनाग्निना समाः ।
सप्तविंशतिर्भाव्यानामन्ध्राणान्तेऽन्वगात् पुनः ।[3]
सप्तर्षयो मघायुक्ताः काले परीक्षिते शतम् ।
अन्ध्रान्ते सचतुर्विंशे भविष्यन्ति शतं समाः ।[4]

उपर्युक्त प्रमाणों से भारतीय इतिहास की सुपुष्ट आधारशिला रखी जायेगी । ऐसा प्रतीत होता है कि पुराणों में ऐतिहासिक कालगणना सप्तर्षियुग के माध्यम से भी होती थी । पंचवर्षीययुग से सप्तर्षियुगपर्यन्त सभी इतिहास में प्रयुक्त होते थे ।

उपर्युक्त गणना से प्रकट है कि दक्ष प्रजापति से एक महायुग (देवयुग) युधिष्ठिर पर्यन्त, १०० मानुषयुग या ३ सप्तर्षियुग या १२००० (द्वादशसहस्र)

---

१. सप्तविंशतिपर्यन्ते कृत्स्ने नक्षत्रमण्डले ।
सप्तर्षयस्तु तिष्ठन्ति पर्यायेण शतं शतम् ॥
सप्तर्षीणां युगं ह्येतद्दिव्यया संख्यया स्मृतम् ॥ (वायु० ९९।४१९)
द्रष्टव्य है कि यहां २७०० मानुषवर्षों को ही दिव्यवर्ष कहा है ।

२. वायु० (९९।४१८)

३. मत्स्य० २७३।३९)

४. ब्रह्माण्ड० (३।७४।२३६)

वर्ष व्यतीत हुए थे और महाभारत युद्ध ३०८० वि० पू० लड़ा गया था तथा ३०४४ वि० पू० कृष्ण परमधामगमन के दिन से कलियुग प्रारम्भ हुआ।

चतुर्युगपद्धति के आविष्कार से पूर्व इतिहास में गणना शतवर्षीय मानुषयुग, ३६० वर्षीय परिवर्तयुग (या देवयुग) और २७०० वर्षीय सप्तर्षियुग में होती थी।

चतुर्युग की कृतादि संज्ञायें कब और कैसे समुद्भूत हुईं, यह रहस्य वैदिक वाङ्मय और इतिहासपुराणों से ही अनुसंधान करेंगे[1]।

कृतादिसंज्ञाकरण का रहस्य

उपर्युक्त वैदिक (प्राचीनतर) मानुषयुग और परिवर्तयुगपद्धति से बहुत काल पश्चात् चतुर्युगपद्धति भारतवर्ष में प्रचलित हुई[2], वायुपुराणादि में परिवर्तयुगपद्धति को त्रेतायुगमुखनाम से अभिहित किया है, और इसी में ऐतिहासिक कालगणना की गई है[3]। व्यासपरम्परा के वर्णन में उपर्युक्त पुराण में इसी कालगणना का प्रयोग किया है। ब्रह्माण्डादि में त्रेता के स्थान पर 'द्वापर' युग का प्रयोग हुआ है—

द्वितीये द्वापरे चैव वेदव्यासः प्रजापतिः।
तृतीये चोशना व्यासश्चतुर्थे च बृहस्पतिः।[4]

परिवर्त—पर्याय या युग को 'त्रेता' या 'द्वापर' कथन उत्तरकालीन भ्रम है युग का पूर्वनाम 'परिवर्त' ही था। यह 'युग' ३६० वर्ष पश्चात् परिवर्तन होता था, अतः इसे 'परिवर्त' कहा जाता था।

अब यह द्रष्टव्य है कि कृतादिसंज्ञायें कब और कैसे प्रचलित हुईं। वैदिक संहिताओं में बहुधा द्यूत के प्रसंग में कृतादि संज्ञाओं का प्रयोग हुआ है—

'कृताय आदिनवदर्शं त्रेतायै कल्पिनं द्वापरायाधिकल्पनमास्कन्दाय सभास्थाणुम्'
(वा० सं० ३०।१८)

'कृताय सभाविनं त्रेतायै आदिनवदर्शम् द्वापराय बहिःसदम् कलये सभास्थाणुम्'
(तै० ब्रा० ३।४।१)

---

१. इतिहासपुराणाभ्यां वेदं समुपबृंहयेत्। (महाभारत)

२. चत्वारि भारते वर्षे युगानि मुनयो विदुः।
कृतं त्रेता द्वापरं च तिष्यं चेति चतुर्युगम्। (वायु पु० २४।१)

३. तस्मादादौ तु कल्पस्य त्रेतायुगमुखे तदा। (वायु ६।४६)
त्रेतायां युगमन्यत्तु कृतांशमृषिसत्तमाः॥ (वायु ८।८७)

४. ब्रह्माण्ड० (१।२।३५।११७)

सभावी का अर्थ है द्यूतसभा में बैठनेवाला (स्थायी सदस्य), आदिनवदर्शी का अर्थ है द्यूतद्रष्टा, बहिःसद का अर्थ है सभा से बाहर से द्यूतदेखनेवाला और सभास्थाणु का अर्थ है द्यूतसमाप्ति पर भी द्यूतसभा में जमे रहनेवाला, इनको ही क्रमशः कृत, त्रेता, द्वापर और कलि कहा जाता था। क्योंकि कलिसंज्ञक सदस्य या अक्ष ही कलह का मूल कारण होता था, अतः युद्ध की संज्ञा भी कलि हुई। कल्पसूत्रों के समय यज्ञादि में पञ्चाक्षिकद्यूत का प्रचलन था। द्यूत के पांच अक्षों (पाशों) की संज्ञा भी कृतादि थी, पंचम अक्ष को 'कलि' कहा जाता था[1]। कलि सदस्य और द्यूताक्ष कलि के नाम पर ही कल्पादियुगसंज्ञायें प्रथित हुईं।

राजसूययज्ञ में सूयमान राजा अक्षावाप की सहायता से द्यूतक्रीड़ा करता था। द्यूत और राजा का घनिष्ठ सम्बन्ध था और राजा ही काल (समय=युग) का कारण=निर्माता=प्रवर्तक होता है, यह सर्वमान्य सिद्धान्त था। महाभारत (शान्ति पर्व, अध्याय ६९) में राजा को युगनिर्माता या युगप्रवर्तक कहा गया है—

कालो वा कारणं राज्ञो राजा वा कालकारणम्।
इति ते संशयो मा भूद् राजा कालस्य कारणम् ॥७९॥
दण्डनीत्यां यदा राजा सम्यक् कार्त्स्न्येन प्रवर्तते।
तदा कृतयुगं नाम कालसृष्टं प्रवर्तते ॥८०॥
दण्डनीत्यां यदा राजा त्रीनंशाननुवर्तते।
चतुर्थमंशमुत्सृज्य तदा त्रेता प्रवर्तते ॥८७॥
अर्धं त्यक्त्वा यदा राजा नीत्यर्धमनुवर्तते।
ततस्तु द्वापरं नाम स कालः संप्रवर्तते ॥८९॥
दण्डनीतिं परित्यज्य यदा कार्त्स्न्येन भूमिपः।
प्रजाः क्लिश्नात्ययोगेन प्रवर्तेत तदा कलिः ॥९१॥
राजा कृतयुगस्रष्टा त्रेताया द्वापरस्य च।
युगस्य च चतुर्थस्य राजा भवति कारणम् ॥९८॥

उपर्युक्त उद्धरण से स्पष्ट है कि युगप्रवर्तन में राजा की नीति और धर्म-व्यवस्था का प्रमुख योगदान होता था और आज भी है। प्राचीनयुगों में द्वादश आदित्य (वरुणादि) मान्धाता, जामदग्न्यराम, दाशरथिराम, युधिष्ठिरादि युगप्रवर्तक राजा थे। कलियुग में राजा शूद्रकविक्रम का शासन धर्मशासन कहा जाता था, इसलिये उसका संवत् 'कृतसंवत्' कहलाता था—जैसाकि समुद्रगुप्त ने कृष्णचरित की भूमिका में लिखा है—

---

१. अथ ये पञ्च कलिः सः (तै० ब्रा० १।५।११)

धर्माय राज्यं कृतवान् तपस्विव्रतमाचरन्।
एवं ततस्तस्य तदा साम्राज्यं धर्मशासितम् ।।[1]

अतः राजा (शासक) ही 'कृत' अथवा 'कलि' युग का प्रवर्तक होता था। भारतयुद्ध से बहुकालपूर्व यज्ञों में द्यूतक्रीड़ा का विधान था, परन्तु यह विधान कब से विहित हुआ, वह समय अज्ञात है। परन्तु हमारा अनुमान है कि ऐक्ष्वाक अयोध्यापति ऋतुपर्ण के समय से यह द्यूत यज्ञों में प्रविष्ट हुए। ऋतुपर्ण को 'दिव्याक्षहृदयज्ञ' कहा गया है और वह नैषध नल का सखा था[2]। अतः प्रतीत होता है कि ऋतुपर्ण और नल के समय में द्यूत यज्ञ का अनिवार्य अंग बन चुका था। दाशरथिराम का समय २४वां परिवर्तयुग था, वह राजा ऋतुपर्ण राम से १४ पीढ़ी पूर्व या ४ युग पूर्व हुआ, अतः ऋतुपर्ण और नल का समय राम से सहस्राब्दी पूर्व अर्थात् विक्रम से ६००० वर्ष पूर्व था। संभवतः इसी नल के समय से चतुर्युगीनगणना और कृतादिसंज्ञायें प्रचलित हुई हों। 'कलि' ने नल को बहुत सताया था। पुरूरवा आदि के समय कृतादिसंज्ञायें प्रचलित नहीं थीं, यद्यपि पुरूरवा को त्रेताग्नि का प्रवर्तक कहा गया है[3]।

चतुर्युग का २८ या ३० परिवर्तों से सामंजस्य

३० या २८ युगों या परिवर्तों का कालमान (३६०×३०)=१०८०० या दशसहस्रवर्ष था। चतुर्युग का कालपरिमाण १२००० वर्ष था। मूल में चतुर्युग दशसहस्रवर्ष के ही थे, संन्ध्याकाल के २००० जोड़ने पर ही चतुर्युग के द्वादशसहस्र वर्ष हुए। अथर्ववेद में चतुर्युग को दशसहस्रवर्ष परिमाण या १०० मानुषयुगों के तुल्य बताया गया है—

शतं तेऽयुतं हायनान् द्वे युगे त्रीणि चत्वारि कृण्मः।[4]

इसी को मनुस्मृति, महाभारत आदि में द्वादशवर्षसहस्रात्मक युग कहा है—

चत्वार्याहुः सहस्राणि वर्षाणां तत्कृतं युगम्।
तथा त्रीणि सहस्राणि त्रेतायां मनुजाधिप।
द्विसहस्रं द्वापरे तु शतं तिष्ठति सम्प्रति ।।[5]
चत्वार्याहुः सहस्राणि वर्षाणां तत्कृतं युगम्।

---

१. कृष्णचरित, (श्लोक ८, ९)
२. वायु० (८८।१७४)
३. ऐलस्त्रींस्तानकल्पयत् (बायु०)
४. अथर्व० (८।२।२१)
५. महाभारत भीष्मपर्व

तस्य तावच्छती संध्या संध्यांशश्च तथाविधः ।
इतरेषु संसध्येषु सध्याशेषु च त्रिषु ।
एकापायेन वर्तन्ते सहस्राणि शतानि च ।
यदेतत् परिसंख्यातमादावेव चतुयु गम् ।
एतद्द्वादशसाहस्रं देवानां युगमुच्यते ।।[1]

कृतयुग=४००० वर्ष, त्रेतायुग=३००० वर्ष, द्वापर=२००० वर्ष, कलि=१००० वर्ष के थे । इनमें क्रमशः सध्यांश और संध्या जोड़ने पर ४८००, ३६००, २४०० और १२०० वर्ष के हो जाते थे । इसी को एक महायुग या देवयुग कहा जाता था । यह देवयुग मानुषवर्षों (१२०००) का ही था, इनमें ३६० से गुणा करने की आवश्यकता नहीं थी । मनुस्मृति के समय तक यह देवयुग एक ऐतिहासिकयुग था, परन्तु जब से (बैरोसस और अश्वघोष के समय से) इसमें ३६० का गुणा किया जाने लगा, तबसे यह एक काल्पनिकयुग बन गया, जो इतिहास में सर्वथा अनुपयुक्त है । देवयुग का मूलरूप यही था—

तेषां द्वादशसाहस्री युगसख्या प्रकीर्तिता ।
कृतं त्रेना द्वापरं च कलिश्चैव चतुष्टयम् ।
अत्र संवत्सराः सृष्टा मानुषेण प्रमाणतः ।[2]

आर्यभट के समय तक युगपाद तुल्य और १२०० वर्ष के माने जाते थे—

षष्ट्यब्दानां षष्टिर्यदा व्यतीतास्त्रयश्च युगपादाः ।
त्र्यधिका विंशतिरब्दास्तदेह मम जन्मनोऽतीताः ।।[3]

ध्रुवसंवत्सर

पुराणों में ९०९० या तीन सप्तर्षियुगों के तुल्य एक ध्रुवसंवत्सर का उल्लेख है—

नव यानि सहस्राणि वर्षाणां मानुषाणि च ।
अन्यानि नवतिश्चैव ध्रुवसंवत्सरः स्मृतः ।।[4]

---

१. मनु० (१।६।६)
२. ब्रह्माण्ड० (१।२।२६-३०)
३. आर्यभटीय कालक्रियापाद ।
४. ब्र० पु० (१।२।२९-१८), पुराणों में २६००० वर्षों के युग का भी उल्लेख है ।
षड्विंशतिसहस्राणि वर्षाणि मानुषाणि तु ।
वर्षाणां युगं ज्ञेयम् ।। (ब्र० पु० १।२।२९-१८)

अतः उपर्युक्त सभी युग (मानुषयुग, परिवर्तयुग, चतुर्युग, सप्तर्षियुग और ध्रुवयुग) मानुषवर्षों में ही गिने जाते थे। दिव्यवर्ष की तथाकथित गणना अनैतिहासिक है।

अब आगे आदियुग, आदिकाल, देवासुरयुग, चतुर्युग (कृत, त्रेता, द्वापर और कलि), मन्वन्तर एवं कल्पसंज्ञक युगमानों पर विशिष्ट विचार करेंगे, जिनका प्राचीन इतिहास में विशेष व्यवहार हुआ है।

आदियुग या आदिकाल या प्रजापतियुग

आदिम दश प्रजापतियों या विश्वसृजसंज्ञक महर्षियों से समस्त मानवप्रजा उत्पन्न हुई, उनके नाम थे—स्वायम्भुवमनु, मरीचि, भृगु, अत्रि, दक्ष, अङ्गिरा, पुलह, ऋतु, वसिष्ठ और पुलस्त्य[1]। वायुपुराण (३।२-२) में निम्नलिखित २१ प्रजापतियों का उल्लेख है—भृगु, परमेष्ठी, मनु, रज, तम, धर्म, कश्यप, वसिष्ठ, दक्ष, पुलस्त्य, कर्म, रुचि, विवस्वान्, ऋतु, मुनि, अंगिरा, स्वयंभू, पुलह, चुक्रोधन, मरीचि और अत्रि। इसी प्रकार रामायण (३।१४) में प्रजापतियों के नाम हैं—कर्दम, विकृत, शेष, संश्रय, बहुपुत्र, स्थाणु, मरीचि, अत्रि, ऋतु, पुलस्त्य, अंगिरा, प्रचेता, पुलह, दक्ष, विवस्वान्, अरिष्टनेमि और सर्वान्तिम कश्यप।

स्वयम्भू या स्वायम्भुवमनु से दक्ष-कश्यप पर्यन्त युग को 'प्रजापतियुग' कह सकते हैं। यही आदिकाल या आदियुग था। चरकसंहिता (३।३१) में 'आदिकाल' संज्ञा का प्रयोग है —

"आदिकाले हि अदितिसुतसमौजसः पुरुषा बभुवुरमितायुषः।"

इन प्रजापतियों के अतिरिक्त कहीं-कहीं वरुण और वैवस्वत यम को भी प्रजापति कहा गया है। निश्चय ही वरुण से महान् आसुरीप्रजा दानव, गन्धर्वादि उत्पन्न हुए, वैवस्वत यम से पितृसंज्ञक ईरानी प्रजा उत्पन्न हुई। वरुण और हिरण्यकशिपु से पूर्व के युग का नाम 'प्रजापतियुग' था, हिरण्यकशिपु से इन्द्रबलि-पर्यन्त युग को 'पूर्वदेवयुग' (असुरयुग) और इन्द्र से वैवस्वतमनु या नहुषभ्राता रजि के समय तक 'देवयुग' अथवा 'पूर्वदेवयुग' और 'देवयुग' की सम्मिलित संज्ञा कृतयुग थी। इसी देवासुरयुग में, जो १० परिवर्तकाल अर्थात् ३६०० वर्षों का था, द्वादशदेवासुरसंग्राम हुए। इन सभी घटनाओं का विस्तृत उल्लेख आगे होगा। यहां पर केवल कृतयुग से पूर्व की 'युगसंज्ञाओं' का स्पष्टीकरण किया जा रहा है। इसी देवासुरयुग में कृतयुग का तीन चौथाई काल (३६०० वर्ष) सम्मिलित था। कृतयुग के चतुर्थपाद के आरम्भ या दशमपरिवर्तयुग में दत्तात्रेय और मार्कण्डेय हुए—

---

१. महा० शा० (२२।४४)

त्रेतायुगे तु दशमे दत्तात्रेयो बभूव ह ।
नष्टे धर्मे चतुर्थश्च मार्कण्डेयपुरस्सरः ॥ (वायुपुराण)

दत्तात्रेय और मार्कण्डेय दोनों ही दीर्घजीवी थे। दत्तात्रेय कार्तवीर्य सहस्रबाहु अर्जुन के समय तक जीवित रहा, जो उन्नीसवें परिवर्त में परशुराम के द्वारा मारा गया[1]। परशुराम, कार्तवीर्य और दत्तात्रेय तीनों ही दीर्घजीवी व्यक्ति थे, जो सहस्रों वर्षों तक जीवित रहे। मार्कण्डेय और परशुराम तो ३०वें परिवर्त (द्वापरान्त) तक जीवित रहे, जहां पाण्डवों से उनकी भेंट दिखाई गई है। दशम परिवर्त में त्रिधामासंज्ञक वेदव्यास हुए, संभव है कि मार्कण्डेय का नाम ही त्रिधामा हो। जामदग्न्यराम ने सहस्रबाहु अर्जुन का वध त्रेताद्वापर की संधि में किया था[2]।

उपर्युक्त विवेचन का तात्पर्य यह है कि परिवर्तयुगगणना और चतुर्युगगणना के कारण घटनाओं का कालनिर्णय करना अत्यन्त जटिल कार्य था, परन्तु परिवर्त युग का समय ३६० वर्ष निश्चित ज्ञात हो जाने पर घटनाक्रम को निश्चित करना अपेक्षाकृत सरल हो गया है।

अतः 'देवासुरयुग' का आरम्भ १४००० वि० पू० दक्ष-कश्यप प्रजापति के समय से हुआ, जब 'प्रजापतियुग' का अन्तिम चरण व्यतीत हो रहा था, इसी समय 'कृतयुग' आरम्भ हुआ, जिसका अन्त मान्धाता के समय (पन्द्रहवें) परिवर्त में हुआ—

पंचमः पंचदश्यान्तु त्रेतायां संबभूव ह ।
मान्धातुश्चक्रवर्तित्वे तस्थौ उतथ्यपुरस्सरः ॥

इसी समय कृतयुग के अन्त में असित धान्वासुर[3] ने किसी पश्चिमी देश

---

१. एकोनविंश्यां त्रेतायां सर्वक्षत्रान्तको विभुः ।
जामदग्न्यस्तथा षष्ठो विश्वामित्रपुरःसरः ।
(मत्स्य० ४७।२२४)

२. त्रेताद्वापरयोः सन्धौ रामः शस्त्रभृतां वरः ।
असकृत्पार्थिवं क्षत्रं जघानामर्षचोदितः ॥
(महा० १।२।३)

३. असित धान्वासुर पर मान्धाता की विजय का महाभारत में दो स्थानों पर उल्लेख है—
'यश्चांगारं तु नृपतिं मरुतमसितं गयम् ।
अंगं बृहद्रथं चैव मान्धाता समरेऽजयत् ॥ (शान्ति० २८।८८)
असितं च नृगं चैव मान्धाता मानवोऽजयत् ॥ (द्रोण० ६२।१०)

(रसातल)=पाताल=योरोप) से आकर भारतवर्ष पर आक्रमण किया था, जिसका मैगस्थनीज ने उल्लेख किया है। शतपथब्राह्मण (१३।४।३) में इसी असुरेन्द्र असितधान्व का प्रधान असुर सम्राट् के रूप में उल्लेख है, जिसका मैगस्थनीज ने 'डायनोसिस' नाम से वर्णन किया है। असितधान्व को जीतकर मान्धाता ने सम्पूर्ण भूमंडल पर शासन किया[1]। यह कृतयुग के अन्त की अन्तिम व सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण घटना थी। मान्धाता के अनन्तर के एक नये युग—सोलहवें परिवर्त (६००० कलिपूर्व) से त्रेतायुग का प्रारम्भ हुआ। इस त्रेतायुग का परिमाण ३६०० वर्ष था।

असुरयुग या पूर्वदेवयुग

कश्यप द्वारा दिति से असुरेन्द्रद्वयी[2] उत्पन्न हुई। इनमें हिरण्याक्ष संभवतः ज्येष्ठ था और हिरण्यकशिपु कनिष्ठ भ्राता था[3]। हिरण्याक्ष का शासन सम्भवतः पाताल (योरोपादि) में था और हिरण्यकशिपु का राज्य भारतादि में था। इन दोनों के वंशजों का सम्पूर्ण भूमण्डल पर शासन था[4]। हिरण्यकशिपु के वंशजों ने बाणासुर के पिता असुरेन्द्र बलिपर्यन्त भारतवर्ष पर शासन किया। विष्णु द्वारा परास्त बलिनेतृत्व में दैत्य अपने पूर्वनिवास पाताल (जहां हिरण्याक्ष का शासन था) भाग गये। विष्णु का अवतार सप्तम त्रेतायुग में हुआ था[5], और देवासुर-संग्राम दशयुगपर्यन्त (३६०० वर्ष) होते रहे[6]। इन्द्र का जन्म षष्ठयुग में हुआ

१. असितासुरविजय (रसातलविजय) से मान्धाता का सम्पूर्ण भूमण्डल पर शासन स्थापित होगया—द्र० गाथा—यावत्सूर्य उदयति यावच्च प्रतितिष्ठति।
सर्वं तद्यौवनाश्वस्य मान्धातुः क्षेत्रमुच्यते। (वायु० ८८।६८)
हर्षचरित में मान्धाता की पातालविजय का उल्लेख है—"मान्धाता—रसातलमगात्।" (३ उच्छ्वास)

२. दित्यां पुत्रद्वयं जज्ञे कश्यपादिति नः श्रुतम्।
हिरण्यकशिपुश्चैव हिरण्याक्षश्च वीर्यवान्॥ (हरिवंश० ३।३६।३४)

३. दैत्यानां च महातेजा हिरण्याक्षः प्रभुः कृतः।
हिरण्यकशिपुश्चैव यौवराज्येऽभिषेचितः॥ (हरि० ३।३६।१४)

४. दितिस्त्वजनयत् पुत्रान् दैत्यांस्तात यशस्विनः।
तेषामियं वसुमती पुरासीत् सवनार्णवा॥ (रामायण० ३।१४।१५)

५. बलिसंस्थेषु लोकेषु त्रेतायां सप्तमे युगे।
दैत्यैस्त्रैलोक्याक्रान्ते तृतीयो वामनोऽभवत्॥ (वायुपुराण)

६. युगं वै दश (वायु० ६७।७०, युद्धं वर्षसहस्राणि द्वात्रिंशदभवत् किल (शान्ति० ३२।१४) यदि सहस्र के स्थान पर शत पाठ हो तो युद्ध ३२०० वर्ष तक हुए।

था। असुरों की संज्ञा 'पूर्वदेव' थी, अत: उनके शासनकाल का पूर्वदेवयुग या 'असुरयुग' उपयुक्त नाम है। यह समय ७ युग अर्थात् २५२० वर्ष था, यद्यपि युद्ध अगले तीन परिवर्तों तक होते रहे, अर्थात् बलि का समय (पलायनकाल) ११४८० वि० पू० और अन्तिम युद्धकाल १०४०० वि० पू० था, इसी समय असुरयुग समाप्त हो गया। असुरयुग १४००० वि० पू० से ११४८० वि० पू० तक रहा।

देवयुग

पण्डित भगवद्दत्त ने बिल्कुल ठीक ही लिखा है "भारतवर्ष का इतिहास अपूर्ण ही रहता है, जब तक उसमें देवयुग का स्पष्ट चित्र उपस्थित न हो। भारत ही नहीं, संसार का मूल इतिहास देवयुग के वर्णन बिना अधूरा है।" (भा० बृ० इ० भाग १, पृ० २७७)।

देवराज इन्द्र से देवयुग का प्रारम्भ होता है, जो सप्तम परिवर्तयुग में हुआ, यद्यपि वरुण (द्वितीययुग), विवस्वान् (पंचमयुग) आदि भी देव थे, परन्तु इन्द्र से पूर्व मुख्यसत्ता असुरों के हाथ में थी, इन्द्र का समय (जन्मादि) वि० सं० से १३८४० वि० पू० से १२००० मध्य था, अत: देवासुरयुग की सम्मिलित अवधि २१६० वर्ष (१३८०० वि० पू० तक) थी, तो शुद्धदेवयुग की अवधि १४४० वर्ष थी, देवों और असुरों का कुल राज्यकाल दशयुग अर्थात् ३६०० वर्ष था, इसमें वरुण, विवस्वान् इत्यादि का राज्यकाल भी सम्मिलित है, यद्यपि इन्द्र का शासन १०वें युग तक अर्थात् ११४०० वि० पू० तक रहा, परन्तु उसका अस्तित्व वैश्वामित्र अष्टक और यौवनाश्व मान्धाता तक यहां तक कि हरिश्चन्द्र तक ज्ञात होता है, अत: इन्द्र अनेक सहस्रों वर्षों जीवित रहा, परन्तु देवयुग की समाप्ति ११४०० वि० पू० हो गई थी और प्रारम्भ १३८४० वि० पू० हुआ। प्राचीन ग्रन्थों में देवयुग के उल्लेख द्रष्टव्य हैं—

एवं स देवप्रवरः पूर्वं कथितवान् कथाम्।
सनत्कुमारो भगवान् पुरा देवयुगे प्रभुः। (रामा० १।९।१२)
तद्धैवं विद्वान् ब्राह्मणः सहस्रं देवयुगानि उपजीवति (जै०ब्रा० २।७५)
पुरा देवयुगे ब्रह्मन् प्रजापतिसुते शुभे॥ (महा० १।१४।५)
सोऽब्रवीदहमासं प्राग् गृत्सो नाम महासुरः।
पुरा देवयुगे तात भृगोस्तुल्यवया इव॥ (शान्ति० ३।१९)

देवयुग की प्रधान जातियां थीं—असुर, दैत्य, दानव, किन्नर, यक्ष, राक्षस, नाग और सुपर्ण। देवयुग के प्रधान पुरुष थे—

द्वादश आदित्य, नारद, सोम, वैनतेय गरुड़, शिव, स्कन्द, सनत्कुमार,

धन्वन्तरि, अश्विनीकुमार इत्यादि। इन्द्र देवयुग का प्रधान शासक था और विष्णु ने बलि को परास्त करके देवयुग का प्रवर्तन किया। यह युग लगभग १५०० वर्ष तक रहा। (देवासुरयुग १३८४० वि० पू० से ११४०० वि० पू० तक रहा) अतः देवयुग प्राचीन इतिहास का एक महत्त्वपूर्ण और स्वर्णयुग था।

कृतयुग

यह पहले बता चुके हैं कि कृतयुग युगपरिवर्त प्रारम्भ, (त्रेतायुग मुख) और देवासुर का सम्मिलित, प्रारम्भ प्राचेतस दक्ष प्रजापति से (आज से १४००० वि० पू०) हुआ। कृतयुग के ४८०० वर्षों में देवयुग के ३६०० कुल वर्ष सम्मिलित थे, देवयुग का अन्त १०२४० वि० पू० हुआ, परन्तु कृतयुगसमाप्ति ९२०० वि० पू० हुई।

कृतयुग और देवयुग में मनुष्य की आयु ४०० वर्ष होती थी।

त्रेतायुग का प्रारम्भ

३६०० वर्ष परिणामवाले त्रेतायुग का प्रारम्भ १९वें परिवर्तयुग से, ९२०० वि० पू० पुरुकुत्स-त्रसद्दस्यु के शासनकाल के समय से हुआ और अन्त ४६०० वि० पू० दाशरथिराम के समय हुआ। महाभारत, आदिपर्व (२।३) के प्रमाण[1] पर पं० भगवद्दत्त ने त्रेता द्वापरसन्धि, परशुराम द्वारा क्षत्रियविनाश (विशेषतः कार्त्तवीर्य अर्जुनवध) ५४०० वि० पू० माना है, परन्तु महाभारत का यह मत अनुपयुक्त एवं त्रुटित है। महाभारत के वंशपाठों की महान् त्रुटियां हैं, यह पं० भगवद्दत्त ने भी अनेकत्र माना है[2]। वायुपुराण के प्राचीनपाठों में परशुराम का अवतार (=हैहयवध) उन्नीसवें त्रेता[3] परिवर्त में हुआ था, यह समय ७४४० वि० पू० से ६०८० वि० पू० पर्यन्त था। अतः रामावतार और परशुराम में कम से कम २०४० वर्षों का अन्तर था। अतः परशुरामकृत क्षत्रियवध त्रेता-द्वापर की सन्धि में न होकर त्रेता के मध्यकाल में हुआ। हां, महाभारत में रामावतार (दाशरथि) का समय ठीक लिखा है—

सन्धौ तु समनुप्राप्ते त्रेताया द्वापरस्य च।
रामो दाशरथिर्भूत्वा भविष्यामि जगत्पतिः ॥[4]

---

१. त्रेताद्वापरयोः संधौ रामः शस्त्रभृतां वरः।
असकृत्पार्थिवं क्षत्रं जघानामर्षचोदितः ॥

२. यथा द्र० भा० बृ० इ० भाग २, पृ० १४१, अध्याय अष्टाविंशति।

३. एकोनविंशे त्रेतायां सर्वक्षत्रान्तकोऽभवत्।
जामदग्न्यस्तथा षष्ठो विश्वामित्रपुरस्सरः ॥ (वायु०)

४. महाभारत शान्तिपर्व (३४८।१९)

त्रेतायुग का अन्त (१० परिवर्तयुग=१६वें से २५वें पर्यन्त) ५६०० वि०पू० हुआ। २४वें परिवर्त में ऋक्ष वाल्मीकि और २५वें परिवर्त में शक्ति वासिष्ठ व्यास हुए—

"परिवर्ते चतुर्विंशे ऋक्षो व्यासो भविष्यति।"
"पंचविंशे पुनः प्राप्ते···। वासिष्ठस्तु यदा व्यासः शक्ति-
नाम भविष्यति।"

पं० भगवद्दत्त ने त्रेतान्त या द्वापरादिकाल में पृथ्वी पर आयुर्वेदावतारकाल माना है। वहां पर प्रतर्दन-राम की समकालीनता, भरद्वाज, दिवोदास आदि के समय के सम्बन्ध में जो कुछ लिखा है, वह अत्यन्त भ्रामक है, इन सबकी आलोचना यथास्थान की जायेगी[1]। पार्जीटर त्रेता का प्रारम्भ सम्राट् सगर के समय से मानता हैं, वह भी भ्रामक एवं मिथ्या है[2]।

द्वापरयुग

इस युग की अवधि २४०० थी, पुराणों में इसका प्रारम्भ दाशरथि राम के परमधामगमन के दिन (५६०० वि० पू०) से माना जाता है और अन्त ३२०० वि० पू० या ३०८० वि० पू० श्रीकृष्ण वासुदेव के परधामगमन के दिन से हुआ था। श्रीकृष्ण का जन्म ३२०० वि० पू० और मृत्यु ३०८० वि० पू० में हुई, उनकी आयु १२० या १२५ वर्ष थी।

भारतोत्तरतिथियाँ

कलियुग का प्रारम्भ

वायुपुराण में (६६।४२८) में लिखा है कि १२०० वर्षपरिमाण वाला कलियुग ठीक उसी दिन से प्रारम्भ हुआ जब श्रीकृष्ण दिवंगत हुए[3]।

कलि का अन्त

पुराणों में स्पष्ट ही कलियुग को बारम्बार द्वादशाब्दशतात्मक (१२०० वर्ष वाला) कहा गया है—और सप्तर्षियों के मघानक्षत्र पर आने पर यह युग प्रवृत्त हुआ—

तदा प्रवृत्तश्च कलिर्द्वादशाब्दशतात्मकः[4]।

---

१. द्र० भा० बृ० इ० भा० १, पृ० २६६
२. द्र० हि० ट्रे० एं० इ०
३. यस्मिन् कृष्णो दिवं यातस्तस्मिन्नेव तदा दिने।
प्रतिपन्नः कलियुगस्तस्य संख्यां निबोधत॥
४. विष्णुपुराण (४।२४।१०६, भागवत पु० (१२।२।३१)

कलियुग को चार लाख बत्तीस हजारवर्ष परिमाण का मानने की कल्पना निरर्थक एवं भ्रामक है, इसका सप्रमाण खण्डन पहले ही कर चुके हैं। पुराणों में सदसदात्मक दोनों ही मत उपलब्ध हैं, इतिहास में कल्पना नहीं, तथ्य को ग्रहण किया जाता है। अस्तु।

कल्यन्त

कलियुग का अन्त कब हुआ, यह पुराणपाठों में ही अनुसंधेय है। वायु पुराणादि में लिखा है कि इस युग (कलियुग) के क्षीण (समाप्त) होने पर विष्णु-यशा नामक पाराशर्यगोत्रीय कल्कि ब्राह्मण के रूप में विष्णु का दशम अवतार हुआ—याज्ञवल्क्यगोत्रीय कोई ब्राह्मण उनका पुरोहित था—

अस्मिन्नेव युगे क्षीणे संध्याश्लिष्टे भविष्यति।
कल्किर्विष्णुयशा नाम पाराशर्यः प्रतापवान्॥
दशमो भाव्यसंभूतो याज्ञवल्क्यपुरस्सरः। (वायु पु०)

हम १४ मनुओं के विषय में सप्रमाण सिद्ध कर चुके हैं कि वे सभी भूत-कालिक थे, इसी प्रकार 'कल्कि' अवतार भी भूतकाल में हो चुका था। पुराणों के द्वैध (भूत एवं भविष्य) वर्णन से भी हमारे मत की पुष्टि होती है। पुराणों में 'भाव्यसंभूत' और भविष्यति, अभवत्[1] जैसी क्रियाओं का दर्शन होता है।

वस्तुतः कल्कि किस राजा के राज्यकाल में हुए, इसका समुल्लेख केवल कल्किपुराण में अवशिष्ट रह गया है—तदनुसार कल्कि का जन्म प्रद्योतवंशीय राजा विशाखयूप के समय में हुआ—

विशाखयूपभूपालपालितास्तापवर्जिताः।
विशाखयूपभूपालः कल्केर्निर्याणमीदृशम्। (कल्कि पु० १।२।३३)
श्रुत्वा स्वपुत्रं विषये नृपं कृत्वा गतो वनम्। (कल्कि पु० ३।१६।२६)

पुराणों के अनुसार बालक (मागध) प्रद्योतवंश का तृतीय राजा विशाखयूप था, जिसने कलिसंवत् १०५० से ११०० तक पचास वर्ष राज्य किया। कल्कि का आविर्भाव कलियुग की संध्या अर्थात् १००० कलिसंवत् के पश्चात् और कलि-युगान्त से कुछ वर्ष पूर्व हुआ अतः ११०० कलिसंवत् के आसपास कल्कि हुए। वस्तुतः कल्कि एक महान् चक्रवर्ती सम्राट् थे, जो विशाखयूप के अनन्तर भारत के सम्राट् बने, वे युगान्तकारी एवं युगप्रवर्त्तक महापुरुष थे[2]। कल्कि ने २५ वर्ष-

---

१. संध्याश्लिष्टे भविष्यति, कलियुगेऽभवत्। (वायु०)

२. स धर्मविजयी राजा चक्रवर्ती भविष्यति।
संक्षेपको हि सर्वस्य युगस्य परिवर्तकः॥ (महाभारत ३।१९०।९५।९७)

पर्यन्त राज्य किया 'मनुष्य' की भांति[1]।

अतः कलियुग का अन्त महान् इतिहासपुरुष कल्कि के अन्त के साथ ही हुआ। कलियुग केवल १२०० वर्षों का था।

आज तक भारतीय इतिहास की किसी भी पुस्तक में ऐतिहासिक कल्कि का नाममात्र भी उल्लिखित नहीं है, जो कृष्णतुल्य महापराक्रमी और महाबुद्धिमान् महान् शासक थे तथा जिन्होंने म्लेच्छों एवं विधर्मियों से भारत की अपूर्व रक्षा की थी—

कल्की विष्णुयशा नाम द्विजः कालप्रचोदितः।
उत्पत्स्यते महावीर्यों महाबुद्धिपराक्रमः॥

(महा० ३।१९०।९३)

दशमो भाव्यसंभूतो याज्ञवल्क्यपुरस्सरः।
प्रवृत्तचक्रो बलवान् म्लेच्छानामन्तकृद्बली॥ (वायु०)

कलिसंवत् और महाभारतयुद्ध की तिथि

कलिसंवत् और महाभारतयुद्ध की तिथि का घनिष्ठ सम्बन्ध है[2], यह तिथि प्राचीनतम भारतीय इतिहासभवन (कालक्रम) की आधारशिला है। परन्तु पाश्चात्य गवेषकों के साथ भारतीय अनुसंधाता भी प्रायः कलिसंवत् की प्रामाणिकता पर निश्चल विश्वास नहीं करते और उसे अतिशंकालु दृष्टि से अवलोकन करते हैं। प्राचीन भारतीय इतिहासकार (पुराणादि), आचार्य, ज्योतिषीगण सभी सर्वसम्मति से ३०४४ वि० पू० से कलिसम्वत् का प्रारम्भ मानते थे, केवल एक अर्वाचीनतर भारतीय इतिहासकार कश्मीरक कह्लण को छोड़कर। कह्लण के भ्रम का कारण आगे बताया जायेगा।

विंसेन्ट स्मिथ, विन्टरनीत्स, कीथ विशेषतः फ्लीट[3] ने इस कलिसम्वत को

---

१. पंचविंशोत्थितो कल्पे पंचविंशतिर्वै समाः।
विनिघ्नन्सर्वभूतानि मानुषानेव सर्वशः॥ (वायु०)

२. ततो नरक्षये वृत्ते शान्ते नृपमण्डले।
भविष्यति कलिर्नाम चतुर्थं पश्चिमं युगम्।
ततः कलियुगस्यादौ पारीक्षिज्जनमेजयः (युगपुराण ७४-७६)
अन्तरे चैव संप्राप्ते कलिद्वापरयोरभूत्।
समन्तपञ्चके युद्धं कुरुपाण्डवसेनयोः॥ (महा० १।२।९)

३. The reckoning is invented one divice by the Hindu astronomers for the purpose their calculation, some thirty five centuries after the date (J.R.A.S. 1911, p. 485)

केवल भारतीय ज्योतिषियों की कल्पनामात्र माना है। फ्लीट के चरण-चिह्नों पर चलता हुआ, एक भारतीयलेखक प्रबोधचन्द्रसेन लिखता है—"It is thus seen that the Kali-reckoning was an astronomical fiction invented by Aryabhata."

सर्वप्रथम तो उपर्युक्त लेखक का यह अज्ञान, उसकी अल्पज्ञता को प्रकट करता है कि सर्वप्रथम आर्यभट ने नहीं, उससे पूर्व महाभारतकालीन ज्योतिषी गर्गाचार्य और वेदांगज्योतिषी लगधाचार्य ने कलिसम्वत् का उल्लेख किया है—

कलिद्वापरसंधौ तु स्थितास्ते पितृदैवतम् ।
मुनयो धर्मनिरताः प्रजानां पालने रताः ॥
कल्पादौ भगवान् गर्गः प्रादुर्भूय महामुनिः ।
ऋषिभ्यो जातकं कृत्स्नं वक्ष्यत्येवं कलिं श्रितः ॥

ज्ञातव्य है कि गर्गगोत्र में ज्योतिष के अनेक महान् विद्वान् गणितज्ञ हुए थे, एक गर्गाचार्य ने श्रीकृष्ण का नामकरण, जातकादि संस्कार किये थे। भागवत-पुराण (१०-१८) में गर्गाचार्य के द्वारा प्रणीत परावरज्ञान के स्रोत ज्योतिषसंहिता का उल्लेख है[1]। इस गर्गवंश के अनेक आचार्यों ने ज्योतिषग्रन्थ लिखे, अतः उनकी प्रामाणिकता स्वयंसिद्ध है। कलि के आदि में पुनर्गर्ग ने ऋषियों को जातक ज्ञान दिया। अतः कलिसम्वत् का उल्लेख किया है। सिद्धान्तशिरोमणि की मरीचिटीका के लेखक मुनीश्वर (१५६० शकसम्वत्) ने लगध के वचन उद्धृत किये हैं उनमें कलिसम्वत् का स्पष्ट निर्देश है[2]। कलिसम्वत् में तिथिगणना का सर्वप्रथम स्पष्ट उल्लेख अभी तक अवन्तिनाथ विक्रमादित्य के धर्माध्यक्ष हरिस्वामी के शतपथब्राह्मण व्याख्याग्रन्थ में मिला है। इससे पूर्व महाभारत और पुराणों में कलिसम्वत् के संकेत हैं।

श्रीमतोऽवन्तिनाथस्य विक्रमार्कस्य भूपतेः ।
धर्माध्यक्षो हरिस्वामी व्याख्यच्छातपथीं श्रुतिम् ।
यदाब्दानां कलेर्जग्मुः सप्तत्रिंशच्छतानि वै ।
चत्वारिंशत् समाश्चान्यास्तदा भाष्यमिदं कृतम् ॥

---

१. "गर्गः पुरोहितो राजन् यदूनां सुमहातपाः ।
ज्योतिषामयनं साक्षाद् यत्तज्ज्ञानमतीन्द्रियम्,
प्रणीतं भवता येन पुमान् वेद परावरम् ॥"

२. चतुष्पादी कला संज्ञा तदध्यक्षः कलिस्मृतः । इति लगधप्रोक्तत्वात् ॥

उपर्युक्त श्लोक के अर्थ दो प्रकार से किये जाते हैं, कलिसम्वत् ३७४० में भाष्य की रचना की गई अथवा ३०४७ कलिसम्वत् में भाष्य लिखा गया। पं० भगवद्दत्त ने कलिसम्वत् ३७४० में हरिस्वामी का समय माना है, परन्तु श्लोक में अवन्तिनाथ विक्रमादित्य का उल्लेख द्वितीय अर्थ को मानने को बाध्य करता है। इस सम्बन्ध में पं० उदयवीर शास्त्री के मत ही उपयुक्त प्रतीत होते हैं कि कलिसम्वत् ३७४० न होकर ३०४७ ही ठीक है जो विक्रमसम्वत् प्रारम्भ होने के लगभग तीन वर्ष अनन्तर पड़ता है[1]। पञ्चतन्त्रादि ग्रन्थों में हरिस्वामी का नाम विक्रम के साथ मिलता है। विक्रम के भ्राता का नाम भी हरि या भर्तृहरि था।

शिलालेखादि में कलिसम्वत् ३४१८ के उल्लेख दाक्षिणात्य राजाओं के लेखों में मिलते हैं। इसका सर्वाधिक प्रसिद्ध उल्लेख हर्षवर्धन के समकालीन, उसके प्रतिद्वन्द्वी चालुक्यराजा महाराजा पुलकेशी के शिलालेख में मिला है[2]।

महाभारतयुद्ध कलिद्वापर की संधि में

अतः कलिसम्वत् ज्योतिषीपण्डितों की केवल कल्पना नहीं थी, कलियुग से ही कलिसम्वत् का प्रारम्भ था, पुराणों में कल्योत्तर राजाओं का राज्यकाल कलिव्यतीत होने के आधार पर लिखा है। तदनुसार ही महाभारतयुद्ध, कृष्ण का दिवंगत होना[3], राज्याभिषेक, कलिवृद्धि आदि का सम्बन्ध भी कलिसम्वत् से ही है—

अन्तरे चैव संप्राप्ते कलिद्वापरयोरभूत्।
समन्तपंचके युद्धं कुरुपाण्डवसेनयोः॥ (आदिपर्व २।६)

---

१. विक्रम सम्वत् ६६५ या ६२८ ई० में ऐतिहासिक आधारों पर उज्जयिनी के स्वामी किसी विक्रमादित्य का पता नहीं लगता।—यदि सप्तत्रिंशच्छतानि पद को एक न मानकर सप्त को पृथक् तथा 'त्रिंशच्छतानि' को पृथक् पद समझा जाय, तो सम्वत्प्रवर्तक विक्रमादित्य के काल के साथ हरिस्वामी के निर्दिष्टकाल का कोई असामंजस्य नहीं रहता। (वे० द० इ० पृ० २७४)

२. त्रिंशत्सु त्रिसहस्रेषु भारतादाहवादितः।
सप्ताब्दशतयुक्तेषु शतेष्वब्देषु पंचसु।
पंचाशत्सु कलौ काले षट्सु पंचशतेषु च।
समासु समतीतासु शकानामपि भूभुजाम्॥
(इण्डियन एण्टिक्विटि भाग ५, पृ० ७०)

३. यस्मिन् कृष्णो दिवं यातस्तस्मिन्नेव तदा दिने।
प्रतिपन्नः कलियुगमिति प्राहुः पुराविदः॥ (भागवत १२।२।३३)

तृतीय अध्याय

दीर्घजीवी युगप्रवर्तक महापुरुष

दश विश्वस्रज या दश ब्रह्मा

आधुनिक युग में प्राचीन भारतीय (प्राग्महाभारतीय) इतिहास को सम्यग् रूप में न समझने का एक प्रधान कारण है प्राचीन मनुष्य के दीर्घजीवन पर अविश्वास। प्राचीन मनुष्य (विशेषतः देव और ऋषि[1]) योग एवं रसायन (अमृत) सेवन के द्वारा दीर्घयुगपर्यन्त जीवित रहते थे। इनमें से आदिम दश विश्वस्रजों या दश या नव ब्रह्मा (नौ ब्रह्मा) या सप्तर्षि इतिहासपुराणों एवं वैदिकग्रन्थों में बहुधा उल्लिखित है—

भृग्वंगिरोमरीचींश्च पुलस्त्यं पुलहं ऋतुम्।
दक्षमत्रिं वसिष्ठं च निर्ममे मानसान्सुतान्॥

(ब्रह्माण्ड० १।२।६।१८)

नव ब्रह्माण इत्येते पुराणे निश्चयं गताः॥

(ब्रह्माण्ड० १।२।६।१८, १९)

२१ प्रजापतियों की संज्ञा 'ब्रह्मा' थी, इनको स्वयम्भू भी कहा जाता था, ऐसे और भी अनेक ब्रह्मा थे, इनमें एक ब्रह्मा वरुण आदित्य था, जिसका परिचय इसी अध्याय में लिखा जायेगा।

उपयुक्त नौ ब्रह्माओं के अतिरिक्त प्रजापति धर्म[2], प्रजापति रुचि[3] और प्रधानतम प्रजापति स्वायम्भुवमनु[4] या बाइबल के आदम—ये मिलाकर आदिम १२ प्रजापति या ब्रह्मा थे—

---

१. प्राचीन या आदिम युगों में मनुष्य की तीन श्रेणियां थीं—
ततो वै मनुष्याश्च ऋषयश्च देवानां यज्ञवास्त्वभ्यायन् (ऐ० ब्रा० ६।१)
त्रयः प्राजापत्या देवा मनुष्याः असुराः (बृ० उ० ५।२)
प्रजापतिगण स्वयं ऋषि ही होते थे।

२. ततोऽसृजत्ततो ब्रह्मा धर्मं भूतसुखावहम्।

३. प्रजापतिं रुचिं चैव पूर्वेषामपि पूर्वजौ॥ (ब्रह्माण्ड० १।२।६।२०)

४. स वै स्वायम्भुवः पूर्वपुरुषो मनुरुच्यते। (१।२।६।३६)

इत्येते ब्रह्मणः पुत्रा प्रजादौ द्वादशस्मृताः ।
भृग्वादयस्तु ये तेषां द्वादश वंशा दिव्या देवगुणान्विताः ।
द्वादशैते प्रसूयन्ते प्रजाः कल्पे पुनः ।। (ब्रह्माण्ड० १।२।६।२७)

इनके अतिरिक्त रुद्र (या नीललोहित) आदिम प्रजापतियों में से एक थे—

अभिमानात्मकं रुद्रं निर्ममे नीललोहितम् ।
(ब्रह्माण्ड० १।२।६।२३)

पोंगापंथी पंडितों के अतिवादों के विपरीत, जो लोग दीर्घायु या दीर्घ राज्यकाल में विश्वास नहीं करते और अपने अनुमान या मनमानी कल्पना के अनुसार आयु या राज्यकाल का निर्णय कर लेते हैं, उनके अनुमान, अनुमानकोटि में नहीं, केवल धूर्त या भ्रष्ट कल्पनायें हैं अतः अप्रामाणिक हैं, यथा मैक्समूलर, पार्जीटर या रमेशचन्द्र मजूमदार आदि बिना किसी प्रमाण के राजाओं का राज्यकाल या ऋषिजीवन १८ वर्ष औसत मानते हैं—"Pargiter worbd out a detailed Synthesis and Synchronism of all the known dynasties. Taking Manu as at 3100 B.C. (the date of Flood) and Paribsit at about 1400 B.C. A rough basic from can be drown which gives the reasonable age difference of 18 years per King".[1]

इसी प्रकार डा० काशीप्रसाद जायसवाल, वासुदेवशरण अग्रवाल, स्व० चतुरसेन शास्त्री आदि ने तथाकथित औसतगणना द्वारा मनमाना कालनिर्णय किया है । यथा स्व० चतुरसेन शास्त्री स्वायम्भुवमनु की ४५ पीढ़ियों और ६ मनुओं का औसत २८ वर्ष मानकर सत्ययुग का काल ४५ × २८ = १२६० वर्ष, त्रेतागुण का १०६२ वर्ष और द्वापर का ३६२ वर्ष मानते थे ।[2] और भी बहुत से लेखक इसी प्रकार औसत द्वारा आयु या राज्यकाल निकालते हैं, उनका मत किसी प्रकार भी प्रामाणिक नहीं माना जा सकता ।

यह पहिले ही बता चुके हैं कि प्रजापति (ऋषिगण) और देवों की आयु अत्यन्त दीर्घ होती थी, सामान्यतः प्रजापति ७०० या ७२० या एक सहस्र वर्ष जीवित रहते थे और देवता ३०० से ५०० वर्ष तक । कुछ अपवाद भी थे, जिनमें कश्यप जैसे प्रजापतिऋषि और इन्द्रतुल्य देव अनेक सहस्रों वर्ष तक जीवित रहे । इस दीर्घायुष्ट्व के रहस्य को न समझकर पार्जीटर लिखता है—"It is

---

१. The date of Mahabharata, p. 61 by S. B. Roy.

२. भारतीय संस्कृति का इतिहास—प्रारम्भिक अंश, लेखक आचार्य चतुरसेन शास्त्री ।

generally rishis who appear on such occassion in defiance of chronology, and rasely the Kings appear".[1]

दीर्घयज्ञ प्रसंग में जैमिनीयब्राह्मण (१।३) में कथन है कि प्रजापति ७०० वर्ष और देवों ने ३०० वर्ष में एक दीर्घसत्र को समाप्त किया[2]।

कल्पसूत्रकारों एवं दार्शनिकों में दीर्घसत्रयज्ञों के सम्बन्ध में विवाद होता था कि विश्वसृजों या प्रजापतियों के दीर्घसत्र कलियुग में कैसे सम्भव हैं जबकि इस समय मनुष्यों की दीर्घायु नहीं होती—

"सहस्रसंवत्सरं तथायुषामसंभवान्मनुष्येषु।"[3]
"सहस्रसंवत्सरं मनुष्याणामसम्भवात्।"[4]

कुछ आचार्यों के मत में ये कुलसत्र[5] थे, अर्थात् एक ही कुल के वंशज क्रमशः यह यज्ञ करते रहते थे—पीढ़ी दर पीढ़ी, यथा आसुरिगोत्र के आचार्यों ने एक-सहस्रवर्ष तक यज्ञ किया।

आसुरेः प्रथमं शिष्यं यमाशुश्चिरजीविनम्।
पंचस्रोतसि यः सत्रमास्ते वर्षसाहस्रिकम्॥[6]

कुछ लोग यज्ञ में सहस्रवर्ष का अर्थ सहस्रमास या सहस्रदिन लेते थे, परन्तु पूर्वयुगों में प्रजापतियों की आयु अत्यन्त दीर्घ होती थी, अतः उन्होंने वास्तविक सहस्र वर्षपर्यन्त यज्ञ किये थे, तभी यह यज्ञपरम्परा चली, ब्राह्मणवचनों के प्रमाण से यह तथ्य पुष्ट होता है[7]।

---

१. A. G. H. T. (P. 41)

२. प्रजापतिः सहस्रसंवत्सरमास्त। स सप्तशतानि वर्षाणां समाप्येमामेव जितिमयजत्। देवानब्रवीदेतानि यूयं शतानि वर्षाणां समापयथेति॥

(जै० ब्रा० १।३)

३. जै० मी० सू० (६।७।११३)

४. का० श्रौ० (१।६।१७)

५. कुलसत्रमिति कार्ष्णाजिनिः (का० श्रौ० १।६।२२)

६. महा० (१२।२।८।१०)

७. जै० ब्रा० (१।३) तथा आप० श्रौ० का वचन द्रष्टव्य है—
विश्वसृजः प्रथमाः सत्रमासत सहस्रसमं प्रसुतेन यन्तः।
ततो ह जज्ञे भुवनस्य गोपा हिरण्मयः शकुनिर्ब्रह्म नामेति॥ (२३।१४।१७)
ये प्रथम विश्वसृज मरीचि, वसिष्ठादि ही थे।

दश विश्वस्रज, सप्तर्षि, २१ प्रजापति या नव ब्रह्मा—मारीचि, पुलस्त्य, अत्रि, वसिष्ठादि तप और योग या जन्मसिद्धि से दीर्घजीवी थे, आदिम ऋषियों की आयु का कोई बन्धन नहीं था, वे सन्तान भी दीर्घायु पर्यन्त उत्पन्न करते रहे, यथा कश्यप ऋषि (प्रजापति) ने लगभग २००० वर्ष के दीर्घकाल के मध्य में देवासुरों एवं अन्य प्रजा को उत्पन्न किया, अतः कहा गया है—

ब्रह्मणः सदृशाश्चैते धन्याः सप्तर्षयः स्मृताः।
ब्रह्मलोकप्रतिष्ठास्तु स्मृताः सप्तर्षयोऽमलाः।
भूतभव्यभवज्ज्ञानं बुद्ध्वा चैव ये स्वयम्।
दीर्घायुषो मन्त्रकृत ईश्वरा दीर्घचक्षुषः।
तेषां चैवान्वयोत्पन्ना जायन्तीह पुनः पुनः।
यस्माच्च वरदाः सप्त परेभ्य एव याचताः।
तस्मान्न कालो न वयः प्रमाणमृषिभावने।

(हरिवंश पु० १।७ अध्याय)

स्वयम्भू=ब्रह्मा और स्वायम्भुवमनु की आयु

स्वयम्भू का इतिहास एक जटिल समस्या है। इतिहासपुराणों में अनेक प्रजापतियों को स्वयम्भू या ब्रह्मा कहा गया है और अनेकत्र ऋषियों को ब्रह्मा का मानसपुत्र कहा गया, जैसा कि त्रितादि के सम्बन्ध में लिख चुके हैं कि वे आङ्गिरस आप्त्य के पुत्र होने से 'आप्त्य' कहे जाते थे, परन्तु महाभारत (१२।३३६।२१) में उनको ब्रह्मा का मानसपुत्र कहा गया है, इस प्रकार के वर्णनों से स्वयम्भू ब्रह्मा के काल (समय) के सम्बन्ध में—भ्रम होना स्वाभाविक है। महाभारत, शान्ति पर्व ३४७।४०।४३ में ब्रह्मा स्वयं अपने सात जन्मों का वर्णन करते हैं—

त्वत्तो मे मानसं जन्म प्रथमं द्विजपूजितम्।
चाक्षुषं वै द्वितीयं मे जन्म चासीत् पुरातनम्॥
त्वत्प्रसासात् तु मे जन्म तृतीयं वाचिकं महत्।
त्वत्तः श्रवणजं चापि चतुर्थं जन्म मे विभो।
नासिक्यं चापि मे जन्म त्वत्तः परमुच्यते।
अण्डजं चापि मे जन्म त्वत्तः षष्ठं विनिर्मितम्।
इदं च सप्तमं जन्म पद्मजन्मेति वै प्रभो॥

अतः ब्रह्मा के न्यूनतम सात जन्म उपर्युक्त श्लोकों में वर्णित हैं—(१) मानस ब्रह्मा, (२) चाक्षुष ब्रह्मा, (३) वाचस्पत्य ब्रह्मा, (४) श्रावण ब्रह्मा,

(५) नासिक्य ब्रह्मा, (६) हिरण्यगर्भ अण्डज ब्रह्मा और (७) पद्मज कमलोद्भव ब्रह्मा।

कमलोद्भव ब्रह्मा

बाइबल में इसी को मिट्टी (कर्दम=कीचड़) से उत्पन्न 'आदम' कहा है। अतः प्रथम मानव स्वयम्भू या आत्मभू (आदम) कीचड़-मिट्टी से कमल सदृश उत्पन्न हुआ—"And the lord god for med man of the dust of the ground and breathed into his nostril the breath of life and man became a living soul". (Holy Bible, p. 6).

वर्तमान मानव का ज्ञात इतिहास सप्तम पद्मज ब्रह्मा से प्रारम्भ होता है। वतमानमानवसृष्टि से पूर्व न जाने कितनी बार मानवसृष्टि हुई होगी, इसे कौन जाने। वेद के नासदीयसूक्त में कथन है—'अर्वाग् देवाः' जब देवता ही ब्रह्माण्ड (पृथ्वी) के उत्तरकाल में उत्पन्न हुए तब देवों से पूर्व के इतिहास को मनुष्य कैसे जान सकता है, फिर भी सात ब्रह्माओं की स्मृति इतिहासपुराणों में विद्यमान है, जिनसे सात बार मानवसृष्टि हुई। प्राणियों में ब्रह्मा सर्वप्रथम उत्पन्न हुए—

भूतानां ब्रह्मा प्रथमोत जज्ञे (अथर्व १८।२२।२१)
आकशप्रभवो ब्रह्मा (रामायण २।११०।५)

ब्रह्मा=स्वयम्भू स्वयं आकाश से उत्पन्न हुए, अतः आदिमानव ब्रह्मा था, अतः मनुष्य आदिकाल से इसी रूप में था, जैसा आज है, इससे विकासवाद का पूर्ण खण्डन होता हैं। आत्मभू या स्वयम्भू का पुत्र होने से मनु को स्वायम्भुव मनु कहा जाता है। पं० भगवद्दत्त ब्रह्मा का समय भारतयुद्ध से ११००० अथवा १४००० वि० पू० मानते थे—(१) "ब्रह्माजी का काल भारतयुद्ध से न्यूनातिन्यून ११००० वर्ष पूर्व का माना है[1]।" अन्यत्र उन्होंने ब्रह्मा क न्यूनातिन्यून काल १४००० वि० पू० माना है[2]।

पुराणगणना से १४००० वि० पू० प्रचेता, दक्ष और कश्यप का समय था। ब्रह्मा या स्वायम्भुवमनु, प्रचेता से न्यूनातिन्यून १६००० वर्ष पूर्व अर्थात् ३२००० वर्ष पूर्व या विक्रम से ३०००० वर्ष पूर्व हुए, पृथ्वी पर जलप्रलय, अग्निदाह और औषधिजन्म न जाने कितने सहस्रों वर्षों तक होता रहा, इसका ठीक-ठीक अनुमान नहीं, और ब्रह्मा ने मानवसृष्टि करने में कितना समय लगाया,

---

१. भा० बृ० इ० भाग-२ (पृ० १८), वही भाग। (पृ० २५४)
२. शरीरादर्धमथो भार्यां समुत्पादितवाञ्छुभाम् (हरिवंश ३।१४।२२)

परन्तु स्वयम्भू और स्वायम्भुवमनु का समय विक्रम से लगभग तीससहस्रपूर्व अवश्य था।

पं० भगवद्दत्त बाइबल के आदम को स्वयम्भू या आत्मभू का विकार मानते हैं, पुराण इस सम्बन्ध में स्वयं अस्पष्ट या निर्णय की स्थिति में हैं कि शतरूपा ब्रह्मा की पत्नी थी या स्वायम्भुवमनु की, बाइबल में आदम की पत्नी का नाम 'हौवा' है, इसमें कोई सन्देह नहीं कि यह हौवा 'शतरूपा' का ही रूप है और आत्मभू या स्वयम्भू का अपभ्रंश 'आदम' है, परन्तु हमारे मत में 'आदम' स्वायम्भुवमनु[1] था और उसकी पत्नी शतरूपा ही 'हौवा' थी जैसा कि अधिकांश पुराणों का मत है, अतः आदम ब्रह्मा नहीं स्वायम्भुवमनु था, यह भी सम्भव है कि मनु ही प्रथम पुरुष हो और शतरूपा प्रथम स्त्री, तथा स्वयम्भू ब्रह्मा केवल कल्पना में ही हो, इस सम्बन्ध में निर्णय करना अत्यन्त कठिन है, परन्तु स्वायम्भुव मनु अवश्य ही प्रथम ऐतिहासिक पुरुष था—"स वै स्वायम्भुवः पूर्वपुरुषो मनुरुच्यते"।

आदम या स्वायम्भुवमनु की आयु बाइबल में ९३० वर्ष बताई गई है, जो सत्य प्रतीत होती है—"And all the days that Adam lived were nine hundred and thirty years." (Holy Bible p. 9)

बाइबल के आधार पर भविष्यपुराण में 'आदम' को प्रथम पुरुष और हव्यवती (हौवा) को प्रथमस्त्री बताया गया है—

आदमो नाम पुरुषः पत्नी हव्यवती तथा।

अतः आदम स्वायम्भुवमनु था, स्वयं स्वयम्भू नहीं।

स वै स्वायम्भुवस्तात पुरुषो मनुरुच्यते।
तस्यैकसप्ततियुगं मन्वन्तरमिहोच्यते॥

(हरिवंश० १।२।४)

स वै स्वायम्भुवः पूर्वपुरुषो मनुरुच्यते।
तस्यैकसप्ततियुगं मन्वन्तरमिहोच्यते॥

(ब्रह्माण्ड० १।२।६।३६)

इन वर्षों को दिव्यवर्ष मानना और ७१ चतुर्युग मानना भ्रममात्र और कल्पनामात्र है।

यह हम पूर्व संकेत कर चुके हैं कि आदिमब्रह्मा ही अनेक शास्त्रों का मूल-

---

१. स वै स्वायंभुवः पूर्वपुरुषो मनुरुच्यते। लब्ध्वा तु पुरुषः पत्नीं शतरूपामयोनिजाम्। (ब्रह्माण्ड १।२।१६।३६, ३७)]

प्रवक्ता था[1]। वरुणादि को भी भ्रम से आदिब्रह्मा समझ लिया गया है। उत्तरकाल में विभिन्न युगों में २१ प्रजापतियों एवं १४ सप्तर्षिगणों ने शनैः शनैः प्रारम्भिक शास्त्रों की रचना की, उन्हें भ्रमवश आदिब्रह्मा के मत्थे मढ़ दिया है। उदाहरणार्थ छान्दोग्योपनिषद् (३।११।४) का यह विद्यावंश द्रष्टव्य है—"तदेतद् ब्रह्मा प्रजापतये प्रोवाच प्रजापतिर्मनवे, मनुः प्रजाभ्यः।" यहां प्रजापति विवस्वान् की ओर संकेत है, मनु वैवस्वतमनु थे, जो सप्तमपरिवर्त में हुए। यहां ब्रह्मा स्वयं कश्यप का अभिधान संकेतित है, इसी परंपरा को गीता में वासुदेव कृष्ण इस प्रकार कहते हैं—

इम विवस्वते योगं प्रोक्तवानहमव्ययम्।
विवस्वान् मनवे प्राह मनुरिक्ष्वाकवेऽब्रवीत्॥[2] (गीता ४।१)

उपर्युक्त श्लोक में 'अहम्' (श्रीकृष्ण) स्वयं ब्रह्मा कश्यप ऋषि थे और विवस्वान् उनके पुत्र तथा उनके पुत्र मनु वैववस्वत तथा पुत्र इक्ष्वाकु आदि प्रजा।

अतः ब्रह्मा सम्बन्धी समस्या अत्यन्त जटिल है। पं० भगवद्दत्त ने छान्दोग्य-प्रसंग में ब्रह्मा स्वयम्भू को और प्रजापति, कश्यप को माना है, जो अलीक एवं अनुचित है, क्योंकि विवस्वान् स्वयं एक महान् प्रजापति थे, जिन्होंने अपने दोनों पुत्रों यम और मनु को शिक्षा दी।

पं० भगवद्दत्त सभी प्रजापतियों को एक ब्रह्मा मानकर लिखते हैं—"ब्रह्मा पितृयुग और तत्पश्चात् देवयुग में जीवित थे[3]।" देवयुग के ब्रह्मा कश्यप प्रजापति थे, स्वयम्भू ब्रह्मा नहीं।

बाइबल में आदम (स्वयम्भू ब्रह्मा या स्वायम्भुवमनु) की आयु ९३० वर्ष बताई गई है, तदनुसार भविष्यपुराण में लिखा है—

"त्रिंशोत्तरं नवशतं तस्यायुः परिकीर्तितम्।"

यदि आदम स्वायम्भुवमनु था तो उसकी यही (९३० वर्ष) आयु थी, देवासुर युग में न स्वयम्भू जीवित था और न स्वायम्भुवमनु।

---

१. द्रष्टव्य भा० बृ० इ० भाग-२ (अध्याय 'श्री ब्रह्माजी');
यह कुछ शास्त्रों का प्रवक्ता अवश्य था, पुराण सौर हिब्रू ग्रन्थों से पुष्ट होता है।
तुलना कीजिये—

२. Son and Father walked together...Son of Vivahvat, the great yim (Avesta).

३. भा० बृ० इ० भाग-२ (पृ० २७)

वरद्रपितामहसम्बन्धी भ्रान्ति का निराकरण

इतिहासपुराणों में बहुधा चर्चा मिलती है कि पितामह ब्रह्मा ने अमुक असुर या राक्षस या राजा को तपस्या से प्रसन्न होकर वर दिया, यथा रामायण में पितामह, रावणादि को वर देते हैं—

पितामहस्तु सुप्रीतः सार्धं देवैरुपस्थितः
एवमुक्त्वा तु तं राम दशग्रीवं पितामहः।
विभीषणमथोवाच वाक्यं लोकपितामहः।[1]

इसी प्रकार पितामह असुरों यथा हिरण्यकशिपु आदि को वर देते हैं—

चराचरगुरुः श्रीमान् वृतो देवगणैः सह।
ब्रह्मा ब्रह्मविदां श्रेष्ठो दैत्यं वचनमब्रवीत्॥[2]

इत्यादि प्रसंगों में पितामह असुरों के पिता कश्यप या पुलस्त्यादि को ही समझना चाहिए, क्योंकि राक्षसों के पितामह पुलस्त्य या पुलस्ति थे, (आदिम पुलस्त्य नहीं, विश्रवा के पिता पुलस्त्यवंशीय ऋषि) और असुर दैत्यों के पिता या पितामह कश्यप थे, वे ही प्रायः देवदानवों को वरदान देते थे, यथा अदिति, दिति, कद्रू, विनता आदि को उन्होंने ही वर दिये थे—

दितिर्विनष्टपुत्रा वै तोषयामास कश्यपम्।
तां कश्यपः प्रसन्नात्मा सम्यगाराधितस्तया।
वरेण च्छन्दयामास सा च वव्रे वरं ततः॥
(हरिवंश १।३।१२३-१२४)

अतः ऐसे प्रसंगों में वरद पितामह ब्रह्मा स्वयम्भू नहीं, तत्कालीन पूर्वज प्रजापति को समझना चाहिए और कुछ प्रसंगों में तो ब्रह्मा का अर्थ है विद्वद्वर्ग (ब्राह्मणादि), यथा रामायण में आदिकवि वाल्मीकि और महाभारत में पाराशर्य व्यास को उनकी रचनाओं से सन्तुष्ट ब्रह्मा आशीर्वाद देते हैं, यथा—

आजगाम ततो ब्रह्मा लोककर्ता स्वयं प्रभुः।
वाल्मीकये च ऋषये सदिदेशासनं ततः।
(रामा० १।२।२३, २६)

तस्य तच्चिन्तितं ज्ञात्वा ऋषेर्द्वैपायनस्य च।
तत्राजगाम भगवान् ब्रह्मा लोकगुरुः स्वयम्॥
(महा० १।१।५६, ५७)

---

१. रामायण (७।१०।१३, २६, २७)

२. हरिवंश (३।४१।१०)

उपर्युक्त प्रसंगों में ब्रह्मा किसी व्यक्तिविशेष का नाम नहीं और आदि ब्रह्मा स्वयम्भू का तो कतई नहीं। विद्वानों या ब्राह्मणों द्वारा उनकी कृति को मान्यता देना ही यहां 'ब्रह्मा' से अभिप्रेत है।

दश विश्वस्रज, नव ब्रह्मा या सप्तर्षियों की आयु

उपर्युक्त, जो विवेचन स्वयम्भू ब्रह्मा के सम्बन्ध है, लगभग वही—मरीचि, भृगु, पुलस्त्य, अंगिरा, पुलह, क्रतु, अत्रि, दक्ष और मनु के सम्बन्ध में समझना चाहिए, जो विश्वस्रज, ब्रह्मा या सप्तर्षि आदि विभिन्न नामों से अभिहित किये जाते हैं, ये भी वरद, ईश्वर, पितामह और ब्रह्मा कहे जाते थे, ये ही वेदमंत्रों के आदिस्रष्टा या द्रष्टा थे। इन सब महर्षियों या प्रजापतियों में प्रत्येक की आयु एक-एक सहस्र वर्ष से अधिक अवश्य थी। बाइबल में आदिम प्रजापतियों की आयु ६०० से १००० वर्ष तक कथित है। क्योंकि इन्होंने सहस्रोंवर्षों तक तप या यज्ञ किये—

प्रजापतिः सहस्रसंवत्सरमास्त। (जै० ब्रा० १।३)
विश्वस्रजः प्रथमाः सत्रमासत सहस्रसमम्—।
(आ० श्रौ० २३।१४।१७)

उपर्युक्त दश प्रजापतियों में देवासुरयुग पर्यन्त कोई भी जीवित नहीं था, प्रजापतियुग ३५०० वर्ष का था, इसी प्रजापतियुग में अधिकांश आदिम प्रजापति दिवंगत हो चुके थे, यथा मरीचि के किसी भी देवासुरसम्बन्धी घटना में दर्शन नहीं होते। देवासुरजनक कश्यप यदि साक्षात् मारीचि के पुत्र थे, तब पिता पुत्र दोनों की आयु छः-सात सहस्र वर्ष माननी पड़ेगी और यदि देवासुरयुग से पूर्व भी कश्यप एक गोत्र का नाम था, तो कश्यप साक्षात् मारीचि के पुत्र न होकर वंशज ही हों, अतः मारीच कहलाते थे, तो इन दोनों की आयु कुछ न्यून हो सकती है, फिर भी इनकी आयु सहस्रोंवर्ष अवश्य थी।

यह भी सम्भव है कि उपर्युक्त दश विश्वस्रज या प्रजापति विभिन्न युगों में हुए हों, यथा षष्ठ मनु प्रजापति चक्षु के पौत्रों का नाम अंगिरा और अंग था, जो वेन के पिता और पितृव्य एवं पृथु के पितामह थे[1], देवयुग में इसी अंगिरा के वंशज बृहस्पति आदि आंगिरस ऋषि हुए। आदिम अत्रि के दत्तकपुत्र थे स्वायम्भुव मनु के पुत्र उत्तानपाद। अतः आदिम सप्तर्षियों या प्रजापतियों का कालनिर्णय एक दुष्कर कर्म है।

---

१. सोऽभिषिक्तो महाराजो देवैरंगिरससुतैः।
आदिराजो महाराजः पृथुर्वैन्यः प्रतापवान्॥
(वायु० ६२।१३६)

ध्रुव

यह भी एक दीर्घजीवी और युगप्रवर्तक महापुरुष थे, हरिवंशपुराणानुसार ध्रुव ने तीन सहस्रवर्षपर्यन्त तप किया—

ध्रुवो वर्षसहस्राणि त्रीणि दिव्यानि भारत।
तपस्तेपे महाराज प्रार्थयन् सुमहद् यशः॥ (१।२।१०)

ध्रुव ने निश्चय ही दीर्घकाल तक राज्य किया होगा, इसकी अतिमात्रऋद्धि महिमा और यश के गीत असुरगुरु शुक्राचार्य ने गाये थे[1]।

परन्तु ध्रुव का भक्तिचरित्त प्रामाणिक पुराणपाठों से आकाशकुसुम और काल्पनिक वस्तु ही सिद्ध होता है।

ऋषभदेव

जैनों के आदितीर्थंकर प्रियव्रत के प्रपौत्र और नाभि के पुत्र थे, ये निश्चय ही अत्यन्त दीर्घजीजी पुरुष थे। जैनग्रन्थों में मरीचि ऋषि को तपोभ्रष्ट मुनि के रूप में चित्रित किया है, जिन्होंने ऋषभ के विरुद्ध विद्रोह किया। यह साम्प्रदायिक वर्णन है, परन्तु इससे यह सिद्ध होता है कि ऋषभ और मरीचि में धार्मिक मतभेद तो थे ही और वे समकालिक थे।

ऋषभ ने न केवल दीर्घकाल तक राज्य किया, बल्कि दीर्घकाल तक तपस्या भी की, भरत और बाहुबली इनके पुत्र थे।

कपिल (सांख्यप्रणेता)

अनेक कपिलों में—आदिविद्वान् महर्षि कपिल विरजा (प्रजापति) के प्रपौत्र एवं कर्दम के पुत्र थे, इनकी माता का नाम देवहूति था। ये अत्यन्त दीर्घजीवी पुरुष थे, सगरकाल तक ही नहीं भारतयुद्ध से कुछ शती पूर्व आसुरि महायाज्ञिक को इन्होंने अपना प्रधान शिष्य बनाया। अतः इस दृष्टि से इनकी न्यूनतम आयु चौदह सहस्र वर्ष निश्चित होती है, यदि इन्होंने सिद्धरूप में या निर्माणकाय बनाकर आसुरि को उपदेश दिया तो और बात है, जैसाकि पं० गोपीनाथ कविराज उन्हें केवल सिद्धपुरुष के रूप में मानते हैं[2]। पं० उदयवीर शास्त्री ने पं० गोपीनाथ

---

१. तस्यातिमात्रामृद्धिं च महिमानं निरीक्ष्य च।
देवासुराणामाचार्यः श्लोकमप्युशना जगौ॥
(हरि० १।२।१२)

२. Before he plunged into निर्वाण, कपिल furnished himself with a सिद्धदेह and appeared before आसुरि to impert too him the secret of सांख्यविद्या (सांख्यदर्शन का इतिहास : पृ० २८ पर उदधृत, उदयवीर शास्त्री)

कविराज के मत की बहुत ऊहापोह की है कि कपिल ने बिना शरीर के आसुरि को किस प्रकार उपदेश दिया होगा। यदि जन्मसिद्ध 'और सर्वश्रेष्ठ सिद्ध[1] कपिल 'निर्माणचित्त' नहीं बना सकते तो उदयवीर शास्त्री को समझना चाहिए कि योगसिद्धियां सब कल्पना और ढकोसला हैं जिनका स्वयं शास्त्रीजी ने विस्तार से वर्णन किया है, अन्यथा कपिल के 'निर्माणचित्त' को एक ऐतिहासिक तथ्य स्वीकार करना पड़ेगा। सरस्वती के विनाश के आधार पर[2] पं० उदयवीर शास्त्री कपिल का समय विक्रम से लगभग १८ या २० सहस्र वर्ष पूर्व मानते हैं, जैसाकि श्री अविनाशचन्द्रदास ने अपनी पुस्तक 'ऋग्वैदिक इण्डिया' में भौगोलिक रूप से प्रमाणित किया है, अतः स्वायम्भुवमनु, कर्दम और कपिल का समय अबसे न्यूनतम तीस सहस्रवर्ष पूर्व था, जबकि सप्तसिन्धुप्रदेश में सरस्वती नदी बहती थी।

यदि कपिल ने अपने भौतिक शरीर से ही आसुरि को सांख्य का उपदेश दिया जैसाकि उदयवीर शास्त्रो मानते हैं तो उनकी आयु चौबीस सहस्र से अधिक की माननी पड़ेगी, यदि निर्माणचित्त[3] या सिद्धरूप में उपदेश दिया, तब भी सगरकाल तक कपिल जीवित रहे। फिर भी बीस हजार वर्ष तो उनकी आयु अवश्य थी। इतनी आयु, जन्मसिद्धयोगी, जो सर्वोत्तम योगी था, के लिए असम्भव नहीं है।

सोम

दक्ष का नाना अथवा दक्ष का मातामह सोम उसके जामाता सोम से पृथक् हो सकता है। और श्वसुर सोम[4] निश्चय दीर्घजोवी व्यक्ति थे। दक्ष की २७ नक्षत्रनाम्नी रोहिणी आदि कन्यायें सोम की पत्नी थी, पुनः सोम की पुत्री मारिषा से दश प्रचेताओं ने दक्ष को उत्पन्न किया। अतः दक्ष सोम के श्वसुर और नाना (मातामह) दोनों ही थे। सोम के पिता, यदि आदिम अत्रि थे, तो सोम की आयु चारसहस्र वर्ष से कम नहीं थी, क्योंकि आदिम अत्रि उत्तानपाद के पालक थे[5] और सोम के पुत्र बुध वैवस्वतमनु के समकालिक थे। उत्तानपाद से बुध या मनु

---

१. सिद्धानां कपिलो मुनिः (गी० १०।२६)

२. श० ब्रा० (१।४।१।१०-१७)

३. "आदिविद्वान् निर्माणचित्तमधिष्ठाय कारुण्याद् भगवान् परमर्षिरासुरये तन्त्रं प्रोवाच।" (व्यासभाष्य।

४. द्रष्टव्य—A History of Persia Vol. 1. p. 133.

५. कथं प्राचेतसत्वं च पुनर्लेभे महातपाः।
दौहित्रश्च सोमस्य कथं श्वसुरतां गतः। (हरिवंश १।२।५३)

पर्यन्त, पुराणों में ४८ पीढ़ियां कथित हैं, परन्तु पुराणों में ये प्रधान पुरुष[1] ही कथित हैं। सम्भावना है कि सोमपिता अत्रि आदिम अत्रि नहीं थे, उनके वंशज थे, क्योंकि प्रत्येक ऋषिनाम प्रायः गोत्रनाम से ही प्रथित होता था, अतः सोमपिता अत्रि आदिम नहीं थे। तो भी सोम की आयु सहस्राधिक वर्ष अवश्य होगी।

कश्यप

यदि मारीच (मरीचिपुत्र या वंशज) कश्यप को साक्षात् मरीचि का पुत्र माना जाय तो प्रजापतियुग से देवयुग तक ही नहीं मानुषयुगों-कृतयुगान्त पर्यन्त जीवित रहनेवाले महर्षि प्रजापति कश्यप की आयु आठ सहस्रवर्ष से कम नहीं होगी। यदि मरीचि के वंशज भी मारीच कहे जाते थे, तब भी कश्यप की आयु पांच सहस्रवर्ष अवश्य थी। बाइबल का केनान और महाललील (मारीच), ईरानियों का आदिपुरुष केओमर्ज (कश्यप मारीच)[2] यही कश्यप हो सकता है— द्रष्टव्य बाइबल—"And all the days of coinan were nine hundred and ten years and he died (Holy Bible p. 9)...And all the days of Mahalel were eight hundred, ninety and five years (Holy Bible, p. 9).

सम्भावना है कि मारीच और कश्यप गोत्रनाम थे, क्योंकि स्वायम्भुवमन्वन्तर के कुछ शती पश्चात् होनेवाले स्वारोचिष मन्वन्तर के सप्तर्षियों में एक काश्यप ऋषि भी थे, जो देवासुरपिता कश्यप से सहस्रों वर्ष पूर्व हुए। काश्यप को ही कश्यप भी कहा जाता था। कश्यप का काश्यप ऋषि से उत्तरकालीन होना सिद्ध करता है कि एक गोत्रनाम था और कश्यप ही एकमात्र मारीच या एकमात्र कश्यप नहीं थे अतः मारीच (मरीचिपुत्र) कश्यप अनेक थे, अर्थात् मारीच या कश्यप एक गोत्रनाम था। प्रजापतियुग के उत्तरकाल में कश्यप एक सर्वाधिक महत्तम प्रजापति थे, जिन्हें प्रायः ब्रह्मा कहा जाता था, इनसे देव, असुर, नाग गन्धर्व और सुपर्ण संज्ञक पंचजन जातियां उत्पन्न हुईं, जिन्होंने समस्त भूमण्डल पर दीर्घकालपर्यन्त शासन दिया, इन्हीं के एक पुत्र विवस्वान् आदित्य के पुत्र वैवस्वत मनु के वंशजों ने सम्पूर्ण भारतवर्ष पर चिरकाल तक शासन किया, वस्तुतः भारतवर्ष का इतिहास वैवस्वतमानववंश का इतिहास है।

---

१. उत्तानपादं जग्राह पुत्रमत्रिः प्रजापतिः। (हरि० १।२।७)

२. नाम्नां बहुत्वाच्च साम्याच्च युगे युगे। (ब्रह्माण्ड०)

एतेषां यदपत्यं वै तदशक्यं प्रमाणतः। बहुत्वात्परिसंख्यातुं पुत्रपौत्रमनन्तकम्। (ब्रह्मा० १।२।१३।१५०)

नारद

देवर्षि नारद पूर्वजन्म में परमेष्ठी प्रजापति के पुत्र थे, पुनः वे दक्ष के पुत्र हुए अथवा कश्यप के पुत्र हुए, अतः नारद दक्षपुत्रों के भ्राता थे[1]। नारद-जन्म एक जटिल समस्या है, उसी प्रकार उनका दीर्घायु भी एक परम जटिल प्रहेलिका है। दक्षकश्यप से श्रीकृष्णपर्यन्त[2] (प्रजापतियुग से द्वापरान्त) जीवित रहनेवाले देवर्षि नारद की आयु दशसहस्रवर्ष से अधिक निर्णीत होती है। इन्हीं देवर्षि नारद ने राजा संजय को षोडशराजोपाख्यान[3] सुनाया था। इससे पूर्व देवर्षि ने मानव हरिश्चन्द्र को उपदेश दिया था[4]। नारद का भागिनेय पर्वत (हिमालय भी दीर्घजीवी ऋषि था। इसी पर्वत की पुत्री पार्वती महादेव की द्वितीय पत्नी थी। नारद के उपदेश से पर्वत (राजा) परिव्राजक ऋषि बन गया था[5]।

महादेव शिव

दक्ष की दशपुत्रियों का विवाह धर्मप्रजापति से हुआ, उनमें से वसु नामी पत्नी से साध्यगण, धर और एकादश रुद्र उत्पन्न हुए। इनमें महादेव शिवरुद्र प्रधान थे, कालिदास के समय में शिव अलक्ष्यजन्मा[6] माने जाते थे, इनके माता-पिता का नाम विस्मृत सा हो गया था। कालिदाससदृश महाकवि दक्षपुत्र पर्वत-राज को नगाधिराज हिमालय (पत्थर का पहाड़) समझते थे, जो कि नारद का भागिनेय और दक्ष पार्वती[7] (द्वितीय दक्ष) का पिता था। यह पुराणों में कश्यपपुत्र भी कहे गये हैं।

इनकी दीर्घायु इतिहासपुराणों से प्रमाणित है।

स्कन्द सनत्कुमार

इन्हीं को कार्तिकेय कहा जाता है, ये रुद्र नीललोहित (शिव) के ज्येष्ठ पुत्र थे—

---

१. यं कश्यपः सुतवरं परमेष्ठी व्यजीजनत्।
दक्षस्य दुहितरि दक्षशापभयान्मुनिः॥ (हरि० १।३।६)

२. विनाशशंसी कंसस्य नारदो मथुरां ययौ। (हरि० २।१।१)

३. शान्तिपर्व (३०-३१)

४. हरिश्चन्द्रो ह वैधसः तस्य ह पर्वतनारदौ गृह ऊषतुः (ऐ० ब्रा० ८।१)

५. नारदो मातुलश्चैव भगिनेयश्च पर्वतः (महा० १२।३०।६)

६. कुमारसंभव

७. श० ब्रा० (२।४।४।१-६)

अपत्यं कृत्तिकानां तु कार्तिकेय इति स्मृतः ।
स्कन्दः सनत्कुमारश्च सृष्टः पादेन तेजसः ।।
(हरि० १।१३।४३)

छान्दोग्योपनिषद् में भी सनत्कुमार को ही स्कन्द कहा जाता है—'तं स्कन्द इत्याचक्षते (छा० उ०), इनके ही चार भ्राताओं को सनत्, सनातन सनन्दन, सनत्कुमार या शाख, विशाख, नैगम और सनत्कुमार कहते हैं। इन्होंने पंचम तारकामय देवासुर संग्राम[1] में देवसेनाओं का सेनापत्य किया था। नारद को सनत्कुमार ने ब्रह्मविद्या का उपदेश दिया। ये सब देवयुग से पूर्व की घटनायें हैं, जबकि इन्द्रादि का जन्म नहीं हुआ था। इतिहासपुराणों में सनत्कुमारादि का दीर्घायुष्य प्रमाणित है। गीता में इनको सप्तर्षियों से पूर्व का ऋषि माना है[2]।

वरुण आदित्य

मुण्डकोपनिषद्[3] में वरुण को 'ब्रह्मा' कहा गया है, जिन्होंने अपने ज्येष्ठ पुत्र अथर्वा (भृगु) को ब्रह्मविद्या प्रदान की। आचार्य चतुरसेन शास्त्री ने बाइबल के प्रमाण से लिखा है कि प्रजापति वरुण ने ही पृथ्वी को दो भागों में विभक्त किया[4]। प्रकारान्तर से म० म० पं० गिरधर शर्मा चतुर्वेदी ने भी यही लिखा है कि सिन्धु नदी के उत्तर का सम्राट् वरुण और दक्षिणी भाग (भारतवर्ष) का सम्राट् इन्द्र था[5]। इतिहासपुराणों और पारसी धर्मग्रन्थ जेन्दावेस्ता से भी उपर्युक्त मत की पुष्टि होती है कि पाताल या समुद्र का अधिपति वरुण था—'अपां तु वरुणं राज्ये' (हरि० १।४।३), अदितिपुत्र आदित्यों या देवों में प्रथम या ज्येष्ठ था, इसीलिए पारसी इसको असुरमहत् (अहुरमज्दा) कहते थे, वह पश्चिम देशों—ईरान (पातालादि) का प्रथम शासक था, यूरोप, अफ्रीका और अरब देशों तक इसका साम्राज्य फैला हुआ था। वरुण के पौत्र मयासुर या विश्वकर्मा ने

---

१. संग्रामः पंचमश्चैव सुघोरस्तारकामयः। (वायुपुराण)
२. महर्षयः सप्तपूर्वे चत्वारो मनवस्तथा। (गीता १०।६)
३. संग्रामः पंचमश्चैव सुघोरस्तारकामयः। (वायुपुराण)
४. महर्षयः सप्तपूर्वे चत्वारो मनवस्तथा। (गीता १०।६)
५. मु० (१।१।१)
६. The next act of the Diety was to make a division (ordial), This operation divided the waters into two parts as well as into two States (Bible Genesis I).
७. भारतीय संस्कृति और वैदिक विज्ञान।

अमेरिका में मयराज्य की स्थापना की। वर्तमान अरब ही वरुण की प्रजा—प्राचीन गन्धर्व थे। आज भी अरब अपना पूर्वज यादसांपति या दाज या ताज को मानते हैं। अथर्ववेद या छन्दोवेद (जेन्दावेस्ता) का प्रवर्तक भी वरुण था। वरुण और उनके पुत्र भृगु दैत्यराज हिरण्यकशिपु और हिरण्याक्ष के पुरोहित थे। वरुण राज्यशासन के साथ-साथ महान् पौरोहित्यकर्म भी करते थे, इनकी राजधानी सूषानगरी के अवशेष ईरान में मिले हैं। वरुण ने यम से पूर्व पातालदेशों में दीर्घकाल तक राज्य किया था।

विष्णु

आदित्यों में विष्णु थे कनिष्ठ, परन्तु थे परमतेजस्वी। इनकी आयु परम-दीर्घ प्रतीत होती है। विष्णु के साथ ही इनके वैमातृज भ्राता कश्यपात्मज वैनतेय गरुड़ भी दीर्घजीवी थे। पुराणों में गरुड का अस्तित्व पाण्डवों और श्रीकृष्णपर्यन्त प्रदर्शित किया गया है, परन्तु यह प्रमाणित तथ्य नहीं है।

मय विश्वकर्मा

शुक्र का पौत्र और त्वष्टा का पुत्र मयासुर दीर्घजीवी था। परन्तु देवासुर युगीनमय और पाण्डवकालीनमय एक नहीं हो सकते, जैसाकि पं० भगवद्दत्त उन्हें एक मानते थे[1]। मय एक जातिगत या वंशगत नाम था, एक मय दाशरथि के समकालीन रावण का श्वसुर था, जो दशरथकालीन देवासुर संग्राम में मारा गया[2]। रामायणकालीन मय की पत्नी हेमा और पुत्री मंदोदरी थी, यह प्रसिद्ध ही है। अतः मय अनेक थे, परन्तु आदिम मय दीर्घजीवी अवश्य था, जिसने मिस्र, अमेरिका आदि में भवन (पिरामिड आदि) बनाये। यह विवस्वान् का शिष्य और श्वसुर था।

अगस्त्य

ऋग्वेद (१।१७०।१) में अगस्त्य और इन्द्र का संवाद है—अगस्त्य इन्द्राय हविर्निरूप्य मरुद्भयः संप्रदित्सांचकार स इन्द्र एत्य परिदेवयांचक्रे[3]।" अगस्त्य ने नहुष को शाप दिया था। अगस्त्य मित्रावरुण का पुत्र था। इसको दाशरथि-रामपर्यन्त जीवित बताया गया है। परन्तु यह भी गोत्र नाम था, तथापि देवयुगीन अगस्त्य दीर्घजीवी पुरुष होगा।

---

१. द्र० भा० बृ० इ० भाग १ (पृ० १४६)

२. रामायण (३।५१)

३. निरुक्त (१।२।५)

अश्विनीकुमार

ये विवस्वान् के पुत्र देवभिषक् और अन्तरिक्षचारी देव थे, इन्होंने च्यवन-भार्गव को चिरयौवन दिया, ये सुदीर्घकालपर्यन्त जीवित रहे।

दीर्घजीवी सप्तर्षि

वसिष्ठ, विश्वामित्र, गौतम, अत्रि, जमदग्नि, कश्यप और भरद्वाज वैवस्वतमन्वन्तर के सप्तर्षि माने गये हैं, इनमें कश्यप साक्षात् न होकर उनका पुत्र वत्सर[1] सप्तर्षियों के अन्तर्गत था न कि स्वयं देवासुरपिता प्रजापति कश्यप, अतः कश्यप के स्थान पर 'काश्यप' पाठ होना चाहिए।

दत्तात्रेय

हैहय अर्जुन को वर देनेवाले अत्रिवंशीय दत्तात्रेय विष्णु के चतुर्थ अवतार माने जाते थे, ये दशम त्रेतायुग[2] (परिवर्त) में हुए, हैहय अर्जुन का विनाश उन्नीसवें त्रेता में हुआ, अतः दत्तात्रेय भी दीर्घतमा मामतेय के तुल्य दशयुगपर्यन्त (मानुषयुग नहीं, दिव्य दशयुग) अर्थात् ३००० वर्ष जीवित रहे।

हनुमदादि

पुराणों में हनुमान, विभीषण, कृप, अश्वत्थामा आदि को चिरंजीवी कहा गया है, निश्चय ही हनुमदादि पुरुष दीर्घकाल तक जीवित रहे। महाभारत वनपर्व में हिमालयपर्वत पर भीमसेन की पवनात्मज हनुमान से भेंट हुई, अतः हनुमान द्वापरान्तपर्यन्त अवश्य विद्यमान थे अर्थात् २५०० वर्ष जीवित रहे। अन्य विभीषणादि की आयु का हमें ज्ञान नहीं है।

परशुराम

जामदग्न्य परशुराम का जन्म हरिश्चन्द्रकालीन विश्वामित्र से एक-दो पीढ़ी पश्चात् हुआ, संभवतः अष्टादश परिवर्तयुग में अर्थात् ७००० वि० पू० और उन्नीसवें युग में इन्होंने हैहय अर्जुन का वध किया। दाशरथिराम (द्वापरादि) एवं पाण्डवों के समय तक परशुराम का अस्तित्व ज्ञात होता है, अतः परशुराम न्यूनतम चार हजार वर्ष तक जीवित रहे, जो परमाश्चर्यजनक घटना प्रतीत होती है। परशुराम एक ही थे, अनेक की कल्पना व्यर्थ है।

---

१. वत्सारश्चासितश्चैव तावुभौ ब्रह्मवादिनौ।
वत्सारान्निध्रुवो जज्ञे रैभ्यश्च स महायशाः॥ (वायुपुराण)

२. त्रेतायुगे तु दशमे दत्तात्रेयो बभूव ह। (वही)

बृहस्पति

देवगुरु[1] आङ्‌गिरस का जन्म प्रजापतियुग के अन्त और देवयुग के आरम्भ में हो चुका था। अंगिरा के वंशजों और बृहस्पति के पूर्वजों ने आदिराजा पृथु वैन्य का अभिषेक किया था[2]। बृहस्पति की आयु उशना से किंचित् ही न्यून थी। ये भी सप्तम-अष्टम परिवर्तयुग पर्यन्त जीवित रहे, इनकी आयु दो सहस्र वर्षों से अधिक होगी, सम्भव है कि बृहस्पति की आयु वक्ष्यमाण सप्तम व्यास इन्द्र की आयु के तुल्य हो, जो लगभग दशयुग (३६०० वर्ष) पर्यन्त जीवित रहा।

विवस्वान्

मुख्यत: विवस्वान् की प्रजा ही आदित्य कहलाती थी। इनके वंशज भारत के प्रमुख शासक बने—(१) देवा आदित्या:। विवस्वानादित्यस्तस्येमा: प्रजा:[3]। विवस्वान् पंचमत्रेतायुग (परिवर्त) के व्यास थे, यद्यपि इनका जन्म इससे पूर्व तृतीय युग में हो चुका था। अत: इनकी आयु देवराज इन्द्र से कुछ ही न्यून होगी, लगभग २०० वर्ष कम। इनके प्रमुख पुत्र—यम, मनु और अश्विनीकुमार थे, जो सभी परमदीर्घजीवी और देवपुरुष एवं प्रजापति हुए।

अवेस्ता में जहां वैंवस्वतयम का राज्यकाल १२०० वर्ष लिखा है, उधर बाइबल में वैवस्वतमनु (नूह Nooh) की आयु आदि का विवरण द्रष्टव्य है—

१. मनु की आयु जब ५०० वर्ष की थी, तब उसके तीन पुत्र उत्पन्न हुए—"And Nooh was five hundrd years old and Nooh begot Sham, Ham and Jopheth". (Bible p. 10).

बाइबल का वर्णन पुराण से सर्वथा भिन्न है, जहां मनु के इलासहित दशपुत्र (इक्ष्वाकु इत्यादि) कथित हैं। प्रतीत होता है कि भ्रान्ति से अत्रिपुत्र सोम का बाइबल में मनुपुत्र साम (Sham) के नाम से उल्लेख है। हाम—हेम हो सकता है अनुवंशज और तथाकथित तृतीय पुत्र—जोफेट (Jopheth) 'ययाति' हो सकता है।

---

१. बृहस्पतिर्देवानां पुरोहित आसीद्, उशना काव्यो सुराणाम्।
(जै० ब्रा० १।१२५)

२. सोऽभिषिक्तो महाराजो देवैरंगिरससुतै:।
(वायु० ६२।१३६)

३. श० ब्रा० (३।१।३।५)

२. पुत्र उत्पत्ति के सौ वर्ष पश्चात् 'जलप्रलय' आई तब मनु की आयु ६०० वर्ष थी—"In the six hundredth year of Nooh's life, the second month, the seventh day of the month, the same day. They were all mountains of great deep broken." (Bible p. 11).

३. वैवस्वतमनु (नूह) की आयु और प्रलय का समय

जलप्रलय की अवधि के सम्बन्ध में बाइबल का वृत्त सत्य प्रतीत होता है, जो वर्तमान पुराणों में अनुपलब्ध है—And the waters prevailed upon the earth one hundred and fifty days. (p 11).

४. आयु

मनु की पूर्ण आयु ९५० वर्ष थी—"And all the days of Nooh were nine hundred and fifty years. And he died." (Holy Bible, p. 13).

इस प्रकार प्रतीत होता है वैवस्वतमनु का जन्म सम्भवत: तृतीययुग (१३००० वि० पू०) में हुआ और वह षष्ठयुग पर्यन्त लगभग एक सहस्र वर्ष (१२००० वि० पू०) जीवित रहे।

वैवस्वतयम

यम का पितृव्य (चाचा) इन्द्र आयु में उनसे छोटा था, यम षष्ठ युग के व्यास थे और इन्द्र सप्तम युग के व्यास हुए, अत: यम इन्द्र से न्यूनतम ३६० वर्ष बड़ा था। वैवस्वतयम की दीर्घ आयु के सम्बन्ध में पारसी धर्मग्रन्थ अवेस्ता का निम्न उद्धरण प्रकाश डालता है—"जरथुस्त्र ने अहुरमज्द से पूछा, 'मेरे पहिले आपने किसको धर्म का उपदेश दिया—। तब मैंने उसको पृथ्वी का राजा बनाया। इस प्रकार यम को राज्य करते हुए ३०० वर्ष व्यतीत होगये। इतने दिनों में मनुष्यों और पशुओं की संख्या इतनी बढ़ गई कि वहां जगह की कमी पड़ी। तब यम ने पृथ्वी का आकार पहिले से एक तिहाई बढ़ा दिया। इस प्रकार ३००-३०० वर्ष उसने चार बार राज्य किया। इस बारह सौ वर्षों में पृथ्वी का आकार पहिले से दूना हो गया।" (फर्गद २) इस काल के पश्चात् पृथ्वी पर हिमप्रलय आई, अत: सिद्ध होता है कि यम प्रलय से पूर्व ही १२०० वर्ष राज्य कर चुका था। प्रलय के मध्य में 'हर चालीसवें साल एक मिथुन सन्तान उत्पन्न होती थी' अत: प्रलय भी दीर्घकालीन थी, प्रलय के पश्चात् भी यम बहुत दिनों तक जीवित रहा। अत: उसकी आयु २००० वर्ष से अधिक ही थी।

इन्द्र

यह वेदों का उद्धर्ता सप्तम व्यास था, अतः इसका जन्म सप्तमयुग में (१२००० वि० पू० हुआ। इसने १०१ वर्ष का ब्रह्मचर्य पालन किया[1] और आयुर्वेद के प्रवर्तक भरद्वाज को ८०० वर्ष की आयु[2] प्रदान की। इससे समझा जा सकता है कि स्वयं इन्द्र की कितनी दीर्घायु हो सकती है। प्रतर्दन, मान्धाता और हरिश्चन्द्रपर्यन्त इन्द्र का अस्तित्व ज्ञात होता है। प्रतर्दन ययाति का दौहित्र और माधवी-दिवोदास का पुत्र था, इस तथ्य को जानते हुए भी पं० भगवद्दत्त[3] और सूरमचन्द[4] प्रतर्दन को दाशरथिराम के समकालीन मानते हैं, प्रतर्दन, राम से न्यूनतम ३००० वर्ष पूर्व हुआ। पं० भगवद्दत्त की यह कल्पना (धारणा) रामायण के भ्रामकपाठ के आधार पर है[5]। इन्द्रसमकालीन (देवयुगीन) प्रतर्दन रामसमकालिक कैसे हो सकता है, यह पण्डितद्वयी ने बिल्कुल नहीं सोचा। मान्धाता, पन्द्रहवें युग में हुआ, राजा हरिश्चन्द्र[6] और दो युग पश्चात् अर्थात् सत्रहवें युग में हुए, अतः सप्तम से अष्टादशयुग तक जीवित रहनेवाले इन्द्र की आयु दशयुग (३६०० वर्ष) से अधिक थी।

वसिष्ठ-अष्टमव्यास

पुराणों में वैवस्वतमनु से बृहद्बल (महाभारतयुग) पर्यन्त जिस मैत्रावरुणि वसिष्ठ का वर्णन किया है, वह एक ही प्रतीत होता है परन्तु यह सत्य नहीं, वसिष्ठ या वासिष्ठ अनेक हुए हैं, यह गोत्रनाम था, फिर भी आद्य मैत्रावरुणि वशिष्ठ दीर्घजीवी थे।

अपान्तरतमा

सारस्वत, वाच्यायन, प्राचीनगर्भ अपान्तरतमा के नवम व्यास ने अपने पितृत्व आदि अंगिरस ऋषियों को वार्तघ्नदेवासुरसंग्राम के पश्चात् वेद पढ़ाया

---

१. छा० उ० (८।७)

२. इन्द्र उपव्रज्योवाच—भरद्वाज ! यत्ते चतुर्थमायुर्दद्याम् किमनेन कुर्या इति।
(तै० ब्रा० ३।१०।११।४५)

३. भा० ब० इ० भाग १

४. आयु० का इति०

५. रामायण, उत्तरकाण्ड

६. हरिश्चन्द्र के पुत्र रोहित को स्थविर इन्द्र ने अरण्य में आकर उपदेश दिया—
सोऽरण्याद् ग्राममेयाय तमिन्द्रः रूपेण पर्येत्योवाच।
(ऐ० ब्रा० ८।१८)

था, वही कलियुग में पाराशर्य व्यास हुए, ऐसा महाभारत का मत है, इनके एक शिष्य पराशर थे, इससे सिद्ध होता है कि ये ऐक्ष्वाक राजा कल्माषपाद पर्यन्त जीवित रहे।

मार्कण्डेय

शण्ड और मर्क उशना के पुत्र भार्गव ऋषि थे, मर्क के नाम से योरोप का डेनमार्क (दानवमर्क) देश प्रसिद्ध हुआ। सम्भवतः मर्क का नाम ही मृकण्डु हो। मृकण्डु के पुत्र मार्कण्डेय अत्यन्त दीर्घजीवी ऋषि थे, इन्होंने जलप्रलय का दृश्य देखा था और इससे पूर्व देवासुरों के दर्शन किये तथा द्वापरान्त में इन्होंने युधिष्ठिर पाण्डव को मार्कण्डेयपुराण सुनाया। दशमयुग में मार्कण्डेय दत्तात्रेय के सहयोगी थे—

त्रेतायुगे तु दशमे दत्तात्रेयो बभूव ह।
नष्टे धर्मे चतुर्थश्च मार्कण्डेयपुरस्सरः॥ (वायु०)
बहुसंवत्सरजीवी च मार्कण्डेयो महातपाः।
दीर्घायुश्च कौन्तेय स्वच्छन्दमरणं तथा॥ (वनपर्व १८१)

लोमश

यह भी उपर्युक्त मार्कण्डेय के समान बहुसंवत्सरजीवी थे जो देवासुर युग से पाण्डवकाल तक जीवित रहे[1]।

दीर्घतमा मामतेय=गौतम

इनकी आयु एक सहस्र वर्ष थी, जैसा कि ऋग्वेद (१।१५८।६) और शांखायन आरण्यक (२।१७) से प्रमाणित होता है कि वे दश-मानुषयुग (=१००० वर्ष) जीवित रहे[2]।

भरद्वाज और दुर्वासा सम्बन्धी भ्रान्तिः

पं० भगवद्दत्त इन दोनों को देवासुर युग से महाभारतकाल तक जीवित मानते हैं जो एक महती भ्रान्ति है। इन्द्र ने जब भरद्वाज को बड़ी कठिनाई से और उपकार करके ४०० वर्ष की आयु दी तब वह भरद्वाज प्रतर्दन से युधिष्ठिर-पर्यन्त ८०० वर्ष कैसे जीवित रह सकता है। निश्चय भरद्वाज एक गोत्रनाम था, द्रोण आदिम भरद्वाज का नहीं, किसी भरद्वाजगोत्रीय ब्राह्मण का पुत्र था। इसी

---

१. द्रष्टव्य वनपर्व (६२।५)
२. दीर्घतमा दश पुरुषायुषाणि जिजीव (शां० आ० २।१७)

प्रकार दत्तात्रेय के भ्राता दुर्वासा को कुन्ती के साथ व्यभिचार करनेवाला दुर्वासा नहीं माना जा सकता, इन दोनों में भी ८००० वर्ष का अन्तर था। ८००० वर्ष की आयु में भरद्वाज या दुर्वासा का स्त्री या सन्तान की इच्छा करना बुद्धिगम्य नहीं है, वस्तुतः यह पं० भगवद्दत्त को बिना सोचे-समझे भ्रान्ति हुई है[1]। भरद्वाज और दुर्वासा अनेक थे।

मुचुकुन्दसम्बन्धी पौराणिक भ्रान्ति

प्रायः अनेक पुराणों में मान्धाता के पुत्र मुचुकुन्दसम्बन्धी भ्रान्ति मिलती है कि कालयवन को गिरिगुहा में भस्म करनेवाला, श्रीकृष्ण को दर्शन देनेवाला, वही देवासुरयुगीन मुचुकुन्द था। वस्तुतः यह भ्रान्ति नामसाम्य के कारण हुई है। हरिवंशपुराण में इस भ्रान्तिजनक प्रसंग[2] का उल्लेख है और इसी पुराण से इस भ्रान्ति का निराकरण भी होता है। तथाकथित मुचुकुन्द वासुदेव श्रीकृष्ण का पूर्वज यदुवंशी मुचुकुन्द था—यह यदु ऐक्ष्वाक राजा हर्यश्व का पुत्र था–'मधुमत्यां सुतो जज्ञे यदुर्नाम महायशाः[3]।

मधु यादव था, दैत्य नहीं—भ्रम से पुराणों में इसे दानवेन्द्र लिखा है, जो नामसाम्यकृत भ्रान्ति है। उसकी पुत्री मधुमती और ऐक्ष्वाक हर्यश्वपुत्र यदु के पांच पुत्र हुए—

मुचुकुन्दं महाबाहुं पद्मवर्णं तथैव च।
माधवं सारसं चैव हरितं चैव पार्थिवम् ॥[4]

माधव का पुत्र सत्वत और उसका पुत्र भीम था जो रामदाशरथि के समकालीन था[5]। माधववंश में ही लवण हुआ।

उपर्युक्त माधवभ्राता मुचुकुन्द ही श्रीकृष्ण को दर्शन देनेवाला मुचुकुन्द था, जिसकी आयु द्वापरकालतुल्य=२४०० वर्ष थी, वह मान्धातृपुत्र मुचुकुन्द नहीं। निःसंदेह मुचुकुन्द दीर्घजीवी था, परन्तु उतना नहीं, जितना पौराणिक भ्रान्ति से प्रतीत होता है।

महाभारतकालीन दीर्घजीवीपुरुष

महाभारतकाल में अनेक पुरुष दीर्घजीवी हुए जिनकी आयु सौ के दो सौ

---

१. द्र० भा० बृ० इ० भा० (पृ० १४८)
२. हरि० (२।५७)
३. हरि० (२।३७।४४)
४. हरि० (२।३८।२)
५. हरि० (२।३८।३९)

वर्ष या तीन सौ वर्षपर्यन्त अवश्य थी, अतः उनकी आयु का यहां संक्षेप में निर्देश करेंगे।

पंचशिख पाराशर्य

यह पाराशरगोत्रीय सुप्रसिद्ध सांख्याचार्य दार्शनिक थे, जिनका धर्मध्वज (अपरनाम जनदेव से वार्तालाप हुआ था। पाणिनिसूत्रोल्लिखित भिक्षुसूत्रों के रचयिता भी सम्भवतः ये ही थे। इनको महाभारत (१२।२२०।११० में चिरजीवी (दीर्घजीवी) और वर्षसहस्रयाजी कहा गया है—

आसुरेः प्रथमं शिष्यं यमाहुश्चिरजीविनम्।
पञ्चस्रोतसि यः सत्रमास्ते वर्षसहस्रिकम्॥[1]

भिक्षु पंचशिख, सम्भवतः पाण्डवों के समय तक जीवित थे।

पाराशर्य व्यास

उपर्युक्त प्रसंग से सिद्ध होता है कि पाराशर्य व्यास शक्तिपुत्र पाराशर के साक्षात्पुत्र नहीं तद्गोत्रीय पुरुष थे, तभी तो उनके पूर्ववर्ती भिक्षु पंचशिख को पाराशर्य कहा गया है। यदि शक्तिपुत्र पराशर को ही व्यास का पिता माना जाए तो सौदास कल्माषपाद ऐक्ष्वाक से शन्तनुपर्यन्त लगभग ३००० वर्ष होते हैं, इतनी दीर्घ आयु में पराशर द्वारा मत्स्यगन्धा से संग करना और पुत्र उत्पन्न करना बुद्धिगम्य नहीं, अन्यथा भी सिद्ध है कि व्यास से पूर्व अनेक पाराशर ब्राह्मण हो चुके थे यथा पंचशिख पाराशर्य और व्यास के गुरु जातूकर्ण्य पाराशर्य इससे समझा जा सकता है व्यास के पिता आदिपराशर नहीं, उत्तरकालीन तद्गोत्रीय पाराशर या पाराशर्य कोई अन्य ऋषि थे।

पाराशर्य व्यास की आयु एक युग (=३६० वर्ष) के तुल्य अवश्य थी, क्योंकि भीष्म के तुल्यवया व्यासजी परीक्षित जनमेजय के पश्चात् सम्भवतः अधिसीमकृष्ण पर्यन्त जीवित रहे, अतः उनकी आयु ३०० वर्ष से अधिक ही थी। प्रतीप से परीक्षित् तक ३०० वर्ष का समय व्यतीत हुआ। व्यासजी पारीक्षित जनमेजय के कालोपरान्त भी जीवित रहे।

उग्रसेन और वसुदेव और वासुदेवकृष्ण

इतिहासपुराणों में श्रीकृष्ण की आयु १२५ या १३५ वर्ष कथित है, श्रीकृष्ण

---

१. मैथिलो जनको नाम धर्मध्वज इति श्रुतः (महाभा० १२।३२५।४) तथा द्र० (विष्णु० ६।६) एवं० महा० (१२।२२०)

की मृत्यु के समय उनके पिता वसुदेव और मातामह राजा उग्रसेन जीवित थे, अतः उन दोनों (वसुदेव और उग्रसेन) की आयु २०० वर्ष के लगभग थी।

पाण्डवों की आयु

पं० भगवद्दत्त ने लिखा है "महाभारत के एक कोश (हस्तलिखितप्रति) के अनुसार युधिष्ठिर की आयु १०८ वर्ष कही गयी है[1]।" सभी पाण्डवों में एक-एक वर्ष का अन्तर था अतः भीम, अर्जुन, नकुल और सहदेव क्रमशः १०७, १०६, १०५, १०४ वर्ष की आयु में दिवंगत हुए। श्रीकृष्ण युधिष्ठिर से १७ या १८ वर्ष बड़े थे, भारतयुद्ध के समय इनकी आयु इस प्रकार थी—

श्रीकृष्ण =९० वर्ष + ३६ वर्ष = १२६ वर्ष में देहान्त
युधिष्ठिर = ७२ वर्ष + ३६ वर्ष = १०८ वर्ष में देहान्त
भीम = ७१ वर्ष + ३६ वर्ष = १०७ वर्ष में देहान्त
अर्जुन = ७० वर्ष + ३६ वर्ष = १०६ वर्ष में देहान्त
नकुल = ६९ वर्ष + ३६ वर्ष = १०५ वर्ष में देहान्त
सहदेव = ६८ वर्ष + ३६ वर्ष = १०४ वर्ष में देहान्त

द्रोणाचार्य की आयु

महाभारत में स्पष्टतः उल्लिखित है कि उनकी आयु ८५ वर्ष थी[2]। पं० भगवद्दत्त 'अशीतिपंचक' का अर्थ ४०० वर्ष करते हैं जो अन्यथा उपपन्न नहीं होता। द्रोण द्रुपद के समवयस्क और सतीर्थ्य थे, उनका कनिष्ठ पुत्र धृष्टद्युम्न द्रौपदी से बहुत छोटा था, अतः द्रुपद की आयु युद्ध के समय १०० से ऊपर नहीं हो सकती, पुनः कृपाचार्य और द्रोणपत्नी कृपी का पालन शान्तनु ने ही किया था, जो दोनों ही भीष्म से कम आयु के थे, भीष्म की आयु डेढ़ सौ वर्ष से अधिक नहीं थी, तब द्रोण की आयु ४०० वर्ष कैसे हो सकती है, अतः 'वयसा अशीतिपंचकः' का अर्थ ८५ वर्ष ही उपयुक्त एवं उपपन्न होता है। द्रोणाचार्य अपने शिष्यों—पाण्डवादि से पन्द्र-सोलह वर्ष अधिक बड़े थे, जो एक गुरु के उपयुक्त आयु है, शिक्षा देते समय द्रोण की आयु पैंसीस-चालीस के मध्य में थी।

द्रोण के समान द्रुपद भी इतनी ही आयु के थे।

---

१. वैं० वा० इ० भाग १, पृ० २६२

२. आकर्णपलितः श्यामो वयसाशीतिपंचकः।
संख्ये पर्यचरद् द्रोणो वृद्धः षोडशवर्षवत् ॥ (महाभारत, द्रोणपर्व)

नागार्जुन

आन्ध्रसातवाहनयुग में आचार्य नागार्जुन की आयु ५२९ वर्ष थी। तिब्बती आचार्य लामा तारानाथ के अनुसार वाट्टर्स ने नागार्जुन की जीवनी में लिखा है कि नागार्जुन की आयु ५२९ या ५७१ वर्ष थी, वह २०० वर्ष मध्यप्रदेश में, २०० वर्ष दक्षिण में, १२९ वर्ष श्रीपर्वत पर रहा। नागार्जुन आंध्रसातवाहन युग ६८४ वि० पू० में जन्मा और १५५ वि० पू० कनिष्क के राज्यकाल के अन्तर्गत दिवंगत हुआ[1]।

पुरातन राजाओं का दीर्घराज्यकाल

अवेस्ता के आधार पर ऊपर लिखा जा चुका है कि वैवस्वतमनु ने जलप्रलय से पूर्व १२०० वर्ष राज्य किया, बाइबल के अनुसार स्वायम्भुवमनु (आदम) ने ९३० वर्ष राज्य किया, इन्द्र ने इससे भी अधिक वर्ष राज्य किया। बाइबल में नूह (वैवस्वतमनु) का राज्यकाल ५०० वर्ष लिखा है, रऊ और नहु का राज्यकाल क्रमशः २३७ वर्ष और १६० वर्ष लिखा है। इनमें रऊ पुरूरवा और नहुर नहुष प्रतीत होता है, अतः पुरूरवा का राज्यकाल २३७ वर्ष और नहुष का राज्यकाल १६० वर्ष था।

पुराणों में कुछ राजाओं का राज्यकाल सहस्रों वर्ष बताया गया है, इस सम्बन्ध में हम पूर्व विवेचन कर चुके हैं कि पुराणों में दिव्यवर्ष के घटाटोप में दिनों को वर्ष बना दिया अथवा सामान्य वर्षों को दिव्यवर्ष समझकर उनमें ३६० का गुणा कर दिया, फल एक ही है, किसी प्रकार समझ लिया जाए। अतः प्रसिद्ध कुछ राजाओं का राज्यकाल इस प्रकार था—

अलर्क—षष्टिवर्षसहस्राणि षष्टिवर्षशतानि च।
नालर्कादपरो राजा मेदिनीं बुभुजे युवा ॥

(भागवत ९।१८।७)

हैहय अर्जुन—पञ्चाशीति सहस्राणि वर्षाणां ते नराधिपः ॥

(हरि० ७।३३।२३)

दाशरथिराम—दश वर्षसहस्राणि दश वर्षशतानि च।
रामो राज्यमुपासित्वा ब्रह्मलोकं प्रयास्यति ॥

(रामा० १।९९)

भरत दौष्यन्ति—समास्त्रिणवसाहस्रीर्दिक्षु चक्रमवर्तयत्।

(भाग० ९।२०।३२)

---

१. द्र० वाट्टर्स भाग २, पृ० २०२

अन्य राजाओं का राज्यकाल पुराणों में इस प्रकार उल्लिखित है—

इक्ष्वाकु=३६००० वर्ष; सगर=३००००

तदनुसार उपर्युक्त राजाओं का राज्यकाल इस प्रकार था—

१.	अलर्क	६६००० वर्ष (दिन)	=	१८५ वर्ष
२.	अर्जुन (हैहय)	८५००० वर्ष (दिन)	=	२३६ वर्ष
३.	दाशरथिराम	११००० वर्ष (दिन)	=	३१ वर्ष
४.	भरत दौष्यन्ति	२७००० वर्ष (दिन)	=	७५ वर्ष
५.	इक्ष्वाकु	३६००० वर्ष (दिन)	=	१०० वर्ष
६.	सगर	३०००० वर्ष (दिन)	=	८३ वर्ष

मान्धाता जातक (सं० २५८) में चक्रवर्ती मान्धाता का जीवनकाल इस प्रकार लिखा है—

बालक्रीड़ा=८४ वर्ष (सहस्रवर्ष) निरर्थक
यौवराज्य=८४ वर्ष (सहस्रवर्ष) निरर्थक
राज्यकाल=८४ वर्ष (सहस्रवर्ष) निरर्थक

कुल =२५२ वर्ष

भारतोत्तरकाल में अनेक राजाओं का दीर्घराज्यकाल था, यथा—

प्रद्योत पालक	=	६० वर्ष
सोमाधि बार्हद्रथ	=	५८ वर्ष
श्रुतश्रवा	=	६४ वर्ष
सुक्षत्र	=	५६ वर्ष
महापद्मनन्द	=	१०० वर्ष
बृहद्रथ मौर्य	=	७० वर्ष
समुद्रगुप्त	=	५१ या ४१ वर्ष

शूद्रक-विक्रम

शूद्रक (क्षुद्रक) (विक्रम मृच्छकटिक का लेखक) विक्रम संवत् प्रवर्तक ने सौ वर्ष १० दिन की आयु प्राप्त की थी और दीर्घकाल (लगभग ८० वर्ष) राज्य किया था—

लब्ध्वा चायुः शताब्दं दशदिनसहितं शूद्रकोऽग्निं प्रविष्टः ॥

अतः इतिहास में औसत राज्यकाल निकालना या अटकलपच्चू से औसत राज्यकाल १८ वर्ष कह देना इतिहास नहीं कहानी से भी निकृष्टतर व्यर्थ—अर्थहीन कल्पनामात्र है । ❀

चतुर्थ अध्याय

परिवर्तयुग और व्यासपरम्परा

व्यासपरम्परा से तृतीययुग (युगमान) (३६० संवरात्मक) की पुष्टि

वायुपुराण (अ० २३।११४-२२६) में विस्तार से २८ या ३० व्यासों का वर्णन है, ब्रह्माण्ड पुराण में (१।२।३५) एवं विष्णुपुराण (३।३) में व्यासों की सूची लिखित है। यहां पर विषयगौरव के कारण ब्रह्माण्डपुराण से व्यासों का वर्णन उद्धृत करते हैं, जिससे ज्ञात होगा कि क्रमिकरूप से प्रथम परिवर्त से अट्ठाइसवें परिवर्तपर्यन्त शिष्यानुशिष्यरूप में कौन-कौन व्यास हुए—

अष्टाविंशतिकृत्वो वै वेदा व्यस्ता महर्षिभिः।
प्रथमे द्वापरे व्यस्ताः स्वयं वेदाः स्वायम्भुवा।
द्वितीये द्वापरे चैव वेदव्यासः प्रजापतिः।
तृतीये चोशना व्यासश्चतुर्थे च बृहस्पतिः।
सविता पंचमे व्यासो मृत्युः षष्ठे स्मृतः प्रभुः।
सप्तमे च तथैवेन्द्रो वशिष्ठश्चाष्टमे स्मृतः।
सारस्वतस्तु नवमे त्रिधामा दशमे स्मृतः।
एकादशे तु त्रिवृषा सनद्वाजस्ततः परम्।
त्रयोदशे चांतरिक्षे धर्मश्चापि चतुर्दशे।
त्र्ययारुणिः पंचदशे षोडशे तु धनंजयः।
कृतंजय ऋजीषोऽष्टादशे स्मृतः।
ऋजीषात्तु भरद्वाजो भरद्वाजात्तु गौतमः।
गौतमादुत्तमश्चैव ततो हर्यवनः स्मृतः।
हर्यवनात्परो वेनः स्मृतो वाजश्रवास्ततः।
अर्वाक्च वाजश्रवसः सोममुख्यायनस्ततः।
तृणबिन्दुस्ततस्तस्मादृक्षस्तु तृणबिन्दुतः।
ऋक्षाच्च स्मृतः शक्तिः शक्तेश्चापि पराशरः।
जातूकर्णोऽभवत्तस्मात्तस्माद्द्वैपायनः स्मृतः।

पुराणों में अनेकश भ्रष्टपाठों के कारण वेदव्यासनामों में पर्याप्त विकृतियां हैं। इनके नाम समस्त पाठों से संतोलित करके इस प्रकार संशोधित किये गये हैं– (१) स्वयम्भू ब्रह्मा (२) प्रजापति (कश्यप), (३) उशना (शुक्र), (४) बृहस्पति, (५) विवस्वान्, (६) वैवस्वतयम, (७) इन्द्र, (८) वसिष्ठ (वासिष्ठ), (९) सारस्वत (अपान्तरतमा), (१०) त्रिधामा, (११) त्रिवृषा, (१२) भरद्वाज (सनद्वाज=सुतेजा=त्रिविष्ट), (१३) अन्तरिक्ष, (१४) धर्म=सुचक्षु=वर्णी=नारायण, (१५) त्रय्यारुणि, (१६) धनंजय=संजय, (१७) कृतंजय, (१८) ऋतंजय (ऋजीषी)=जय=तृणजय, (१९) भरद्वाज, (२०) गौतम=वाजश्रवा, (२१) वाचस्पति+निर्यन्तर=हर्यातमा=उत्तम, (२२) वाजश्रवा=शुक्लायन, (२३) सोमशुष्मायण=सोमशुष्म=तृणबिन्दु, (२४) ऋक्ष=वाल्मीकि, (२५) शक्ति, (२६) पराशरः, (२७) जातूकर्ण, (२८) कृष्णद्वैपायन=पाराशर्य व्यास।

इस व्यासपरम्परा के आधार पर २८ या ३० युगों का सम्पूर्ण और औसत कालमान निकाला जा सकता है। कृष्णद्वैपायन व्यास अन्तिम[1] थे, उनका समय ज्ञात है कि द्वापर के अन्त में, कलियुग प्रारम्भ से लगभग ३०० वर्ष पूर्व, और कलियुग का प्रारम्भ कृष्ण के स्वर्गवास के दिन से हुआ—

यस्मिन् कृष्णो दिवं यातस्तस्मिन्नेव तदा दिने।
प्रतिपन्नः कलियुगस्तस्य संख्यां निबोधत॥

और २४वें व्यास ऋक्ष वाल्मीकि का अवतार त्रेताद्वापर की सन्धि में हुआ—परिवर्ते चतुर्विंशे ऋक्षो व्यासो भविष्यति[2]। इसी युग में रामावतार हुआ—

त्रेतायुगे चतुर्विंशे रावणस्तपसः क्षयात्।
रामं दाशरथिं प्राप्य सगणः क्षयमेयिवान्॥
संधौ तु समनुप्राप्ते त्रेतायां द्वापरस्य च।
रामो दाशरथिर्भूत्वा भविष्यामि जगत्पतिः॥
(शान्तिपर्व ३४८।१५)

पुराणों के अनुसार वाल्मीकि (ऋक्ष) व्यास से अट्ठाइसवें व्यासपर्यन्त निम्नलिखित व्यास हुए—

---

१. वायु० (९९।४२८)

२. वायु० (३।३०६),

(क) पुनस्तिष्ये च संप्राप्ते कुरवो नाम भारताः। (शान्तिपर्वः ३४९)
कृष्णयुगे च संप्राप्ते कृष्णवर्णो भविष्यति। विख्यातो वसिष्ठकुलनंदनः।

२४वें परिवर्त में — ऋक्ष—वाल्मीकि व्यास
२५वें परिवर्त में — शक्ति व्यास
२६वें परिवर्त में — पराशर व्यास
२७वें परिवर्त में — जातूकर्ण व्यास
२८वें परिवर्त में — कृष्णद्वैपायन व्यास

युग और व्यास २८ या ३० भ्रान्ति ?

वर्तमान पुराणों एवं सूर्यसिद्धान्त आदि में यह मान्यता मिलती है कि वैवस्वत मन्वन्तर के २८ चतुर्युग व्यतीत हो चुके हैं और यह इस मन्वन्तर का २८वां कलियुग चल रहा है, पुराणों में इस समय २८ व्यासों के ही नाम मिलते हैं।

अथर्ववेद (८।२।२१) के प्रमाण से हमें ज्ञात है कि तीन युगों में ११००० वर्ष या सही १०८०० वर्ष होते थे, पुराणों एवं मनुस्मृति के अनुसार हम बहुधा बता चुके हैं कि चतुर्युग में १२००० मानुष वर्ष ही होते थे। दक्ष-कश्यपप्रजापतिद्वयी से युधिष्ठिरपर्यन्त चतुर्युग के या सही अर्थों में युगों या परिवर्तों के १०८०० वर्ष व्यतीत हुए थे। यह परिवर्त या युग या लघुदेवयुग (वैदिकदिव्ययुग) ३६० वर्ष का होता था। १०८०० वर्षों में ३० युग (३६० × ३० = १०८००) ही व्यतीत हुए। अतः भारतयुद्धपर्यन्त ३० युग व्यतीत हुए और व्यास भी ३० होने चाहिए। यह हमारी अपनी निजी कल्पना नहीं है, पुराणपाठों में इस तथ्य के निश्चित संकेत हैं।

सामान्यपुराणमान्यता के अनुसार पाराशर्यव्यास २८वें और अट्ठाइसवें युग के अन्तिम व्यास थे। इसी प्रकार शन्तनु के पिता प्रतीप, जो युधिष्ठिर से एक युग (३६० वर्ष) पूर्व हुए, उन्हें २७वें युग में माना जाता है, परन्तु ब्रह्माण्ड और मत्स्य के कुछ पाठों में यह सत्य सुरक्षित रह गया है कि समकालिक ऐक्ष्वाक राजा मरु और देवापि (शन्तनुभ्राता) उनतीसवें (२९वें) युग में हुए थे—

मरुस्तु योगमास्थाय कलापग्राममास्थितः।
एकोनविंशप्रयुगे क्षत्रप्रावर्तकः प्रभुः॥
(ब्रह्माण्ड २।३।६४-२१०-२११)

एतौ क्षत्रप्रणेतारौ नवविंशे चतुर्युगे।
नवविंशे युगेऽसौ वै वंशस्यादिर्भविष्यति।
देवापिपुत्रः सत्यस्तु ऐलानां भविता नृपः॥
(मत्स्य० २७२।५५-५६)

उपर्युक्त पुराणपाठ से स्पष्ट है कि ऐक्ष्वाक मरु और देवापि, शन्तनु

उपर्युक्त २९वें ऐतिहासिकयुग में हुए न कि २७वें युग में। इसका स्पष्ट फलितार्थ है कि युधिष्ठिर, कृष्ण और पाराशर्य व्यास भी ३०वें युग में हुए न कि २८वें युग में, जैसी कि वर्तमान भ्रान्तधारणा है। अतः प्रजापति कश्यप से पाराशर्य व्यास तक ३० युग (३० × ३६० = १०८०० वर्ष) और ३० व्यास हुए।

हमारा अनुमान है कि इतिहास में चतुर्युगपद्धति का प्रादुर्भाव भारतयुद्ध से दो युग (३६० × २ = ७२०) अर्थात् ठीक ३८०० विक्रम पूर्व हुआ, इसने प्राचीन परिवर्त ऐतिहासिकयुगपद्धति को भुला दिया।

प्रथमयुगीन व्यास कश्यप

(१४००० वि० पू० से १३६४० वि० पू०)—देवासुरपिता प्रजापति कश्यप प्रथम व्यास थे, जिन्होंने एक सहस्रसूक्तों का दर्शन किया था, जिनमें ५००४६९ मन्त्र थे ऐसा आचार्य शौनक ने बृहद्देवता (३।१२९-१३०) में लिखा है। इन पंचलक्षाधिक वेदमन्त्रों की संख्या का विघटन होते-होते तीसवें व्यास पाराशर्य के समय वेदमन्त्रों की संख्या केवल बारह हजार रह गई, तथापि वे ऋचायें आदिम रचयिता के नाम से ही 'प्रजापतिसृष्ट' मानी जाती थीं—

'द्वादश बृहतीसहस्राण्येतावत्यो ह्यर्चो याः प्रजापतिसृष्टाः ।।[1]

प्रजापति का ब्रह्मा के नाम से, २१ शास्त्रों में अधिकांश, कश्यप प्रजापति रचित थे[2]।

कश्यप की सन्तान न केवल पंचजन असुर-दैत्य-दानव और देव (आदित्य) बल्कि गन्धर्व, नाग और सुपर्ण तथा यक्ष राक्षसादि-दशजन थे।

प्रजापति कश्यप अतिदीर्घजीवी महापुरुष थे, जिनकी आयु अनेक सहस्रों वर्ष थी, परन्तु यह प्रथम व्यास होने से प्रथम युग अर्थात् १४००० वि० पू० से १३६४० वि० पू० तक के व्यास समझे जाने चाहिएं।

द्वितीययुगीनव्यास—सत्य या वायु ?

इस द्वितीय व्यास के सम्बन्ध में वर्तमानपाठों में पर्याप्त भ्रम है। वायुपुराण में एक स्थान पर 'सत्यसंज्ञक' प्रजापति को द्वितीय व्यास माना है[3], तो

---

१. श० ब्रा० (१०।४।२।२३)

२. द्र० भा० बृ० इ० भा० १, श्री ब्रह्माजी, अध्याय पृ० १४ से २७ तक तथा इ० पु० सा० इ०, पृ० २६ से ३० तक।

३. द्र० भा० बृ० इ० भा०-१, श्री ब्रह्माजी, अध्याय पृ० १४ से २७ तक तथा इ० पु० सा० इ०, पृ० २६ से ३० तक।

अन्यत्र 'वायु' ऋषि द्वितीय व्यास प्रतीत होते हैं। सामग्री के अभाव में अन्तिम निर्णय कठिन है। यदि 'वायु' ऋषि द्वितीय व्यास थे, तो इनका समय पुरूरवा ऐल के समय (१३६४० वि० पू० से १३२८० वि० पू०) था। यही द्वितीय युग की अवधि और तिथि थी।

उशना काव्य : तृतीययुगीन व्यास

(१३२८० वि० पू० १२९२० वि० पू०) ये वरुण आदित्य के पौत्र और भृगु ऋषि के पुत्र थे, जो असुरों के प्रसिद्ध पुरोहित थे—

उशना काव्योऽसुराणां (पुरोहितः) जै० ब्रा० १।१२५)

उशना की पुत्री देवयानी ययाति की पत्नी हुई। उशना काव्य, प्रह्लाद, विरोचन, बलि वृषपर्वा दानव आदि के गुरु और पुरोहित रहे। ये उशना भार्गवों के शासक थे—'भृगूणामधिपं चैव काव्यं राज्येऽभ्यषेचयत्' (वायु० ७०।४)। अथर्ववेद के प्रधान प्रवर्तक और ऋषि थे उशना काव्य शुक्राचार्य। पारसियों का धर्मग्रन्थ जेन्दावेस्ता अथर्ववेद (छन्दोवेद) का ही विकृत रूप है। 'छन्दोवेद' शब्द ही बिगड़कर 'जेन्दावेस्ता' होगया। प्राचीनकाल में जेन्दावेस्ता अतिविशाल ग्रन्थ था, इस समय इसका एक स्वल्पांश ही अवशिष्ट है। पारसी धर्मग्रन्थ में इनको कवि उसा या 'कैकोस' कहा गया है। उशना ने अनेक लौकिकशास्त्रों की रचना की, वेद के अतिरिक्त ये प्रधान थे—औशनस अर्थशास्त्र, आयुर्वेद, धनुर्वेद और पुराण।

वेदपुराणशास्त्र रचने के कारण शुक्राचार्य तृतीय व्यास कहलाये। ये अत्यन्त दीर्घजीवी ऋषि थे, परन्तु इनका व्यासत्वकाल तृतीययुग में १३२८० वि० पू० से १२९२० वि० पू० तक था।

बृहस्पति—चतुर्थयुगीन व्यास—(१२२० वि० पू० से १२५६० वि० पू०)

ये प्रसिद्ध देवपुरोहित थे, अंगिरा के वंश में उत्पन्न होने के कारण इनको 'आंगिरस' भी कहा जाता था—

'बृहस्पतिरांगिरसो देवानां ब्रह्मा' (गोपथ ब्रा० ३।१)
'बृहस्पतिर्देवानां पुरोहित आसीत्' (जै० ब्रा० १।१२५)

देवराज इन्द्र बृहस्पति का प्रधानशिष्य था। चतुर्थ व्यास होने से स्पष्ट है कि बृहस्पति आयु में उशना से छोटे थे, यद्यपि दोनों समकालिक भी रहे।

वेदमन्त्रसंहिता और बार्हस्पत्य अर्थशास्त्र इनकी प्रमुख रचनायें थीं, वेद-संहिता सम्पादन के कारण चतुर्थ व्यास कहलाये।

बृहस्पति का व्यासत्वकाल चतुर्थ युग में—१२९२० वि० पू० से १२५६० वि० पू० तक था। यद्यपि इनकी आयु सहस्रवर्ष से अधिक थी।

विवस्वान्–पंचमयुगीन व्यास–(१२५६० वि० पू० से १२२०० वि० पू०)

शुक्लयजुर्वेद के प्रवर्तक विवस्वान् थे, इसका कृतित्व आज भी पाठान्तर से उपलब्ध है। विवस्वान्—वैवस्वत यम, मनु, यमी और अश्विनीकुमार के पिता थे, शुक्रपुत्रत्वष्टा का पुत्र विश्वकर्मा मय, विवस्वान् का बहनोई और शिष्य था, जिसे विवस्वान् ने सूर्यसिद्धान्त पढ़ाया। विवस्वान् की आयु निश्चय ही सहस्रवर्ष के लगभग थी।

हरिवंश (१।७।३०-३१) में विवस्वान् की गणना चाक्षुषमन्वन्तर के सप्तर्षियों के अन्तर्गत की है—भृगु, नभ, विवस्वान् सुधामा, विरजा, अतिनामा और सहिष्णु। स्पष्ट है कि चाक्षुषमन्वन्तर और वैवस्वतमन्वन्तर में कोई अधिक अन्तर नहीं था, केवल कुछ शताब्दियों का अन्तर था, परन्तु विवस्वान् पृथु आदि चाक्षुष राजाओं के समकालिक नहीं हो सकते। पृथु, विवस्वान् से आठ पीढ़ी पूर्व हुए, अतः विवस्वान्, चाक्षुषमन्वन्तर के अन्त और वैवस्वत मन्वन्तर से पूर्व अर्थात् जलप्लावन से कुछ शती पूर्व हुए।

षष्ठयुगीन वैवस्वतयम : षष्ठ व्यास (१२२०० वि० पू० से ११८४० वि० पू०)

यह विवस्वान् के ज्येष्ठ पुत्र वैवस्वत यम का व्यासत्वकाल है। यद्यपि यम का जन्म संभवतः तृतीय या चतुर्थ युग में १२९२० वि० पू० में हो चुका था। जेन्दावेस्ता के अनुसार जलप्रलय से पूर्व यम ने ईरान में १२०० वर्ष राज्य किया, यम का जन्म तृतीय युग में हो गया था, जलप्रलय से पूर्व ही, तभी वह इतने दिन राज्य कर सकता था।

इन्द्र, यद्यपि यम का चाचा था, तथापि आयु में छोटा था और उसका शिष्य था। यम की आयु निश्चय ही अनेक सहस्रवर्ष थी।

अवेस्ता में यम को 'यिम खिस्त ओस्त' और उत्तरकालीन पारसीग्रन्थों में 'जमशेद' कहा गया है।

यम ने अथर्ववेद की किसी संहिता की रचना की होगी, तभी वह षष्ठ वेदव्यास माना गया। वैवस्वत यम ने एक पुराण भी रचा था। यम को ईरान का राजा असुरमहत् या वरुण ने बनाया था जो पिशदादियन (पश्चाद्देव) था।

शक्र-इन्द्र-शतक्रतु-सप्तमयुगीन व्यास—(११८४० वि० पू० से ११४८० वि० पू०)

सप्तम युग में इन्द्र का व्यासत्वकाल था। देवों का राजा बनने से पूर्व शतक्रतु या शक्र दीर्घकालपर्यन्त ब्राह्मण ऋषि रहा और उसने अनेक शास्त्रों की रचना की, यथा—वेदमन्त्र, आयुर्वेद, उपनिषद्, ब्राह्मणग्रन्थ, मीमांसा, इतिहासपुराण, अर्थशास्त्र इत्यादि।

इन्द्र का जन्म का नाम 'शक्र' था, उसने वेदमन्त्रों के आधार पर अपना नाम बदला—'इन्द्र'। उसने १०१ वर्ष तक ब्रह्मचर्य का पालन किया, उसने दीर्घकाल तक पौरोहित्य कार्य किया—वैवस्वतमनु का यज्ञ कराया, (तै० सं० ६।६।६)।

यद्यपि इन्द्र का जन्म पंचम या षष्ठयुग (१२५६० वि० पू० से ११७४० वि० पू० के मध्य) में हो चुका था, तथापि उसको 'व्यास' पदवी ब्राह्मणजीवन में ही मिली होगी, परन्तु उसको 'देवराजपद' सप्तमयुग ११८४० वि० पू० से ११४८० वि० पू०) में मिला जब विष्णु की सहायता से उसने दैत्येन्द्र बलि का राज्य हड़प लिया और उसको 'महेन्द्र' पद वक्ष्यमाण अष्टमयुग में मिला।

वासिष्ठ-वसुमान्-अष्टमयुगीन व्यास

(११४८० वि० पू० से १११२० वि० पू०) इस अष्टमयुग में वरुणपुत्र मैत्रावरुणि वसिष्ठ के पुत्र वसुमान् ऋषि अष्टम वेदव्यास थे। प्रायः विद्वान् भी एक ही वसिष्ठ मैत्रावरुणि को सनातन वसिष्ठ समझते हैं, परन्तु प्राचीन पुराण-पाठ से यह भ्रान्ति दूर होती है कि सप्तऋषियों में वसुमान् वासिष्ठ ही अष्टम-युगीन व्यास था—

षष्ठो वसिष्ठपुत्रस्तु वसुमाँल्लोकविश्रुतः।

(ब्रह्माण्ड पु० १।२१२८।२९)

नवमयुगीन व्यास-अपान्तरतमा सारस्वत

(१११२० वि० पू० १०७६० वि० पू०)—अपान्तरतमा ऋषि दध्यङ् आथर्वण और सरस्वती अलम्बुषा के पुत्र थे, अतः आथर्वण और सारस्वत[1] कहे जाते थे। इन्हीं को शिशु आंगिरस कवि कहा जाता है[2] जो शैशवसाम के द्रष्टा थे।

---

१. तथाङ्गिरा रागपरीतचेतः सरस्वतीं ब्रह्मसुतः सिषेवे।
सारस्वतो यत्र सुतोऽस्य जज्ञे नष्टस्य वेदस्य पुनः प्रवक्ता॥

(बुद्धचरित)

२. अध्यापयामास पितृन् शिशुरांगिरसः कविः। (मनु० २)

अपान्तरतमा का नाम ही सारस्वत था। इस ऐक्य को न समझकर पं० भगवद्दत्त ने लिखा—'इन २८ वेदप्रवचनों में अपान्तरतमा का नाम कहीं दिखाई नहीं देता। निश्चय ही यह वैवस्वतमनु पूर्व स्वायम्भुव अन्तर में वेदप्रवचन कर चुका था[1]। यद्यपि पण्डितजी ने दोनों को पृथक्-पृथक् समझकर उनका पृथक्-पृथक् वर्णन किया है। इस नवमयुगीन व्यास अपान्तरतमा सारस्वत का वेदप्रवचन स्वायम्भुव मन्वन्तर में नहीं वैवस्वत मन्वन्तर में वार्तघ्न देवासुर संग्राम के पश्चात् ११११२० वि० पू० में हुआ[2]। वृत्रवध के पश्चात् इन्द्र को 'महेन्द्र'[3] पदप्राप्ति हुई, जब विश्व (भूमण्डल) पर उसका कोई प्रतिद्वन्द्वी नहीं रहा, बलिबन्धन और वृत्रवध की घटनाओं में न्यूनतम एक युग (३६० वर्ष) का अन्तर था। यह समय ११११२० वि० पू० के निकट था।

सारस्वत व्यास के चार शिष्य थे—पराशर, गार्ग्य, भार्गव और आंगिरस ऋषि।

दशमयुगीन व्यास त्रिधामा

इस युग की अवधि १०७६० वि० पू० से १०४०० वि० पू० के मध्य थी[4]। अतः यही त्रिधामा का समय था। दत्तात्रेय और मार्कण्डेय इस युग के दो प्रधान पुरुष थे, यह सम्भव है कि मार्कण्डेय का ही अपर नाम त्रिधामा हो, क्योंकि यह एक गोत्रनाम था।

दशम व्यास त्रिधामा ने कौन-सी वेदशाखा बनाई और कौन-सा पुराण लिखा, यह अज्ञात है।

एकादशयुगीन व्यास : शरद्वान्=त्रिशिख या गौतम ?

१०४०० वि० पू० से १००६० वि० पू० के मध्य में एकादश व्यास का कृतिकाल था। इसके ये तीनों नाम विभिन्न पुराणों में मिलते हैं। यदि शरद्वान् और गौतम या दीर्घतमा मामतेय एक ही हैं तो ये अंगराज बलि वैरोचन के समय में हुए जिनके अंग, वंग, कलिंग, पुण्ड्र और सुह्म पांच वंशप्रवर्तक पुत्र दीर्घतमा द्वारा ही राजा के क्षेत्र (रानी) में उत्पन्न किये गए।

---

१. वैदिक वाङ्मय का इतिहास, भाग १, पृष्ठ १६१

२. महा० शल्यपर्व (५ अ०)

३. इन्द्रो वै वृत्रमहन्त्सोऽन्यानदेवानत्यमन्यत। स महेन्द्रोऽभवत्।
(मैत्रा० सं० ४।६।८)

४. त्रेतायुगे तु दशमे दत्तात्रेयो बभूव ह।
नष्टे धर्मे चतुर्थश्च मार्कण्डेयपुरस्सरः॥ (वायुपुराण)

मतिनार, दुष्यन्तादि इसी युग के पुरुष थे। यदि शरद्वान् गौतम और दीर्घतमा मामतेय एक ही व्यक्ति थे तो इनकी आयु १००० (एक सहस्र) वर्ष थी[1]। ऋग्वेद प्रथम मण्डल में दीर्घतमा मामतेय के अनेक विद्वत्तापूर्ण सूक्त हैं। निश्चय ही गौतम ने किसी वेदशाखा का प्रवचन किया था, जिससे वह 'एकादश' व्यास पदवी को प्राप्त हुए।

शरद्वान् गौतम का नाम किसी-किसी पुराणपाठ की व्याससूची में से छूट गया है, यह हम पहिले ही संकेत कर चुके हैं। यह सम्भव है कि त्रिशिख और शरद्वान् गौतम पृथक्-पृथक् व्यास हों।

त्रिशिख या त्रिविष्ट—द्वादशयुगीन व्यास

१००६० वि० पू० से ९७०० वि० पू० के व्यास थे।

शततेजा या अन्तरिक्ष—त्रयोदशयुगीन व्यास

९७०० वि० पू० से ९३४० वि० पू० के मध्य त्रयोदश व्यास थे। शततेजा और अन्तरिक्ष एक ही व्यक्ति का नाम था या पृथक्-पृथक् यह निश्चयपूर्वक नहीं कहा जा सकता।

नारायण या वर्णी—चतुर्दशयुगीन व्यास

वि० पू० ९३४० से ८९८० वि० पू० में चतुर्दश युग था। यह इस युग के व्यास हुए नरनारायण ऋषि बदरिकाश्रम में रहते थे। इन्होंने दम्भोद्भव नाम के प्रसिद्ध राजा का विनाश किया। चाक्षुषमन्वन्तर के साध्यदेव, नारायण, जिनकी देवमाता अदिति ने पूजा की थी और चतुर्दश व्यासनारायण निश्चय ही पृथक्-पृथक् युगों में होने वाले पृथक्-पृथक् दो महापुरुष थे। चाक्षुषमन्वन्तर का समय, हमने तत्प्रकरण में निर्दिष्ट किया है।

पञ्चदशयुगीन व्यास त्र्यारुणि

पुराणगणना से मान्धाता पंचदशयुग में अर्थात् ८९८० वि० पू० से ८६२० वि पू० के मध्य में हुए। गान्धारपति अंगार, आंगबृहद्रथ पौरव, मरुत, जनमेजय, सुधन्वा, नृग, गय और असित धान्व असुर (डायनोसिस मैगस्थनीज) इसी युग अर्थात् मान्धाता के समकालिक राजर्षिगण थे। मैगस्थनीज के अनुसार असित धान्वासुर (डायनोसिस) और सिकन्दर में ६४५१ वर्षों का अन्तर था, तदनुसार उसका समय

१. दीर्घतमा मामतेयो जुजुर्वान् दशमे युगे (ऋ०) तथा "तत् उ ह दीर्घतमा दश पुरुषायुषाणि जिजीव (शांखायन आरण्यक २।१७)

आज से ८७६१ वर्ष पूर्व जाता है, युगगणना से यह समय ८६८० वि० पू० वर्ष पूर्व था। हमारी पुराणगणना (युगगणना और मैगस्थनीज निर्दिष्टकाल में कोई २००० वर्ष का अन्तर है, मैगस्थनीज के दो अंक (६४५१ वर्ष और ६०४२ वर्ष) मिलते हैं और उसने ३०० और १२० वर्ष की (कुल ४२० वर्ष के अराजककाल का निर्देश किया है[1]। अतः ६४५२ में ४२० जोड़ने पर ६८७१ वर्ष होते हैं, अतः मान्धाता और असित धान्वासुर का पुराणनिर्दिष्ट समय ८६२० वि० पू० ही सत्य है। इसी समय पन्द्रहवें व्यास त्र्यारुणि हुए।

पं० भगवद्दत्त ने ऐक्ष्वाक राजा त्र्यारुण (तीसवां) को और ऋषि व्यास (पन्द्रहवां) को एक मानने की चेष्टा की है[2]। परन्तु यह सम्भव नहीं, क्योंकि ऐक्ष्वाक त्र्यारुण और मान्धाता में १५ पीढ़ियों का अन्तर था, अतः व्यास त्र्यारुणि अन्य कोई ऋषि था, वह ऐक्ष्वाक त्र्यारुण नहीं हो सकता।

षोडशयुगीन व्यास संजय

८६२० वि० पू० से ८२६० वि० पू० तक के सोलहवें युग में यह संजय व्यास था।

सप्तदशयुगीन व्यास कृतंजय

इसका कार्यकाल ८२६० वि० पू० से ७९०० वि० पू० था।

अष्टादशयुगीन व्यास ऋतंजय

इनका समय ७९०० वि० पू० से ७६४० वि० पू० था।

एकोनविंशयुगीन व्यास भरद्वाज

बृहस्पति का पुत्र भरद्वाज देवराज इन्द्र का शिष्य था। इन्द्र ने इसको औषधिबल से ४०० वर्ष की आयु प्रदान की। भरद्वाज ऋषि काशिराज, दिवोदास, प्रतर्दन और क्षत्रप्रतर्दन का पुरोहित रहा। जमदग्नि, विश्वामित्र, वसुमान् वासिष्ठ (सप्तर्षि), हैहय अर्जुन, वसुमना ऐक्ष्वाक, वैश्वामित्र, परशुराम, आदि सभी उन्नीसवें युग के महापुरुष थे, जो ७६४० वि० पू० से ७२८० वि० पू० के मध्य हुए।

बीसवें युग के व्यास तृणंजय

इनका युग ७२८० वि० पू० से ६९२० वि० पू० के मध्य था।

---

१. द्र० इण्डिया, एरियन, (अ० नवम)

२. भा० बृ० इ० भाग २, पृ० १००

इक्कीसवें युग के व्यास वाजश्रवा गौतम

ये कठोपनिषद् के प्रसिद्ध नायक नचिकेता के पिता थे, तैत्तिरीयसंहिता और महाभारत में भी इसका आख्यान है। वाजश्रवा व्यास का समय ७६२० वि० पू० से ६४६० वि० पू० था।

वाचस्पति व्यास : बाइसवें युग के व्यास

६५६० वि० पू० से ५८४० वि० पू० तक यह अवधि थी। प्रतर्दन आदि इस समय तक जीवित थे, क्योंकि शांखायन ब्राह्मण (२६।५) के अनुसार वाचस्पति व्यास के पुत्र अलीकयु से काशिराज प्रतर्दन ने प्रश्न पूछे थे। इसी समय वसिष्ठ के वंशज स्थविर जातूकर्ण्य विद्यमान थे। वायुपुराण में वाचस्पति का अन्य नाम निर्यन्तर है।

तेईसवां व्यास : शुक्लायन

इसका युग (३६० वर्ष) ५८४० वि० पू० से ५६८० वि० पू० तक था। इसका अन्य नाम सोमशुष्म या सोमशुष्मायन है।

चौबीसवां व्यास तृणबिन्दु

इसका युग ५४८० वि० पू० से ५१२० वि० पू० तक था।

यह सम्राट् तृणबिन्दु वैशाली का शासक, रावण का मातामह और पुलस्त्य का श्वसुर था। तृणबिन्दु ने किस वेद का प्रवचन किया, यह अज्ञात है। पुराणों में तृणबिन्दु को तेईसवां व्यास कहा है, परन्तु हमारी गणना से यह चौबीसवां व्यास निश्चित होता है।

पच्चीसवां व्यास : शक्ति

पुराणों के व्यासक्रमवर्णन में पर्याप्त त्रुटि है, उनमें ऋक्ष वाल्मीकि को शक्ति वसिष्ठ व्यास से पूर्व रखा है, परन्तु यह निश्चित ज्ञात है कि शक्तिवासिष्ठव्यास वाल्मीकिव्यास से पूर्व हुए थे, क्योंकि शक्ति कल्माषपाद सौदास ऐक्ष्वाक के पुरोहित थे जो दाशरथिराम से न्यूनतम दश पीढ़ी पूर्व हुए, अतः शक्ति व्यास का समय वाल्मीकि व्यास से पूर्व स्थिर होता है, यह पूर्णतः सम्भव है कि दोनों ऋषि दीर्घजीवी होने से समकालिक हों। शक्तिव्यास का समय ५१२० वि० पू० से ४७६० वि० पू० स्थिर होता है, दीर्घजीवी होने से वे इस काल से पूर्व भी रहे हों, यह सम्भव है।

छब्बीसवें व्यास : ऋक्ष वाल्मीकि

यद्यपि चतुर्युगी गणना से इनका समय दाशरथिराम के समकालिक ५००० वि० पू० सिद्ध होता है, तथापि दीर्घजीवी होने से इनका व्यासकाल ४७६० वि०पू० से ४४०० वि० पू० के मध्य होना चाहिए। यह भी सम्भव है कि अनेक व्यास समकालिक हों, यद्यपि छब्बीसवां युग ४७६० वि० पू० से प्रारम्भ होता है तथापि काल की दृष्टि से वाल्मीकि व्यास शक्ति के समकालिक ही हों। वाल्मीकि स्वयं रामायण में अपनी आयु सहस्रों वर्ष बताते हैं।

तैत्तिरीयप्रातिशाख्य (५।३६) और मैत्रायणी (२।६।२।३०) इत्यादि प्रातिशाख्यों में वाल्मीकिचरण-सम्बन्धी नियम मिलते हैं, अतः पं० भगवद्दत्त का यह कथन सार्थक है - तैत्तिरीय और मैत्रायणी प्रातिशाख्यों के इन नियमों से वाल्मीकिप्रोक्त वेदपाठ का सद्भाव अत्यन्त स्पष्ट है[1]।' वाल्मीकि के वेदर्षि और व्यास होने से ही रामायण को 'आर्षकाव्य' कहा गया है। वाल्मीकि ने रामायण, इतिहास और वेद के अतिरिक्त आयुर्वेद और धनुर्वेद का भी निर्माण किया था। वाल्मीकि के चार प्रधान शिष्य थे—शालिहोत्र (अश्वचिकित्सक), अग्निवेश (चरकसंहिताकार), युवनाश्च और शरद्वान्।

सत्ताईसवां व्यास पराशर

शक्ति वसिष्ठ के पुत्र पराशर भी एक व्यास थे, विष्णुपुराण में इनको इस पुराण का रचयिता बताया है, विष्णुपुराण का मूल निश्चय ही अतिप्राचीन है, जो नवम व्यास अपान्तरतमा तक जाता है। पराशर का समय यद्यपि कल्माषपाद सौदास आदि के समकालिक था, जो दाशरथिराम से न्यूनतम दो युग (७२० वर्ष) पूर्व हुआ, तथापि यह सम्भव है कि पराशर दीर्घजीवी होने से बहुत उत्तरकाल ४४४० वि० पू० से ४०४० वि० पू० व्यास के रूप में प्रसिद्ध हुए हों तथा यह भी सम्भव है क्योंकि पराशर एक गोत्रनाम था, अतः आदिपराशर और कृष्णद्वैपायन पाराशर्य व्यास के मध्य में कोई अन्य ऋषि पराशर या पाराशर्य व्यास हुआ हो जो सत्ताईसवां व्यास था।

अन्तिम व्यास कृष्णद्वैपायन पाराशर्य

युगमान से इनका समय ३३२० वि० पू० से २९६० वि० पू० तक था जो इतिहास से भी सिद्ध है, इनका जन्म शान्तनु के पिता प्रतीप के राज्यकाल के

---

१. वै० वा० इ० भा० १, पृ० १६४

अन्तिमचरण या शान्तनु के राज्यकाल में हुआ, यह समय जनमेजय परीक्षित से लगभग ३०० वर्षों के पूर्व था। पाराशर्य व्यास जनमेजय के राज्यकालपर्यन्त विद्यमान थे, यह पुराणसाक्ष्य से ज्ञात तथ्य है[1]।

❀—❀

१. हरि० (३।१)

शन्तनु राज्यकाल	=५० वर्ष
विचित्रवीर्य राज्यकाल	=१२ वर्ष
भीष्मशासन	=२० वर्ष
पाण्डुशासन	= ५ वर्ष
धृतराष्ट्रशासन	=४० वर्ष
दुर्योधनशासन	=३६ वर्ष
युधिष्ठिरशासन	=३६ वर्ष
योग	=१९९ वर्ष

परिशिष्ट

प्राग्भारतीय इतिहास को तिथि तालिका (युगानुक्रम)

ग्रन्थ का समापन हम पं० भगवद्दत्त के निम्न कथन के साथ करेंगे '**अवान्तर त्रेताओं की अवधि**—यदि इन अवान्तर त्रेताओं की अवधि तथा आदियुग, देवयुग और त्रेतायुग आदि की अवधि जान ली जाये, तो भारतीय इतिहास का सारा कालक्रम शीघ्र निश्चित हो सकता है। हम अभी इस बात को पूर्णतया जान नहीं पाये।' (भा० बृ० इ०, भा० १, पृ० १५९)। यदि पण्डित जी आज जीवित होते तो, उनके हर्ष का ठिकाना नहीं रहता कि युगसमस्या का हमने प्राय: पूर्ण समाधान कर लिया है और तथाकथित अवान्तर त्रेताओं (या द्वापरों) की अवधि हमने ज्ञात कर ली है कि वह ३६० वर्ष की अवधि का परिवर्त या दिव्ययुग था और इसी की विस्मृति से दिव्ययुगसम्बन्धी भ्रामक, अनैतिहासिक एवं अविश्वसनीय गणना पुराणों में प्रचलित हो गई—हमने विविध प्रमाणों से युग की अवधि ठीक ३६० वर्ष निश्चित की है, जिनका सार है—

१. हमने 'भारतीय इतिहास पुनर्लेखन क्यों ?' पुस्तक के पृष्ठ १२.१ पर लगधप्रोक्त श्लोक का शुद्ध पाठ इस प्रकार लिखा है—

तेषां तत् षण्मितै: प्रोक्तं तृतीय युगसंज्ञकम्।
युगानां द्वादशशती चतुष्पादी कलायुगे।

"बार्हस्पत्य युग (६० वर्ष) का छः गुणा तृतीय युग होता हैं अर्थात् ३६० वर्ष और युगपाद (चतुष्पाद) है १२०० वर्ष का" इसकी पुष्टि आर्यभट के प्रमाण से होती है—'षष्ट्यब्दानां षष्टिर्यदा व्यतीताश्चयुगपादा:'। ब्रह्माण्ड० (२।२८।१६) के निम्न श्लोक में दिव्यसंवत्सर का पाठ है—यही (३६० वर्ष) युग या परिवर्त का मान था—

त्रीणि वर्षशतान्येव षष्टिवर्षाणि यानि तु।
दिव्यं युगमेतद् मानुषेण प्रकीर्तितम्॥

इस सम्बन्ध में हमने उक्त पुस्तक के ५२ पृष्ठ पर सोवियत अन्वेषकों के सन्दर्भ से निश्चित किया है कि हड़प्पा के सिन्धुजन भी ३६० वर्ष का एक 'युगमान' मानते थे। यही युगमान उत्तरकाल में दिव्यवर्षगणना सम्बन्धी भ्रान्ति

का कारण बन गया। अतः पं० भगवद्दत्त की इच्छा हमारे अनुसन्धान से पूर्ण हो गई है, तदनुसार व्यासपरम्परा के आधार पर प्राग्महाभारतीय इतिहास की युगानुक्रम तिथितालिका प्रस्तुत करते हैं, जिससे प्रमुख व्यक्तियों का काल निश्चित हो जाता है—

क्र. सं.	व्यास	कृतित्व	युगावधि	शिष्यगण	युगप्रवर्तक	प्रमुख ऋषि, राजर्षि
१.	ब्रह्मा = परमेष्ठी = अरिष्टनेमी = कश्यप = (काश्यप)	प्राजापत्यश्रुति (पांच लाख नौ सौ निन्यानवें मन्त्र) एवं विविध शास्त्र पुराणादि	१४००० वि०पू० से १३६४० वि०पू० पर्यन्त	महादेवरुद्र नारद, सनत्कुमार सनकादि, हिरण्यकशिपु विप्रचित, वरुण, आदि	प्राचेतस दक्ष प्रजापति	श्वेत, शिख, श्वेताश्व, श्वेतलोहित
२.	वायु (सत्य) =मातरिश्वा प्रध्वंसन= (प्रभंजन)	वेद वायुपुराण गाथाश्लोक ऋषि धर्मशास्त्रादि	१३६४० वि०पू० से १३२८० वि०पू० पर्यन्त	दुन्दुभि, शतरूप ऋचीक, केतुमान्	सुतार योगीश्वर	शिव, भृगु उशना = शुक्रभार्गव नारदादि
३.	उशना= शुक्र=काव्य भार्गव	औशनस, अर्थ-शास्त्र पुराण, अथर्वाङ्गिरस के आयुर्वेद आदि	१३२८० वि०पू० से १२९२० वि०पू० पर्यन्त	प्रह्लाद शण्डमर्क, वसूत्री त्वष्टा	हिरण्यकशिपु	हिरण्यकशिपु विप्रचित्ति, शिव महादेव, नारदादि
४.	बृहस्पति आंगिरस अंगिरासुत	बार्हस्पत्य अर्थशास्त्र, आंगिरस वेद आंगिरस पुराण	१२९२० वि०पू० से १२५६० वि०पू० पर्यन्त	विवस्वान् शतक्रतु इन्द्र, सुहोत्री	प्रह्लाद दैत्येन्द्र, देवगण	त्रित, द्वित, एकत, आप्त्य, शालावृक बृहद्गिरा, सुधन्वा ऋभुपति

क्र. सं.	व्यास	कृतित्व	युगावधि	शिष्यगण	युगप्रवर्तक	प्रमुख ऋषि, राजर्षि
५.	विवस्वान् आदित्य= (सूर्य)	सौर (शुक्र) यजुर्वेद सूर्यपुराण योगशास्त्र धर्मशास्त्रादि	१२५६० वि०पू० से १२२०० वि०पू० पर्यन्त	वैवस्वतयम, वैवस्वतमनु, यमी, अश्विनी कुमार, मय, विश्वकर्मा, सनक, सनत्कुमार ऋभु आदि	विवस्वान् स्वयं	भृगु, उशना अत्रि, वसिष्ठ, अगस्त्य, अंगिरा आदि इक्ष्वाकु आदि त्रसनर्षि
६.	वैवस्वत यम=मृत्यु	वेद, पुराण धर्मशास्त्र आदि	१२२०० वि०पू० से ११८४० वि०पू० पर्यन्त	सुधामा, विरजा शंखायन (यमपुत्रगण) इन्द्रशतक्रतु	नहुष (देवेन्द्र) वैवस्वत यम	लोकाक्ष, बृहस्पति लोक्य शंख, कुमार आदि यायायन यमी
७.	शक्र=शतक्रतु (ब्राह्मण पुरोहित) इन्द्र पुरन्दर	इन्द्रदेव, ब्राह्मण ऐन्द्र व्याकरण ऐन्द्र आयुर्वेद इत्यादि शास्त्र	११८४० वि०पू० से ११४८० वि०पू० पर्यन्त	वसिष्ठ मैत्रावरुणि, अगस्त्य, सारस्वत, सुमेध वलुक ऐन्द्र जयन्द आदि	विष्णु इन्द्र (स्वयं) बलि- वैरोचन (दैत्येन्द्र)	विरोचन उशन शुक्र विश्वारूप त्वाष्ट्र, नमुचि
८.	मैत्रावरुणि वसिष्ठ	आथर्वण वेद वासिष्ठ पुराण ब्राह्मणग्रन्थ इत्यादि	११४८० वि०पू० से १११२० वि०पू० तक	सारस्वत (अवान्तरतया, कपिल वाग्बलि	ककुत्स्थ ऐक्ष्वाक, महेन्द्र (इन्द्र)	कपिल, सारस्वत वृत्रासुर, अहिदानव दध्यङ् आथर्वण अश्विनीकुमार च्यवन
९.	अपान्तरतमा =सारस्वत =प्राचीनगर्भ वाक्संभव =वाच्यायन	शैशवसाम सारस्वत वेद सारस्वत पुराण (वैष्णव पुराण)	१११२० वि०पू०से १०७६० वि०पू० पर्यन्त	त्रिधामा वसुमान् वासिष्ठ	ऋषभ (शरद्वान्) आंगिरस गौतम राहूगण	मैथिलजनक, गौतमराहूगण

क्र. सं.	व्यास	कृतित्व	युगावधि	शिष्यगण	युगप्रवर्तक	प्रमुख ऋषि, राजर्षि
१०.	त्रिधामा	वेद पुराण इत्यादि	१०७६० वि०पू० से १०४०० वि०पू० पर्यन्त	दत्तात्रेय सुबन्धु, विप्र वन्धु, निरामित्र	दत्तात्रेय युगप्रवर्तक	प्रभाकरसोम, दुर्वासा अपाला आत्रेयी तक्षक, राजर्षि ऋचेपु- पौरव
११.	शरद्वान् आंगिरस	शारद्वानवेद पुराण इत्यादि	१०४०० वि०पू० से १००६० पर्यन्त	भरद्वाज बार्हस्पत्य	दीर्घतमा मामतेय	दीर्घतमा माम- तेय भरद्वाज, बलिवैरोचन अंग, वग, कलिंग पुत्रगण
१२.	भरद्वाज =सनद्वाज	वेद पुराण अष्टांग आयुर्वेद यन्त्रसर्वस्व	१००६० वि०पू० से ९७०० वि०पू० पर्यन्त	वर्षी = (वशपुत्र)— सुचक्षु = सुरक्ष	सुचक्षु	सुतेजा = शततेजा नारायण = नर दम्भोद्भव
१३.	अन्तरिक्ष	वेद, पुराण	९७०० वि०पू० से ९३४० वि०पू० पर्यन्त	सुधामा काश्यप वासिष्ठ, विरजा बालधि मुनि	नारायण ऋषि	मतिनार सरस्वती कण्व, मेधातिथि मरुत्त कारन्धम
१४.	सुचक्षु (सुरक्ष)	वेद, पुराण	९३४० वि०पू० से ८९८० वि०पू० पर्यन्त	आत्रेय, श्रावतादि त्र्ययारुण	मरुत्त कारन्धम संवर्त आंगिरस	गौतम वामदेव आत्रेय, श्यावरण सुविष्टक, आंग- बृहद्रथ युवनाश्व, गौरी शशबिन्दु
१५.	त्र्ययारुण	वेद, पुराण	८९८० वि०पू० से ८६२० वि०पू० पर्यन्त	कुणि कुणिबाहु धनंजय	मान्धाता यौवनाश्व	वेदशिरा, मार्कण्डेय मरुत्त, असित धान्व, गय गान्धार = अंगार

क्र. सं.	व्यास	कृतित्व	युगावधि	शिष्यगण	युगप्रवर्तक	प्रमुख ऋषि राजर्षि
१६.	धनंजय	वेद, पुराण	८६२० वि०पू० से ८२६० वि०पू० पर्यन्त	गोकर्ण, योगीश्वर कृतंजय	त्रसदस्यु ऐक्ष्वाक	पुरुकुत्स, त्रसदायु काण्व सौपरि, मेधातिथि, विश्वामित्र, दिवोदास, वामदेव गौतम
१७.	कृतंजय	वेद, पुराण	८२६० वि०पू० से ७९०० वि०पू० पर्यन्त	ऋतंजय	भरत दौष्यन्ति	वामदेव गौतम वितथि भारद्वाज वसुमान्, प्रतर्दन, शिवि, अष्टक, गालव
१८.	ऋतंजय	वेद, पुराण	७९०० वि०पू० से ७६४० वि०पू० पर्यन्त	तृणंजय	कार्तवीर्य अर्जुन	सुहोत्रभारत, अजमीढ़, पुरुमीढ़ शिव, संकृति, गर्ग, शिवि ऊरुक्षय, नर
१९.	तृणंजय	वेद, पुराण	७६४० वि०पू० से ७२८० वि०पू० पर्यन्त	गौतम	परशुराम भार्गव	जमदग्नि, विश्वामित्र, वसुमान्, वासिष्ठ, हरिश्चन्द्र अष्टक
२.	भारद्वाज	वेद, पुराण	७२८० वि०पू० से ६९२० वि०पू० पर्यन्त	वामदेव, बृहदुक्थ वामदेव्य	सगर ऐक्ष्वाक	अरिष्टनेमि काश्यप और्व भार्गव, विदर्भराज आण्व वासिष्ठ
२१.	वाचस्पति	वेद, पुराण	६९२० वि०पू० से ६४६० वि०पू० पर्यन्त	प्लक्ष दाक्षायाणि, शक्ति वासिष्ठ	भगीरथ	अम्बरीष, सिन्धु- ऋतुपर्ण, नल अलीकयुवनाश्व, जातूकर्ण्य
२२.	शक्ति वासिष्ठ	वेद, पुराण	६४६० वि०पू० से ५८४० वि०पू० पर्यन्त	पराशर वासिष्ठ गुरुवीति अध्रीगु	सुदास पैजवन ऐक्ष्वाक	कल्माषपाद सौदास, पराशर गौरशिरा, गुरुवीति

क्र. सं.	व्यास	कृतित्व	युगावधि	शिष्यगण	युगप्रवर्तक	प्रमुख ऋषि राजर्षि
२३.	शुक्रायन =निर्यन्तर	शुक्लयजु-वेद, पुराण	५८४० वि०पू० से ५४८० वि०पू० पर्यन्त	तृणबिन्दु बृहदुक्थ वामदेव्य	तृणबिन्दु	पुलस्त्य, विश्रवा देवल
२४.	तृणबिन्दु	वेद, पुराण	५४८० वि०पू० से ५१२० वि०पू० पर्यन्त	वाल्मीकि ऋक्ष	कुबेर वैश्रवण	पुलस्त्य विश्रवा
२५.	वाल्मीकि =ऋक्ष भार्गव	वेद, रामायण आयुर्वेदादि धनुर्वेद	५१२० वि०पू० से ४७६० वि०पू० पर्यन्त	शालिहोत्र, अग्निवेश (चरक), युवनाश्व शरद्वान्	दाशरथि-राम	वसिष्ठ, कौशिक भारद्वाज, वाल्मीकि रावण आदि
२६.	वाजश्रवा गौतम	वेद, पुराण	४७६० वि०पू० से ४४०० वि०पू० पर्यन्त	सोमशुष्मा-यण	कुरु	नचिकेता, श्रुत, वह्नि काश्यप, परिक्षित्, चित्ररथ
२७.	सोमशुष्म =सोम-शुष्मायन	वेद, पुराण	४४०० वि०पू० से ४०४० वि०पू० पर्यन्त	द्वीपपाराशर	जनमेजय, द्वितीय	तुरः कावषेय दन्ताबल धौम्य उच्चैःश्रवा, कौक्येय इन्द्रोतदैवाय, शौनक, गार्ग्य
२८.	द्वीप= पाराशर्य	वेद, पाराशर्य	४०४० वि०पू० से ३६८० वि०पू० पर्यन्त	जातूकर्ण्य उलूक आदि बकदाल्भ्य	हिरण्यनाभ कौसल्य	परकौसल्य, बकदाल्भ्य (मैत्रेय)
२९.	जातूकर्ण्य	वेद	३६८० वि०पू०से ३३२० वि०पू० पर्यन्त	उलूक अक्षपाद, अक्षपाद, वत्स कणाद	प्रतीप कौरव	प्रतीप, देवापि, शन्तनु, मरु, सोमशर्मा भीष्म आदि
३०.	कृष्ण-द्वैपायन पाराशर्य	चतुर्वेद, पुराण, महाभारत, आदि	३३२० वि०पू० से २९६० वि०पू० पर्यन्त	शुक्र, वैशम्पायन पैल सुमन्तु जैमिनि	वासुदेवकृष्ण	युधिष्ठिर आदि पाण्डव, वैशम्पायन, पैल, जैमिनि, सुमन्तु याज्ञवल्क्य, उद्दालक, श्वेतकेतु